# "भारत के आर्थिक विकास में ग्राम्य - विकास योजनाओं का योगदान"

(जनपद झाँसी के विशेष सन्दर्भ में)

बुन्देलखण्ड विश्व-विद्यालय की
पी.एच-डी. (अर्थशास्त्र) की उपाधि हेतु प्रस्तुत

## शोध - प्रबन्ध

2005
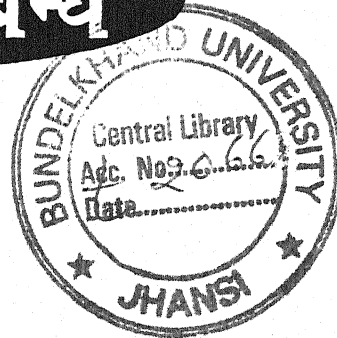
निर्देशिका :-

**डॉ० (श्रीमती) मंजूषा श्रीवास्तव**

रीडर (अर्थशास्त्र विभाग)
श्री अग्रसेन कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
मऊरानीपुर (झाँसी) उ०प्र०

शोध छात्र :-

**प्रणव त्रिपाठी**

## अर्थशास्त्र विभाग
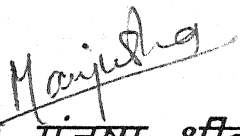
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

# प्रमाण - पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रणव त्रिपाठी मेरे निर्देशन में बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी द्वारा अर्थशास्त्र विषय में पी.एच-डी. उपाधि हेतु ***"भारत के आर्थिक विकास में ग्राम्य विकास योजनाओं का योगदान" (जनपद झाँसी के विशेष सन्दर्भ में)*** नामक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत कर रहे हैं। यह शोध प्रबन्ध प्रणव त्रिपाठी का अपना मौलिक प्रयास है, एवं इन्होंने विश्वविद्यालय के नियमों के अनुरूप उपस्थित रहकर यह शोध कार्य पूर्ण किया है।

दिनांक – 09/08/05

Manjusha

*डॉ0 (श्रीमती) मंजूषा श्रीवास्तव*

शोध निर्देशिका

रीडर (अर्थशास्त्र विभाग)

श्री अग्रसेन कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय

मऊरानीपुर (झाँसी) उ0प्र0

# प्राक्कथन

प्राचीन काल में आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर और सामाजिक रूप से संगठित गांवो की महिमा को देख सुनकर ही दुनिया ने कहा था – ***"भारत सोने की चिड़िया है"*** ***"भारत में दूध की नदियाँ बहती हैं।"*** समय के बदलाव ने ग्रामों की आर्थिक आत्म-निर्भरता पर गहरे प्रहार किये। अंग्रेजी शासन की शोषणवादी नीतियों और राजनीतिक कुचक्र के शिकार भारत के गांव ही सबसे अधिक हुये। अंग्रेजी हुकूमत में भारत के किसान निर्धन और दुर्दशा ग्रस्त हो गये थे।

स्वतंत्रता-संघर्ष काल में महात्मा गांधी जी ने इस मर्म को गहरी सम्वेदना के साथ आत्मसात किया । जन साधारण की चेतना जगाते हुये उन्होंने कहा था ***"आज शहरों को बोलबाला है, और वे गांवो की सारी दौलत खींच रहे हैं, इससे गांवो का ह्रास और नाश हो रहा है। गांवो का शोषण खुद एक संगठित हिंसा है, यदि हमें स्वराज की रचना अहिंसा के पाये पर करनी है तो गांवो को उसका उचित स्थान देना होगा, मैं कहूंगा कि अगर गांव का नाश होता है तो भारत का भी नाश हो जायेगा। "***

स्पष्ट है स्वतंत्रता-संघर्ष काल में ही भारत की राजनैतिक चेतना प्राथमिक रूप से गांव की ओर अधिक ध्यान देने लगी थी। स्वदेशी आन्दोलन और ग्राम स्वराज के पीछे यही चेतना काम कर रहीं थी। सर्वोदय और पंचायती राज के पीछे भी यही अवधारणा निहित थी कि भारत की अधिकांश जनता गांव में निवास करती है। कोई सरकारी और गैर सरकारी विकास कार्यक्रम तब तक सफल नही हो सकता जब तक वह गांव में व्यापत गरीबी को दूर करने में सहयोगी न हो। इसी अवधारणा ने स्वतंत्र भारत की हर सरकार

को प्रेरित व प्रभावित किया।

स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने 7 मई 1952 को सामुदायिक योजना सम्मेलन में कहा था कि *"हम चाहते हैं कि सारे भारत के लोग बनाने वाले या निर्माणकर्ता बने, मेरे लिये यह सामुदायिक योजनायें बहुत महत्व रखती हैं। सिर्फ इनसे होने वाले भौतिक फायदें की बजह से नहीं, बल्कि बहुत कुछ इस बजह से कि इनका उद्देश्य "इन्सान और सामुदाय का निर्माण करना है। और इन्सान को इस लायक बनाना है कि वह अपने गांव एवं व्यापक अर्थ में समूचे भारत का निर्माण कर सके।"*

कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रारम्भ से ही शासन तंत्र ने भारत के आर्थिक विकास के लिये ग्रामीण विकास की योजनाओं पर अधिक ध्यान दिया हैं।शुरूआती दौर में जो योजनाये बनी उनके द्वारा ग्राम विकास हेतु आधार भूत ढांचे का निर्माण करने की ओर ध्यान दिया गया। फिर क्रमशः रोजगार के अवसर बढ़ाने और सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से निम्न स्तर के व्यक्तियों को योजनाओं का लाभ कैसे मिले इस पर ध्यान दिया गया । ग्राम विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में जन सहभागिता बढ़ाने के उद्देश्य से पंचायती राज के ढांचे को सुदृढ़ बनाने पर बल दिया गया। भारत के आर्थिक विकास के लिये गांव को न केवल प्रथम इकाई माना गया अपितु सबसे महत्वपूर्ण इकाई भी माना गया।

इसी पृष्ठ भूमि से प्रोत्साहित होकर ***"भारत के आर्थिक विकास में ग्राम्य विकास योजनाओं का योगदान"*** शोध शीर्षक मेरे मस्तिष्क में उभरा। इस विषय पर शोध करने के मेरे निश्चय को मेरे शिक्षक गणों ने और अधिक सुदृढ़ किया।

पिछले पांच दशकों में भारत सरकार और राज्य सरकार ने नाना नामों और अनेक रूपों में ग्राम विकास योजनायें प्रारम्भ की हैं। भारत के आर्थिक विकास में इन तमाम विकास योजनाओं के योगदान का व्यवस्थित अध्ययन और विवेचना प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का मौलिक अभीष्ट है।

झाँसी जनपद के सन्दर्भ में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की पहुंच, उनके संचालन और सफलता का मूल्याकंन करना इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य है। ग्रामीण विकास परियोजनाओं का मूल्यांकन व्यापक आधार पर होता है किन्तु सूक्ष्म इकाइयों के अध्ययन को उतना महत्व नहीं दिया जाता जबकि सूक्ष्म इकाइयों का योग ही व्यापक या समग्र होता है। सूक्ष्म इकाइयों का गहन अध्ययन ही बड़ी परियोजनाओं का सफल मूल्यांकन कर सकता है। और विकास हेतु परियोजनाओं के निर्माण में दिशा निर्देश भी दे सकता है।

ग्रामीण विकास की आवश्यकता को तीव्रता से अनुभव करते हुये क्षेत्रीय अनुसन्धान के माध्यम से जनपद झाँसी के ग्रामों के सामुदायिक विकास की समस्या की ओर स्थानीय नेताओं, कार्यकत्ताओं, स्वयंसेवी संस्थाओं और नौकरशाहों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास करना मेरा हेतु रहा है। उपरोक्त सन्दर्भ में प्रस्तुत अध्ययन सर्वथा मौलिक और नवीन प्रयास है। साथ ही अध्ययन के उद्देश्यों को पूरा करने के लिये पूर्णतः प्रासंगिक और सामाजिक भी है।

निम्न आठ अध्यायों के सोपानो द्वारा प्रस्तुत शोधप्रबंध अपने लक्ष्य तक पहुंचा है।

✣ शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय के प्रथम भाग में आर्थिक विकास और आर्थिक प्रगति में अन्तर को स्पष्ट किया गया है, अध्याय के दूसरे भाग में प्रमुख विकासवादी अर्थशास्त्रियों के विचारों पर ध्यान दिया गया है, तृतीय भाग में आर्थिक विकास के निर्धारक धटकों का अध्ययन किया गया है।

✣ द्वितीय अध्याय के प्रथम भाग में भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। दूसरे भाग में भारतीय अर्थव्यवस्था को विकासशील अर्थव्यवस्था के रूप में अध्ययन प्रस्तुत किया है। अध्याय के तृतीय भाग प्रो. अमर्त्यसेन के आर्थिक विचार के अध्ययन पर केन्द्रित है।

✣ तृतीय अध्याय के प्रथम भाग में झाँसी जनपद का परिचय तथा द्वितीय भाग में अध्ययन विधि का अध्ययन किया गया है।

✣ शोध प्रबन्ध का चतुर्थ अध्याय ग्रामीण विकास योजनाओं को समर्पित हैं अध्याय के प्रथम भाग में भारत सरकार, राज्य सरकार के विभिन्न विभागों द्वारा संचालित ग्राम्य विकास योजनाओं का परिचय दिया गया है। इसी अध्याय के द्वितीय भाग में वर्तमान में संचालित विभिन्न ग्राम्य विकास योजना का अध्ययन किया गया है। अध्याय के अन्तिम भाग में जनपद झाँसी के आठ विकास खण्डों में संचालित वर्तमान ग्राम्य विकास योजनाओं का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

✣ शोध प्रबन्ध का पंचम अध्याय पंचायती राज और ग्राम्य विकास के अन्तर सम्बन्धों को रेखाकिंत करता है।

✣ षष्ठम अध्याय ग्राम्य विकास योजनाओं से रोजगार के अवसरों की विवेचना पर केन्द्रित है।

✣ सप्तम् अध्याय ग्राम्य विकास योजनाओं द्वारा होने वाले सामाजिक, आर्थिक बदलाओं की परख व विवेचना करता है,

✣ शोध प्रबन्ध का आठवें व अन्तिम अध्याय में ग्राम्य विकास की समस्याओं और उनके समाधान के उपायों का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध को पूर्ण करने में मुझे ग्राम विकास मंत्रालय भारत सरकार के अनेक अधिकारी गणों का महत्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है। प्रदेशीय शासन के पंचायती राज, ग्राम्य विकास विभाग के अनेक महानुभावों ने शोध संबंधी सामग्री एकत्र करने में पर्याप्त सहयोग प्रदान किया है। जनपद झाँसी के ग्राम्य विकास अभिकरण से जुड़े अधिकारियों ने अपेक्षित सूचनाऐं एकत्र करने में उल्लेखनीय सहयोग प्रदान किया है। जनपद झाँसी कें मऊरानीपुर, बंगरा, मोंठ, चिरगांव, बड़ागाँव, बवीना, गुरसरांय तथा बामौर विकास खण्ड के विकास कार्यक्रम से संबन्धित महानुभावों ने जो सहयोग प्रदान किया उसे मैं कभी नहीं भूल सकता हूं। सभी अधिकारीगण एवं सहयोगी महानुभावों का मैं हृदय से आभारी हूं।

शोध निर्देशिका – आदरणीया डॉ० (श्रीमती) मंजूषा श्रीवास्तव जी ने विषयानुरूप शोध कार्य बोध जगाकर मुझ पर असीम कृपा की है। सोच नहीं पा रहा हूँ किन शब्दों में उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करूं। उन्हें भावनापूर्ण नमन् ही अर्पित है।

आदरणीय डॉ० श्री कृष्णकपूर, प्राचार्य श्री अग्रसेन महाविद्यालय, डॉ० चिन्मय चटर्जी अर्थशास्त्र विभागाध्यक्ष, प्रो० सतीश कुमार जी, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा अध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग बुन्देलखण्ड महाविद्यालय झाँसी के आर्शीवाद से शोधकार्य को गतिप्रदान कर सका। धन्यवाद देकर इन सब की आत्मीयता को औपचारिक कैसे बना दूं ?

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली, ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार तथा श्री अग्रसेन महाविद्यालय मऊरानीपुर के पुस्तकालयों से यथायोग सहयोग मिला है। इनसब के प्रबंधक महानुभावों को मैं धन्यवाद देता हूँ।

पूज्यनीया माँ श्रीमती कुसुम त्रिपाठी की ममता और श्रद्धेय पिता जी डॉ० उदय

त्रिपाठी के सतत् आर्शीवाद की ऊर्जा मेरी रग रग में प्रवाहित है। उनके वरदान की गरिमा किसी एक शब्द से प्रकट नहीं हो सकती है। उनके वरदान का ही एक फल – यह शोध प्रबंध है।

प्रणव त्रिपाठी

*प्रणव त्रिपाठी*

शोध छात्र

# अनुक्रमणिका

# अध्याय - प्रथम

# आर्थिक विकास की अवधारणा

- आर्थिक प्रगति और आर्थिक विकास
- आर्थिक विकास के सम्बन्ध में प्रमुख अर्थशास्त्रियों के विचार
- आर्थिक विकास के निर्धारक घटक

# आर्थिक प्रगति और आर्थिक विकास -

सामान्य अवधारणा में आर्थिक प्रगति और आर्थिक विकास को समान अर्थ में ही प्रयुक्त किया जाता है। लेकिन इन शब्दों के अर्थ में कुछ अन्तर है। जीव विज्ञान में प्रगति शब्द का अर्थ वृद्धि तथा विकास का अर्थ परिवर्तन होता है, उदाहरण के लिए जब हम कहते है कि इस पौधे की वृद्धि (Growth) उचित नहीं है तब हमारा तात्पर्य उसकी वृद्धि या बढ़ाव से ही होता है। यदि हम कहते हैं कि उसका विकास (Development) ठीक नहीं है तब हम उसके विभिन्न पहलुओं को दृष्टि में रखकर उसकी उन्नति या परिवर्धन की ओर संकेत करते हैं। इसके अन्तर्गत प्रगति (Growth) भी आ सकती है। इसी प्रकार जब हम जनसंख्या की वृद्धि (Growth) या राष्ट्रीय आय की वृद्धि (Growth) की बात करते हैं तब भी हमारा संकेत वृद्धि से ही होता है। हम कभी भी ''राष्ट्रीय आय'' का विकास या ''जनसंख्या'' का विकास नहीं कहते हैं। औद्योगिक इकाई का विकास अवश्य कहते हैं। अतः स्पष्ट है कि विकास का अर्थ प्रगति से कुछ भिन्न है। विकास से हमारा तात्पर्य किसी इकाई के संस्थागत तथा ढांचागत परिवर्तन से होता है। जीव विज्ञान के आधार पर हम इन दो शब्दों का अन्तर अर्थशास्त्र के अन्तर्गत भी कर सकते हैं।[1]

प्रसिद्ध विचारक प्रोफेसर किण्डलबरगर भी इस अन्तर को मानते हैं। इनके अनुसार आर्थिक प्रगति से तात्पर्य अधिक उत्पादन है जबकि आर्थिक विकास का अर्थ अधिक उत्पादन के साथ साथ तकनीकी तथा संस्थागत परिवर्तन से होता है।[2] प्रोफेसर जे.के. मेहता ने भी इसी प्रकार का अन्तर माना है। प्रगति से तात्पर्य वृद्धि से तथा विकास से तात्पर्य तकनीकी विकास से होता है। उदाहरण के लिए यदि किसी आर्थिक इकाई का उत्पादन 100 से बढ़कर 200 हो गया है तब वह प्रगति है। यदि तकनीकी परिवर्तन होते है जैसे श्रम प्रधान की जगह पूंजी प्रधान तकनीकी अपनाई जाये या पूंजी प्रधान तकनीकी में ही उन्नत विधि अपनाई जाये जिसमें न्यूनतम साधन (Input) से अधिकतम उत्पादन हो सके उसे विकास कहते हैं। *इस प्रकार प्रगति वृद्धि का द्योतक हैं तथा विकास ढांचागत परिवर्तन का।*

प्रगति तथा विकास के आर्थिक सन्दर्भ में एक बात और महत्वपूर्ण है। आर्थिक विकास के संदर्भ में प्रगति तथा विकास एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। यहां तक कि एक के बिना दूसरे का औचित्य सिद्ध नहीं किया जाता सकता है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है। कोई भी वृद्धि अपने मे महत्वपूर्ण नहीं है, जब तक कि इसके साथ ढांचागत परिवर्तन न हो। यानि हम

---

1. आर्थिक विकासः जी.एस. कुशवाहा : लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृष्ठ 1
2. Economic growth means more output and economic development implies both more output and changes in the technical and institutional arrangement by which it is produced charles P kindleberger : Economic development 2nd edition Mc Graw Hill Book company 1965 P.!

1000 इकाई के स्थान पर इस्पात की 2000 इकाई उत्पादित कर लेते हैं तो इसका महत्व उसी स्थिति में होगा जब उद्योग में ढांचागत परिवर्तन हो अन्यथा वही उत्पादन वृद्धि बनाये रखने में कठिनाई होगी। इसलिए दोनो परिवर्तन साथ होने चाहिए। ऐसे ढांचागत परिवर्तन जिनसे उत्पादन में वृद्धि न हो सके (या लागत में कमी न हो) व्यर्थ हैं, *क्योंकि तकनीकी परिवर्तन के औचित्य की यही कसौटी होगी कि आर्थिक प्रगति तथा आर्थिक विकास साथ साथ चलते हैं। प्रगति के बिना विकास और विकास के बिना प्रगति का औचित्य प्रकट करना कठिन है। दोनो एक दूसरे के पूरक हैं।* किसी देश का आर्थिक विकास तभी सम्भव है जब सभी क्षेत्रों की उत्पादकता बढ़ाई जावे तथा जीवन स्तर में अनुकूल सुधार हो। प्रो0 मायर एवं बाल्डविन ने आर्थिक विकास के लिए देश की आर्थिक क्रियाओं को ही उत्तरदायी ठहराया है। किसी देश की आर्थिक प्रगति बाजार की अपूर्णता तथा विदेशी बाजार के प्रभाव को बिना कम किये सम्भव नहीं हो पाती। आर्थिक विकास की सम्भावनाऐं न केवल आर्थिक साधनों पर प्रकाश डालती है, वरन देश को प्रतिकूल अवस्थाओं से भी मुक्त करने का बोध कराती है। वे प्रतिकूल अवस्थाऐं रूढ़िवादी प्रवृत्तियों के प्रचलन एवं उपभोग में वृद्धि न होने से उत्पन्न हो जाती है। आर्थिक विकास विभिन्न तत्वों के प्रभाव से विभिन्न गति से होता है और इसका प्रभाव दीर्घकालीन होता है। *यदि किसी समय कुछ अस्थायी कारणों से आर्थिक सुधार हो जाये तो उसे हम आर्थिक विकास नहीं कह सकते। वह केवल आर्थिक विकास में सहायक हो सकता है। आर्थिक विकास की गति अल्पकालीन परिवर्तनों से नहीं ऑकी जा सकती। काफी समय तक बहुमुखी आर्थिक प्रगति होने पर ही विकास पर स्थायी प्रभाव पड़ता है। ये प्रभाव देश की राष्ट्रीय आय पर स्थायी वन जाते हैं। इनके द्वारा वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन बढ़ने लगता है और मूल्य स्तर पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।*

पूंजी संचय, नवीन उत्पादन पद्धति, अतिरिक्त साधन, जनसंख्या का आकार तथा उपभोग प्रवृत्तियां संसाधन में वृद्धि करती हैं। अतः आर्थिक वृद्धि इन सभी साधनों द्वारा मनुष्यों के उपयोग के लिये अतिरिक्त उत्पादन व सेवाओं से होती है। परन्तु यह आवश्यक नहीं कि इन साधनों के प्रयोग और समन्वय से निरन्तर वृद्धि होती ही रहे और कुल वास्तविक आय बढ़ती जाये। परिस्थितियों में परिवर्ततन होने से आर्थिक प्रगति अधोगामी भी हो सकती है। जब आय वृद्धि की अपेक्षा जनसंख्या बढ़ने से उपभोग में अधिक वृद्धि हो जाये व जनसंख्या की वृद्धि अथवा उपभोग में वृद्धि आय की वृद्धि के बराबर हो जाने पर यह वृद्धि स्थिर भी हो जाती है। आर्थिक विकास में ये सभी अवस्थाऐं आती हैं, परन्तु उनका कुल दीर्घकालीन प्रभाव धनात्मक ही होता है।

*आर्थिक विकास के मापदण्ड के बारे में अर्थशास्त्रियों के अलग अलग मत है। कुछ अर्थशास्त्री देश की अर्थव्यवस्था में हुए औद्योगीकरण की गति को ही आर्थिक विकास का सूचक मानते हैं। उनके अनुसार औद्योगीकरण द्वारा वस्तुओं का निर्माण अधिक होता है, जिससे पूंजी निर्माण में वृद्धि होती है। कुछ विद्वान उन्नति के साधनों की उत्पादकता में हुई वृद्धि को आर्थिक विकास मानते हैं। उनके अनुसार आर्थिक विकास की गति कुल उत्पादन के साधनों का समन्वय है।* अर्थात $F = O/K \times L \times Q$ [1] । इस समीकरण में F विकास गति, O उत्पादन की मात्रा, K देश के प्राकृतिक साधन, L कुल श्रम शक्ति और Q उद्यमी का योगदान है। परन्तु यह तभी सम्भव है, जब देश में पूर्ण रोजगार की स्थिति निर्मित रहे। किसी देश की राष्ट्रीय आय में वृद्धि उस देश में हुए पूंजी निर्माण की गति तथा पूंजी का उत्पादन से प्रति इकाई अनुपात द्वारा ज्ञात हो जाती है। प्रत्येक देश चाहता है कि उसमें रहने वालों की आय अधिक हो और उनके जीवन की सभी आवश्यकताएं पूरी हो सके। आधुनिक राज्यों के कल्याणकारी उद्देश्यों के अनुरूप प्रत्येक देश अपने नागरिकों को आर्थिक उत्पादन और उपभोग में समान अवसर देना चाहता है, ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार देश की आर्थिक क्रियाओं में अधिक से अधिक योगदान देकर उसे समृद्धिशाली बना सके। देश की आर्थिक प्रगति के लिये यह आवश्यक है कि सामान्य जनता में आर्थिक उन्नति करने की भावना प्रबल हो और वे अपनी लगन से आय की मात्रा बढ़ाने में निरन्तर प्रयत्न करते रहे।

मानव की स्थिति और नियति के बारे में आजकल जो बहस हो रही है, उसमें आधुनिकीकरण और विकास दो बीज शब्द बन गये हैं। विभिन्न बौद्धिक इतिहास होने पर भी लक्ष्यों को पुर्नपरिभाषित करने और वैचारिक पृष्ठभूमि तथा अध्ययन विधि दोनो ही दृष्टियों से एक दूसरे से अधिक मेल खाने के कारण अब ये वास्तविक अर्थ में एक दूसरे से अधिक निकट भी आ गये हैं । दोनो की तीन सन्दर्भ बिन्दुओं में साझेदारी हैं। *प्रथम ये समाज की स्थिति की ओर इंगित करते हैं । आधुनिकीकरण को मनाने वाले विचारक परम्परागत संक्रमणांकालिक तथा आधुनिकीकृत समाजों में भेद करते हैं। दूसरी ओर विकास की अवधारणा माननेवाले विचारक अविकसित, विकासशील और विकसित समाजों की चर्चा करते हैं। दूसरे दोनो ही ऐसे लक्ष्यों की रेखांकित करते हैं जो आधुनिकीकरण या विकास के आदर्श कार्यक्रमों की एक रूपरेखा सामने रखते हैं। तीसरी, दोनो ही अवधारणाऐं एक प्रक्रिया की ओर संकेत करती हैं। परम्परा से आधुनिकता की ओर या अविकसित स्थिति से विकास की दिशा में आगे बढ़ना।* [2]

आधुनिकीकरण और विकास के प्रतिरूप में उस आत्मविश्वास की महत्वकांक्षा अब नहीं रही जो आज से तीन दशक पहले थी। परिणामों के विश्लेषण और नये देशज चिन्तन से कई महत्वपूर्ण सन्देह और प्रश्न उभरे हैं, जिन्होंने नयी समझ को जन्म दिया है और एक नये वैकल्पिक

---

1. आर्थिक विकास के सिद्धान्त– डॉ0 अवध बिहारी मिश्र म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी–पृष्ठ 34
2. विकास का समाज शास्त्र– श्यामाचरण दुबे– पृष्ठ 25

प्रतिरूप के उदभव की दिशा में हमे आगे ले गये हैं। वांछित मॉडल की रूपरेखा अपने व्यापक रूप में तो स्पष्ट है, परन्तु उसे क्रियान्वित करने के उपायों के बारे में अभी भी आम सहमति नहीं है।

**वैकल्पिक प्रारूप** :– ऐसा प्रतीत हो रहा है कि नये प्रतिरूप के बारे में सहमति उभर रही है। उसके मुख्य अंग है :

1. आर्थिक वृद्धि आवश्यक तो है, पर मात्र यही विकास नहीं है। इसे सुपरिभाषित मानवीय, सामाजिक और सांस्कृतिक लक्ष्यों से जोड़ना होगा, आर्थिक वृद्धि को मानव विकास के एक उपाय के रूप में स्वीकार करना होगा। *विकास के लिये व्यापक जन समुदाय की आधारभूत आवश्यकताओं को पहले पूरा करना होगा, बाद में उनके जीवन की गुणवत्ता को समृद्ध करना होगा।*

2. आर्थिक वृद्धि को केवल सकल राष्ट्रीय उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोत्तरी के रूप में ही अब परिभाषित नहीं किया जा सकता। दोनो ही आवश्यक हैं परन्तु लक्ष्योन्मुखता के अभाव में वे विकास के लक्ष्यों को विफल कर सकते हैं। वृद्धि से होने वाले लाभों का एक बड़ा हिस्सा प्रायः निश्चित रूप से समाज के ऊपरी तबके के लिए सुरक्षित हो जाता है और व्यापक जनसमुदाय अपनी दरिद्रावस्था में ही पूर्ववत् बना रहता है। विकासशील के देशों ने विकास का जो मार्ग अपनाया है वह अंधी गली सिद्ध हुआ है। जनता और समाज दोनो को केन्द्र में होना चाहिए। इसका तात्पर्य है, उत्पादों और सेवाओं का अधिक समानतापूर्वक वितरण। अनुभव बताता है कि ऐसा करने से वृद्धि में तीव्रता आयेगी। *अतः जनता में मूल निवेश के साथ साथ वितरणात्मक न्याय भी आवश्यक है। इस निवेश से केवल व्यक्ति की ही उन्नति न हो, बल्कि समाज की अपनी समस्याओं को समझने और उनके कारगर उपाय खोज निकालने की समाज की क्षमता को व्यापक और तीक्ष्ण बनाना चाहिए।*

3. लक्ष्यों को पाने के लिए आधारभूत संरचनात्मक परिवर्तन जरूरी है। इस लक्ष्य पर अनेक बार बल दिया गया है और उसे दुहराया गया है, अधिकांश विकासशील देशों में संरचानात्मक परिवर्तन के प्रयास बड़े ही क्षींण रहे हैं और परिस्थितियों के तकाजों की तुलना में बौने साबित हुए हैं। व्यक्तित्व व्यवस्था मूल्य अभिवृत्ति की व्यवस्था तथा सामाजिक व्यवस्था में बदलाव की दिशा को काफी परिशुद्धता के साथ रेखांकित किया गया है, परन्तु विभिन्न समाज इन परिस्थितियों को पाने के लिए किस तरह आगे बढ़े, यह स्पष्ट नहीं है। *शिक्षा, जनसंचार, और नागरीकरण सहायता पहुंचाते हैं पर थोड़ी ही दूर तक। आर्थिक अवसर की संरचना को उन्मुक्त करना होगा। और इतिहास में हुए अन्यायों को कल्पनाशील प्रयासों द्वारा दूर करना होगा। यह उत्पादन के सम्बन्धों में महत्वपूर्ण परिवर्तन, सचेत सकारात्मक तरफदारी की नीति और आम जनता को अपनी सामर्थ्य सम्भावनाओं के बारे में सजग किये बिना सम्भव नहीं है।*

4. पिछले तीन दशकों में विकास की दिशा में किये गये प्रयास ज्यादातर अनुकरणमूलक रहे हैं और इसलिए अनेक स्थानों पर गलत दिशा में उन्मुख रहे हैं। इतिहास और परम्परा को दिखावें के तौर पर कुछ महत्व दिया गया है। परन्तु अधिकांशतः देशज सृजनात्मकता को प्रतिबंधित रखा गया है। *एक छोटे अभिजात वर्ग प्रायः पाश्चात्य दृष्टिकोण वाले ने वर्तमान और भविष्य के बारे में प्रमुख निर्णय लिया, सामान्य जनता की उसमें कुछ भी भूमिका नहीं रही। समाज की संस्थागत संरचना उन्हें अपने भाग्य के निर्माण में बहुत थोड़ी सी छूट देती है। तीसरी दुनिया के अनेक देश तानाशाही और दमनात्मक शासन में चल रहे हैं। कुछ में प्रजातन्त्र का आडम्बर है। जहां प्रजातन्त्र राजनीतिक अर्थ में जीवित है, वहां जनता की इच्छा अभिजात वर्ग वाले राजनीतिक दल से बंधी होती है और उसकी विचार-धाराओं में थोड़ा बहुत ही अन्तर होता है। देशज विकास के लिए एक नयी संस्थागत रूप रेखा, जिसमें जनता और उसके साहचर्यो को अधिक निर्णायक भूमिका मिल सके अपनाना, आवश्यक होगा।*

5. विकास की प्रक्रिया को सही अर्थो में सहभागी बनाने वाले प्रयास के विषय में सोचना आवश्यक है। यह तभी सम्भव होगा जब आम आदमी की सही अर्थो में न कि नाममात्र की सत्ता और संसाधनों तक पहुंच हों। वह प्रजातन्त्र जहां केवल समय समय पर चुनाव होते रहते हैं, सही अर्थो में सहभागी प्रजातंत्र नहीं। लोगो के द्वारा पहल करने की इच्छा को खंडित नहीं करना चाहिए और जनजागरण का अर्थ अभिजात वर्ग द्वारा प्रतिपादित सत्ता के केन्द्रों द्वारा लिये निर्णयों का आम जनता द्वारा पालन नहीं माना जाना चाहिए। *दूसरे शब्दों में लोगों की अपने बारे में वर्तमान और भविष्य के बारे में ही निर्णय लेने के अतिरिक्त विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वियन में भी प्रमुख भूमिका होनी चाहिए।*

6. व्यापक स्तर पर विकास की प्रक्रिया पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलत नहीं रही है। इसका बड़ा घातक प्रभाव पड़ा है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि बहुत सी सभ्यताऐं इसलिए समाप्त हो गयी कि उन्होंने पर्यावरण का एक सीमा से अधिक दोहन किया। विलम्ब से ही सही पश्चिमी जगत ने इस समस्या को संवेदनशीलता के साथ हल करने में जागरूकता दिखाई है। तीसरी अधि-कांश विकासशील देशों में एक गलत धारणा यह फैली हुई है कि उद्योगीकरण की निम्न मात्रा के कारण वे पर्यावरण के प्रमुख खतरों से बचे हुए हैं। यह सच नहीं है। *पर्यावरण की चेतना विकासशील देशों में भी बढ़ानी है जिससे कि वे अपने पर्यावरण के संरक्षण और अभिवृद्धि के लिए समय पर कदम उठा सके। पर्यावरणविदों की भयानक परिणमोवली चेतावनियों को मात्र एक फैशन नहीं मानना चाहिए।*

7. विकास और नियोजन में एक बहुत बड़ी कमी इस प्रक्रिया को धारण करने की क्षमता का अभाव है। वे उसकी निरन्तरता को बनाए रख सकने में समर्थ नहीं है। अधिकांश विकास शील

देश चेतन या अचेतन रूप से अपने संसाधनों और सीमाओं के बारे में बिना सोचे हुए पश्चिम का अनुकरण कर रहे हैं। यह सिद्ध है कि समृद्ध देश भी ऐसे बिन्दु पर पहुंच गये हैं जहां विकास, कम से कम कुछ अर्थो में धारणयोग्य नहीं रह गया है, और उसके भयंकर त्रासद परिणाम हो रहे हैं। मुद्रास्फीति बेरोजगारी मंदी तथा पर्यावरण के खतरे आदि इसके प्रभाव हैं।

8. जहां सापेक्षिक आत्मनिर्भरता आदर्श है वहीं व्यापक परस्पर निर्भरता की उपेक्षा नहीं की जा सकती। विकसित देश अपने महत्वपूर्ण संसाधनों के लिए, जो उनके विकास को सम्भव बनाने और उसे आगे बढ़ाने में योगदान दे रहे हैं, विकासशील देशों पर निर्भर होते हैं। पर परस्पर निर्भरता केवल कच्चे माल और अंशतः संसाधित सामग्री तक ही सीमित नहीं हैं बौद्धिक क्षमता और प्रशिक्षित योग्यता के क्षेत्र में काफी हद तक पायी जाती है। इस प्रसंग में यहां सबसे दुःखद बात यह है कि परस्पर निर्भरता गैरबराबरी की दिशा में हो रही है। विकासशील देशों के संसाधन और उनकी बौद्धिक एवं तकनीकी क्षमताऐं विकसित देश सस्ते दामों पर खरीदते हैं। प्रस्तावित नयी अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता इसीलिए है। इस नयी व्यवस्था के मुख्य और सूक्ष्म तत्व विवेचित होने हैं और उनके क्रम और चरणों पर सहमति उभरनी है। तीसरी *विकासशील के देशों को अपनी समस्याओं के समाधान के लिए योग्यता और संसाधनों को एकत्र करना चाहिए। सहयोग और परस्पर निर्भरता कई स्तरों पर देखी जानी चाहिए जिसमें उपक्षेत्रीय और क्षेत्रीय तथा समस्त तीसरी दुनिया को सम्मिलित करना चाहिए। ये संरूप राष्ट्रीय स्वाभिमान आत्मगौरव तथा आवश्यकताओं और आर्थिक तर्क के अनुरूप होने चाहिए। साथ ही व्यापक सहयोग और परस्पर निर्भरता के स्वरूप को भी निरूपति करना होगा। सम्यक् स्वहित जो जीवन रक्षा और प्रगति से संचलित हो, सम्भवतः समानता को जन्म दे सकता है।*

9. विकासशील देशों के नियोजन और विकास का एक दूसरा पहलू वर्तमान के प्रति अत्यधिक झुकाव तथा भविष्य के लिये नियोजन की कमी है। यह सही है कि वर्तमान की आवश्यकताऐं अनेक व जटिल हैं परन्तु भविष्य की उपेक्षा करना खतरनाक होगा। *केवल उपयोगितावाली दृष्टि को अपनाकर उन मुद्दो और समस्याओं को भुलाया नहीं जा सकता जो भविष्य में भयावह रूप ले सकती है। विकास की प्रक्रिया में भविष्य उन्मुखता को स्थान देना अनिवार्य है।*

विकास के एक नये प्रारूप को जिसमें ऊपर चर्चित सभी अवयम विद्यमान हों गहराई से महसूस किया जा रहा है और असंदिग्ध रूप से निरूपित किया गया है। विकास की कार्यवाही इस नयी विचारधारा का बहुत कम प्रभाव दिखलाती है। नियोजन अभी भी अभिजात वर्ग का

पक्षधर बना हुआ है । एक छोटा सा वर्ग यह निश्चित करता है कि समाज के लिए क्या ठीक है और इस प्रक्रिया में यह अपने वर्ग में निहित स्वार्थ की सिद्धि का यत्न करता है। गरीबी एक प्रमुख समस्या मानी गयी है परन्तु ऐसा मानना आडम्बर मात्र रह गया है। *आम जनता के नाम पर बात करना आज का फैशन हो गया है, जबकि वास्तव में विकास की कुछ जूठन और कुछ टुकड़े ही सामान्य जनता को मिल पाते हैं।* सार्थक और दूरगामी परिणाम वाले संरचनात्मक सुधार को पूरा करने के लिये बहुत सारे तथा कथित सुधार निरर्थक सिद्ध हुए हैं और उनकी जटिलताऐं और कमियों इतनी अधिक और विविध प्रकार की है कि बहुसंख्यक वर्ग उनसे बहुत कम मात्रा में ही लाभ पाता है। विकास की प्रक्रिया का बहुत बड़ा भाग अपने जनप्रिय मुखौटे के बावजूद उस छोटे से सुविधा प्राप्त अल्पसंख्यक वर्ग के पक्ष में ही बना रहता है जो सत्ता पर अपना नियन्त्रण बनाये हुए हैं। नियोजन के लक्ष्य और प्रक्रियाऐं अधिकांशतः अनुकरण मूलक है। बाहर से आयातित हैं, इसलिए दिग्भ्रमित हैं। ये सहभागी नहीं पर्यावरण के प्रति अत्यन्त कम संवेदनशील हैं और अधिकांशतः धारणयोग्य नहीं हैं। अपेक्षित राजनीतिक इच्छा के अभाव में और अधोगामी अन्तर्राष्ट्रीय माहौल और दबाव के कारण आत्मनिर्भरता का आदर्श वास्तविकता में केवल चर्चा का भाग ही बना रहता है और निर्भरता निरन्तर बनी रहती है। नयी विचारधारा और सक्रिय कार्यान्वयन के बीच बहुत बड़ी खाई है। इसे पाटकर ही आर्थिक विकास लक्ष्योन्मुखी हो सकेगा।[1]

यह भी उल्लेखनीय है कि विकास और आधुनिकीकरण के लिये आर्थिक वृद्धि ही पर्याप्त नहीं है। सांस्कृतिक अस्मिता की अवहेलना तीव्र प्रतिक्रियाओं को जन्म देती है। विकास की प्रक्रिया परम्परा की ऊर्जा से लाभान्वित नहीं हो पातीं इसलिये युनाइटेड नेशन्स के तत्त्वावधान में विकास और संस्कृति के अन्तरावलम्बन पर गम्भीर विचार हो रहा है। मार्च 1995 में कोपनहेगन में हुए विश्व सामाजिक शिखर सम्मेलन में गरीबी उन्मूलन और बेरोजगारी जैसे आर्थिक प्रश्नों के साथ सामाजिक एकीकरण का विराट सांस्कृतिक मुद्दा भी चर्चा के केन्द्र में था। आर्थिक विकास के साथ सामाजिक विकास के बारे में सोचना आवश्यक है। कार्य योजना के सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक और नैतिक आयाम भी महत्वपूर्ण होते हैं। उसके परिणामों का आकलन और मूल्यांकन भी आवश्यक होता है।

---

1. विकास का समाजशास्त्र – श्यामाचरण दुबे – पृष्ठ – 104 ।

# आर्थिक विकास के सम्बन्ध में प्रमुख विकासवादी अर्थशास्त्रियों के विचार -

किसी भी अर्थ व्यवस्था के आर्थिक विकास की स्थिति का अध्ययन करने के लिए प्रमुख अर्थशास्त्रियों के विचारों को जानना समझना नितान्त आवश्यक हैं इसी दृष्टि से प्रस्तुत अध्ययन की उपयोगितानुसार महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय विचारकों के विचार यहाँ प्रस्तुत करता हूँ।

## रोस्टोव की विकास अवस्थाऐं:-

प्रसिद्ध विकासवादी अर्थशास्त्री डब्ल्यू. डब्ल्यू. रोस्टोव की पहुंच अधिक वैज्ञानिक ही नहीं अपितु वे विकास की विभिन्न स्थितियों की तर्कसंगत व्याख्या करने में सफल हुए हैं। विकास के क्रम में जो परिवर्तन होते हैं, उनको परिवर्तन की दृष्टि से एक दूसरे से अलग किया जा सकता है। वस्तुतः किस प्रकार से कृषि में व्यापारीकरण होता है तथा उद्योगीकरण का प्रारम्भ होता है यह अर्थव्यवस्था का एक अनिवार्य अंग बन जाता है एवं विकास का सतत एवं स्वतः रूप ग्रहण कर लेता है। ये सब स्थितियां एक दूसरे से प्रकट रूप से भिन्न है इन भिन्नताओं के ही आधार पर विकास की विभिन्न स्थितियों की कल्पना कर सकते हैं। रोस्टोव के अनुसार विकास की पाँच अवस्थाऐं हैं।[1]

1. पारम्परिक समाज (Traditional Society)
2. स्वचलित उड़ान की पूर्व शर्ते (Pre conditions of take off)
3. स्वचलित उड़ान की अवस्था (The take off)
4. परिपक्वता की ओर चलन (Drive to maturity)
5. उच्च सामूहिक उपभोग की अवस्था (The age of high Mass consumption)

परम्परावादी अर्थव्यवस्था में कृषि प्रधान व्यवसाय होता है। उद्योग प्रायः पिछड़े हुए होते हैं। सम्पूर्ण आर्थिक ढांचा कमजोर होता है। पूर्व गतिशील अवस्था में जनता के विचारों में परिवर्तन आ जाते हैं। उद्योगों की उन्नति की ओर नागरिक जागरूक हो जाते हैं कृषि का भी मशीनीकरण तथा नवीनीकरण किया जाने लगता है, यातायात तथा संचार सेवाओं में विकास होने लगता है, सामाजिक ढाँचे में भी परिवर्तन होने लगते हैं। विनियोग की दर राष्ट्रीय आय की लगभग 10 प्रतिशत होने लगती है। खाद्यान्न के उत्पादन में वृद्धि हो जाती है। कच्चे माल का उत्पादन भी बढ़ जाता है। बचत बढ़ने के कारण पूंजी निर्माण की गति में तीव्रता आने लगती है । व्यापार में वृद्धि हो जाती है, शिक्षा दीक्षा की सुविधा में पर्याप्त सुधार हो जाता है।

तीव्र गतिशील अवस्था में देश में आर्थिक विकास की प्रक्रिया तीव्र गति से होने लगती है

---

1. W.W. Rostow : The stages of Economic growth a non communist Manifesto" cambridge 1961.

अर्थ व्यवस्था में स्वचालित होने की शक्ति आ जाती है। विनियोजन की दर राष्ट्रीय आय के 10 प्रतिशत से ऊपर बढ़ जाती है। निर्माणकारी उद्योगों के विकास की गति तीव्र हो जाती है। राजनैतिक तथा सामाजिक ढांचे में परिवर्तन हो जाते हैं, जो कि आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने में सहायक होते हैं। देश के आर्थिक विकास में परिपक्वता की स्थिति उस समय आती है जब विनियोजन की दर राष्ट्रीय आय के 20 प्रतिशत से अधिक होने लगती है।

परिपक्वता की ओर अग्रसर होते समय देश में साधनों के दोहन हेतु नवीनतम तकनीकों का प्रयोग होने लगता है। आधुनिक आविष्कारों के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र का आधुनिकीकरण किये जाने के प्रयत्न होते हैं। नवीन प्रकार के श्रमिक वर्ग का प्रादुर्भाव होता है। स्वयं स्फूर्त अवस्था में प्रत्येक उत्पादन वर्ग के नेता अपने अपने वर्ग में विस्तार तथा रचनात्मक कार्य करते हैं परन्तु परिपक्वता की स्थिति में बड़े बड़े व्यवसायों का निर्माण होता है। इन व्यवसायों का प्रबन्ध पेशेवर प्रबन्धक करते हैं। समाज में केवल औद्योगीकरण को ही पर्याप्त नहीं समझा जाता, अपितु जटिल यन्त्रों के प्रयोग से उत्पादन में अभूतपूर्व बृद्धि की जाती है। इस काल में समाज सेवाओं का विस्तार होता है। परिपक्वता का चरण स्वयं स्फूर्तचरण के बहुत दिन बाद आता है। इस चरण में आने के लिए यह आवश्यक है कि देश के प्रत्येक आर्थिक क्षेत्र के लोग निरन्तर नवीनीकरण करते रहें। यह भी सम्भव है कि देश की प्रगति की गति इतनी मन्द पड़ जाये कि देश पूर्ण रूप से परिपक्वता के चरण में आ ही न सके।

परिपक्वता की स्थिति उसी समय कही जाएगी जब देश के अधिकांश आर्थिक क्षेत्रों में नवीनतम तकनीक प्रयोग में लायी जाने लगे जिससे प्राकृतिक साधनों का विस्तृत दोहन होने लगेगा। इस चरण में एक दीर्घकाल तक रहने के बाद देश अत्यधिक उपभोग की अवस्था (Age of high mass consumption) में पदार्पण करता है। इस अवस्था में देश वासियों को भोजन, वस्त्र तथा आवास की पर्याप्त सुविधा के साथ साथ कुछ आरामदेय तथा विलासिता की वस्तुऐं भी उपभोग के लिए उपलब्ध होती है। देश में पूर्ण रोजगार की स्थिति स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है। श्रम कल्याण तथा सुरक्षा का भी विस्तृत प्रबन्ध किया जाता है। देश टिकाऊ उपभोग वस्तुओं तथा सेवाओं का बड़े पैमाने पर उत्पादन करने लगता है। राष्ट्र अपनी आर्थिक शक्ति के साथ साथ सैनिक शक्ति बढ़ाने पर भी बल देने लगता है।

परिपक्वता के चरण के बाद अर्थ व्यवस्था अत्यधिक उपभोग के चरण में प्रविष्ट होती है। इस अवस्था में पहुँचकर देश को कुछ ऐसी योजनाऐं बनानी पड़ती है जिससे देश की आर्थिक प्रगति तथा अन्य प्रकार की प्रगति अवरूद्ध न हो जाये। इस स्थिति में प्रगति की गति को बनाये रखने

के प्रयत्न करना भी आवश्यक होता है।

*रोस्टोव ने आर्थिक विकास के चरणों को ऐतिहासिक रूप प्रदान किया, उनके अनुसार देश को एक चरण से दूसरे चरण में आना आवश्यक है उसके बाद ही वह अगले चरण में पदार्पण कर सकता है।* कुछ अन्य अर्थशास्त्री इस विचार से सहमत नहीं है। उनका विचार है कि देश की अर्थ व्यवस्था बीच के चरण के ऊपर से छलांग भरकर तीसरे चरण में पहुंच सकती है, यह आवश्यक नहीं है कि देश चरणो के क्रमानुसार ही आर्थिक विकास करें। इस विषय में दूसरी कठिनाई यह है कि देशों को इस प्रकार के चरणों में विभाजित करना कठिन होता है। क्योंकि अलग अलग देशों में भिन्न भिन्न प्रकार की आवस्थाओं का मिश्रण एक ही समय देखने में आता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में रोस्टोव की आर्थिक विकास की दूसरी अवस्था से लेकर पांचवी अवस्था तक की विशेषतायें विभिन्न क्षेत्रों में देखने को मिलती है । यथा स्वचलित उड़ान की पूर्णशर्त अभी भी बहुत से ग्रामीण आँचलों में देखी जा सकती है। बहुत से क्षेत्रों में अर्थव्यवस्था स्वाचलित उड़ान की अवस्था एवं अन्य क्षेत्रों में अर्थव्यवस्था का रूख परिपक्वता की ओर चलन की स्थिति में देखा जा सकता है। महानगरी सभ्यताओं में उच्च सामूहिक उपभोग की अवस्थायें भी विद्यमान है। अब ऐसी स्थिति में भारतीय अर्थव्यवस्था को किस श्रेणी में रखा जाये इस प्रश्न का उत्तर देना बहुत कठिन है। अधिकांश चिंतक विचारक भारतीय अर्थव्यवस्था को विकासशील देशों की श्रेणी मे ही रखते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था की सामाजार्थिक विशेषताओं को देखते हुये उनकी यह सोच उचित ही है किन्तु प्रसिद्ध अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन का कहना है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में वह सभी खूबियां मौजूद हैं जिनसे हम इसे विकसित राष्ट्र का दर्जा दे सकते हैं।

## रोजेन्स्टाइन – रोडान का सिद्धान्त – (The theory of big push)

अर्द्धविकसित देशों में विकास के निर्धारकों में परिवर्तन एक दूसरे को इस प्रकार प्रभावित करते हैं कि गरीबी का दुश्चक्र बना ही रहता है। विकास का गतिरोध दूर नहीं हो पाता है। निश्चेष्ट अर्थव्यवस्था की प्रारम्भिक जड़ता को दूर करने के लिए एक निश्चित प्रयास करना आवश्यक होता है, क्रमिक आरम्भ या वृद्धि, इस प्रारम्भिक जड़ता को दूर नहीं कर सकती है। अर्थव्यवस्था की तुलना एक विमान से कर सकते हैं जिस प्रकार से विमान को उड़ने के लिये पहले जमीन पर चलना होता है केवल चलना ही आवश्यक नहीं है वरन एक न्यूनतम गति आवश्यक है बिना उसके वह उड़ नहीं पायेगा। अर्थात् विमान की प्रारम्भिक जड़ता को दूर करने के लिये एक न्यूनतम

आवश्यक गति अनिवार्य है। जब यह गति आ जायेगी तभी विमान उड़ान की स्थिति प्राप्त कर सकेगा। *इसी प्रकार से एक विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था में विकास के निर्धारकों में कार्यात्मक सम्बन्ध कुछ इस प्रकार है कि इसमें एक न्यूनतम प्रयास करना आवश्यक हो जाता है। उत्पादन के साधनों की अभिभाज्यताओं के कारण धीरे धीरे आगे नहीं बढ़ा जा सकता है कुछ विनियोग ऐसे होते हैं जिनको एक मुश्त करना होता है। इसलिये अर्थव्यवस्था को चलायमान करने के लिए एक बिग पुश या क्रिटीकल मिनीमम एफर्ट करना आवश्यक है। आर्थिक विकास के संबन्ध में रोजेन्स्टाइन रोडन का चिंतन यहीं है।* इन्होंने अपनी पुस्तक "Notes on the theory of the big push" (March 1957) तथा Industrialisation of Eastern and south Eastern Europe नामक लेख जो कि 1943 में Economic Journal में छापा था, इन विचार को प्रस्तुत किया।[1]

इस सिद्धान्त का आधार बाहा मितव्ययिताऐं हैं इनसे जो लाभ मिलता है वह किसी एक साहसी तक ही सीमित नहीं रहता, पूरी अर्थव्यवस्था को इससे लाभ होता है। *रोजेन्स्टाइन–रोडान के अनुसार स्थैतिक सिद्धान्त और विकास सिद्धान्त में आधारभूत अन्तर बाहा मितव्ययिताऐं ही हैं। विकास सिद्धान्त में बाहय मितव्ययिताएं अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण होती है इस सिद्धान्त का आधार तीन अविभाज्यताऐं है जो कि उपभोग पदार्थो की मांग औद्योगिक उत्पादन फ्लन तथा बचत की पूर्ति को प्रभावित करती है। इन्हीं अविभाज्यताओं के कारण क्रमिक आरम्भ विशेष सहायक नहीं हो सकता है, विनियोग की एक न्यूनतम मात्रा सफलता के लिये अनिवाय्र (लेकिन पर्याप्त नहीं) शर्ते हैं। संक्षेप में यही **Bigpush theory** का तर्क है।*

"Proceeding bit by bit will not add up in its effects to the sum total of the single bits A minimum quantum of investment is a necessary (Though not sufficient) Condition of success this is in nutshell the contention of the theory of the big push"

यह तीन अविभाज्यतां निम्न है –:

(1) मांग की अविभाज्यता (Indivisibility of Demand)

(2) औद्योगिक उत्पादन फलन की अविभाज्यता (Indivisibility of the production function specially of supply of social overhead capital)

---

1. P.N. Rosenstein 'Noter on the theory of the bigpush economic development for Lation America edited by H.S. Eller.

(3) बचत की पूर्ति की अविभाज्यता (Indivisibility supply of savings)

## 1. मांग की अविभाज्यता :–

एक उत्पादक अपने श्रमिकों की ही मांग के आधार पर किसी वस्तु का उत्पादन नहीं करते हैं क्योंकि कुल आय का केवल एक भाग ही उसकी वस्तु पर व्यय किया जायेगा शेष अन्य वस्तुओं के क्रय पर। यदि एक साथ कई विभिन्न औद्योगिक इकाइयां स्थापित होती है जो उनकी मांग अधिक कर सकती है। इसका अर्थ है कि विनियोग सम्बन्धी निर्णय परस्पर निर्भर होते हैं तथा एक की सफलता दूसरे पर निर्भर करती हैं। प्रोफेसर रोजेन्स्टाइन रोडान एक उदाहरण से इसका स्पष्टीकरण करते हैं, वह एक बन्द अर्थव्यवस्था (Closed Economy) की कल्पना करते हैं, एक अर्द्धविकसित देश में सौ श्रमिक जो कि पहले छिपी हुई बेरोजगारी की स्थिति में थे एक जूते बनाने वाले कारखान में नौकरी पा जाते हैं। उनकी मजदूरी उनकी अतिरिक्त आय होगी। यदि यह श्रमिक अपनी सारी आय को जूतों पर ही व्यय करें तो इस कारखाने में सभी जूते बिक जायेंगे और औद्योगिक इकाई को कोई घाटा नहीं होगा। लेकिन यह श्रमिक अपनी सारी आय केवल जूतों पर ही व्यय नहीं करेंगे। पर्याप्त मांग के अभाव में जूते के कारखाने को घाटा होने का भय है। यदि दस हजार श्रमिक सौ कारखानों में रखे जाते है और वह श्रमिक एक दूसरे के कारखानों द्वारा निर्मित वस्तुओं का उपभोग करते हैं तब यह विनियोग सफल हो सकता है। इसलिये अर्थव्यवस्था में एक साथ अनेक जगह विनियोग करना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में बिग पुश अनिवार्य है। अन्यथा विकास क्रम का गतिरोध बना ही रहेगा।

## 2. उत्पादन फलन की अविभाज्यता :–

औद्योगिक विकास के लिये अवस्थापना (Infrastructure) का निर्माण आवश्यक होता है। इस क्षेत्र में धीरे धीरे या क्रमशः विनियोग करना व्यर्थ होता है। इसमें एक मुश्त विनियोग करना होता है और इस प्रकार **"Proceding bit by bit will not add up in its effects to the sum total of the single bits"**

इस अवस्थापना के निर्माण के फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों में विनियोग की सुविधाऐं उत्पन्न होती है इनका आयात भी नहीं किया जा सकता, जैसे यातायात का विकास शक्ति के साधनों का विकास। जल विद्युत का निर्माण किया जा सकता है रेल की पटरी बिछाई जा सकती है। अवस्थापना जिसको कि Social Overhead Capital भी कहा जा सकता है के निर्माण के

लिये भी एक निश्चित मात्रा का विनियोग अनिवार्य है। दूसरे शब्दों में Big Push आवश्यक है।

### 3. बचत की पूर्ति सम्बन्धी अविभाज्यता :-

अनेक अर्द्धविकसित देशों में आय तथा बचत में कोई सीधा तथा स्पष्ट सम्बन्ध नहीं है। एक निश्चित राष्ट्रीय के स्तर से नीचे बचत सम्भव ही नहीं होती है। आय इतनी कम होती है। कि वह आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही कठिनता से पर्याप्त होती है। इसलिये इस दुश्चक्र को तोड़ने के लिये पहले आय में बृद्धि आवश्यक है। इसके लिये विनियोग वृद्धि विदेशी सहायता से आवश्यक है जिसके फलस्वरूप आय बढ़ेगी और बचत की मात्रा भी अधिक होगी।

*इस प्रकार से उपयुक्त तीनों कारकों के कारण अर्थवरुवस्था की प्रारम्भिक जड़ता को दूर करने के लिए क्रमिक नहीं वरन एक बिग पुश की आवश्यकता है। इसके बिना गतिरोध दूर नहीं किया जा सकता है।*

बिग पुश का आधार सन्तुलित विकास की आवश्यकता है। बिग पुश मांग को प्रभावशाली बनाने के लिए तथा अवस्थापना के निर्माण के लिये आवश्यक है । दोनों से ही विकास सन्तुलित होता है। इस सिद्धान्त में बन्द अर्थव्यवस्था को ही ध्यान में रखा जाता है यदि विदेशी व्यापार हो रहा है तब यह आवश्यक नहीं कि एक कारखाने के सभी श्रमिक उसी कारखाने द्वारा निर्मित वस्तुऐं खरीदें। यह भी सम्भव है कि उनका निर्यात हो जाये। इस प्रकार उत्पादन वृद्धि बनी रह सकती है। किसी नये कारखाने को हानि हो आवश्यक नहीं है। एक अन्य सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि बिग पुश के लिए प्रभावशाली कार्यकुशल सार्वजनिक क्षेत्र चाहिए होता है। अर्द्धविकसित देशों में शक्तिशाली सार्वजनिक क्षेत्र का निर्माण हो सकता है लेकिन कुशलता सन्देहास्पद है । यदि बिग पुश के द्वारा सरकारी नियन्त्रण या स्वामित्व की नीति अपनाना चाहते हैं तो इसका मनोवैज्ञानिक औचित्य हो सकता है जैसा कि प्रोफेसर स्टीफन एन्क ने कहा है।

"It is on a psychological rather than an economic plane that perhaps something can be said for the idia of a big push.[1]

विकासवादी अर्थशास्त्री रोडन ने जड़ीकृत अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास का जो उपाय बताया भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास में उसकी महती आवश्यकता है। बस करना सिर्फ इतना है कि कल्याणकारी सरकार को अपने स्रोत उस दिशा में खोलने के अतिरिक्त भ्रष्टतंत्र पर भी नियंत्रण बनाना होगा।। रोडन ''बिग-पुश'' के सिद्धान्त का अनुपालन करने के लिये हमें व्यक्तियों की योग्यता कुशलता और उनके नैतिक विकास पर भी ध्यान देना होगा।

1. Stephen Enke : Economics for Development. Demis Dobson Books Ltd. London 1964. p. 316.

## अर्थशास्त्री – गुन्नार मेरिडल

गुन्नार मेरिडल ने अपनी पुस्तक Asian Drama [1] में कहा कि है कि अर्ध विकसित देशों में विकास की गति मन्द होने के 6 कारण हो सकते हैं उनके अनुसार पहले 3 कारण आर्थिक है। दूसरे दो कारण अनार्थिक है तथा अन्य एक कारण में आर्थिक तथा अनार्थिक तत्वों का मिश्रण है। उनके अनुसार छः कारण निम्न प्रकार है :

1. उत्पादन तथा आय (Out Put Income)
2. उत्पादन प्रणाली (Condition of Production)
3. रहन–सहन का दर्जा (Levels of Living)
4. जीवन तथा कार्य के आदर्श (Attitude to words life and work)
5. संस्थाऐं (Instutions)
6. राजनीति (Politics)

*प्रो0 रेगनर नर्कसे* का मत है कि अर्ध–विकसित देशों में पूंजी का अभाव होता है। इन देशों में जनसंख्या तथा प्राकृतिक साधन अधिक होते हैं। उनकी तुलना में पूंजी बहुत कम होती है। पूंजी के अभाव में बहुत से साधन बेकार पड़े रहते हैं। उनका पूरा उपयोग नहीं किया जाता। देश में बचत की मात्रा कम होती है, जिसके कारण पूंजी का निर्माण कम होता है। परन्तु इस कमी को विदेशों से ऋृण लेकर पूरा किया जा सकता है। *किसी देश के अर्ध विकसित होने के अन्य कारण भी है। ये देश अपनी निर्धनता के कारण पिछड़े हुए रहते हैं। ये अपने मानवीय तथा प्राकृति साधनों का उपयोग इसलिए नहीं कर पाते हैं कि वे निर्धन हैं। और वे निर्धर इसलिए हैं कि वे अपने मानवीय तथा प्राकृतिक साधनों का उपयोग नहीं कर पाते हैं।*

प्रो0 रेगनर नकसे बताते है कि एक देश गरीब है क्योंकि यह गरीब है यह दुश्चक्र मांग और दुश्चक्र पूर्ति दोनों पहलुओं पर लागू होता है। अर्थात् मांग तथा पूर्ति दोनो पहलुओं में विकास के निर्धारकों में अंसगतियां होती हैं, जो कि विकास प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न करते हैं। [2] मांगपक्ष में व्यापक दुश्चक्र में अर्द्धविकसित देश गरीब होता है, गरीबी के कारण उत्पादन कम होता है कम उत्पादन होने से आय कम होती है आय कम होने पर मांग कम होती है। मांग में कमी होने से कम विनियोग होता है, कम विनियोग होने से साधनों का सही उपयोग नहीं हो पायेगा तथा देश गरीब रहेगा।

---

1. Gunnar Myrdal writes about the catogories of condition in the following manner.

We concieve of the situation in each south asian country as in any other country as a social system. The system consists of a great number of condition that are casually interrelated in that a change in one will couse changes in the others"

Asian Drama.

By Gunnar Myrdar - Under development and Development pp - 1859 - 60.

2. Ragner Nurkse : Problems of capital for nation in the under development countries oxfort Basilw Block wele 1955. p. - 5
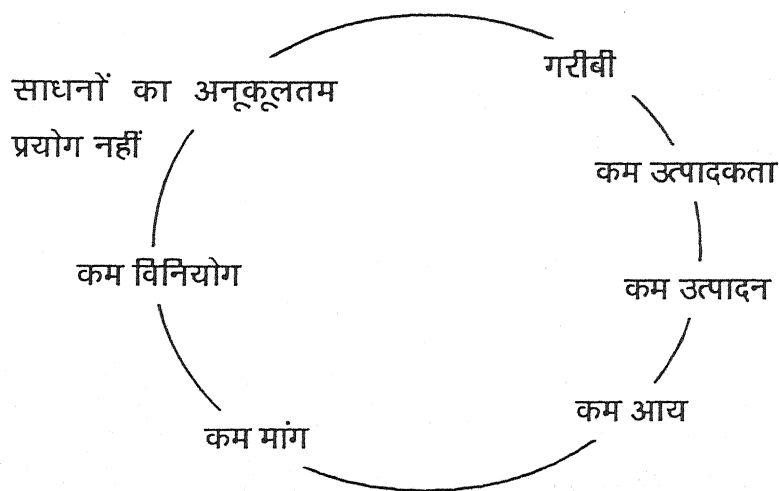
इस प्रकार से गरीबी के कारण कम मांग होती है, और कम मांग के कारण विनियोग में कमी होती है। इस दुश्चक्र के फलस्वरूप देश अविकसित ही रह जाता है। स्पष्ट है कि यह दुश्चक्र विकास के निर्धारिकों में व्याप्त अंसगतियों का ही परिणाम है।

पूर्ति पक्ष का दुश्चक्र भी कुछ इसी प्रकार का होता है, गरीबी के कारण उत्पादकता कम रहती है। कम उत्पादक होने से बचत कम होगी। बचत की कमी से विनियोग कम होगा और फलस्वरूप फिर पूर्व वाली स्थिति आ जाती है।

बाजार की अपूर्णता, कम विनियोग, गरीबी, शिक्षा का अभाव, सामान्य तथा तकनीकी दुहरी अर्थव्यवस्था आदि बाजार की अपूर्णता को प्रभावित करती है। जिससे कि विनियोग भी प्रभावित होता है। इसके आधार पर एक अन्य दुश्चक्र की कल्पना की जा सकती हैं गरीबी के कारण बचत कम होती है और बचत के अभाव में विंनियोग कम होने से देश गरीब रहता है।
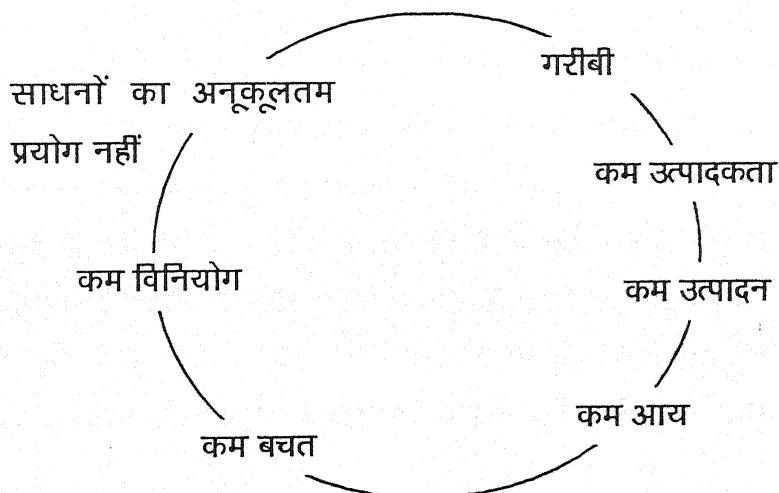
इस प्रकार यह दुश्चक्र अर्थव्यवस्था को प्रभावित करते हैं। इनके मूल में दो बाते हैं। *गरीबी के कारण मांग भी कम होती तथा बचत भी। दोनो ही विंनियोग को प्रभावित करतें हैं।* इस व्यवधान को दूर करने के लिए विनियोग बढ़ाना आवश्यक है। क्योंकि विनियोग अधिक होने से उत्पादकता बढ़ेगी। उत्पादकता में वृद्धि होने से उत्पादन अधिक होगा। इससे आय अधिक होगी।

अधिक आय होने से बचत तथा मांग दोनो में ही पहले की अपेक्षा वृद्धि होगी और विनियोग में सुविधा होगी। इसलिये विनियोग के बिन्दु से इस दुश्चक्र को तोड़ा जा सकता है। जिसके कारण अनेक अनुकूल परिवर्तनों की सम्भावना हो जाती है। यह अनुकूल परिवर्तन एक दूसरे को प्रेरित भी करते हैं।

*कोलिन क्लार्कः–* इन्होनें अपने महत्वपूर्ण अध्ययन 'द कंडीशन ऑफ इकनामिक प्रोग्रेस' में अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। क्लार्क का कहना था कि आर्थिक विकास के साथ साथ अपने श्रम शक्ति का क्रमशः पुर्नवितरण होता है। पहले श्रम प्राथमिक क्षेत्र से द्वितीय क्षेत्र की ओर जाता है और विकास की अगली स्थिति में इन दोनों क्षेत्रों से तीसरे क्षेत्र की ओर। यह बात युक्तियुक्त मालूम होती थीं क्योंकि यह कुछ सामान्य बातों से मेल खाती थी कि आर्थिक प्रगति के साथ रहन सहन के स्तर में जो वृद्धि होती है, उससे चीजों की मांग बढ़ती है। जब प्रति व्यक्ति आय कम होती है तो कुल आय का बहुत बड़ा अंश आम तौर पर खाने पीने की चीजों में खर्च होता है। आय में वृद्धि के साथ एक ऐसा बिन्दु आता है जब खाद्य की मांग कम हो जाती हे। इस स्थिति में निर्मित वस्तुओं पर उपभोक्ता का खर्च तेजी से बढ़ जाता है। अथवा दूसरे शब्दों में द्वितीय क्षेत्र की वस्तुओं की मांग बढ़ जाती है। इससे भी ऊंचे रहन सहन के स्तर पर शिक्षा स्वास्थ्य और मनोरंजन जैसी विविध प्रकार की सेवाओं की मांग तेजी से बढ़ती है जिससे इस अवस्था में आशा की जाएगी कि तृतीय क्षेत्र द्वितीय क्षेत्र की अपेक्षा तेजी से बढ़ेगा।[1]

कोलिन क्लार्क और अन्य लोगो ने जो सामान्य तस्वीर पेश की है उसमें भारत ठीक नहीं बैठता। कोलिन क्लर्क ने लिखा है कि ''भारत में प्रवृन्ति अन्य देशों की अपेक्षा बहुत भिन्न है। 1881 और 1911 के बीच कृषि में काम करने वाले लोगों के अनुपात में वास्तव में काफी वृद्धि हुई थी तब से यह प्रायः स्थिर है।''[2]

क्लार्क की परिकल्पना में काफी चुनौती थी और आकड़ों के आधार पर इसकी जांच की जा सकती थीं। क्लार्क तथा अन्य अर्थशास्त्रियों ने इस दिशा में आगे छानबीन की जिसके परिणामस्वरूप मूल विचार में कई सुधार किए गये।

*सिमोन कूजन्येत्स* के अनुसार अर्थव्यवस्था के तीन क्षेत्र हैं (क) क्षेत्र कृषि मछली पालन और जंगलात से सम्बन्धित हैं। (ख) क्षेत्र का अर्थ है, खान, वस्तुओं का निर्माण और भवनों आदि का निर्माण और (ग) क्षेत्र के अन्तर्गत विविध सेवाएं आ जाती हैं। लम्बी अवधि के अन्दर इन तीनों क्षेत्रों के अन्तर्गत श्रम और राष्ट्रीय उत्पादन के वितरण की प्रवृत्ति का अध्ययन करने के लिये बहुत से

---

1. आर्थिक विकास की दिशाएं – अम्लान दत्त : दि मैकमिलन कम्पीन आफ इण्डिया लिमिटेड पृ0 58।
2. कोलिन क्लार्क : द कंडीशन आफ इकनामिक प्रोग्रेस मैकमिलन लंदन, तीसरा संस्करण पृ0 499।

सांख्यिकीय आकड़ों का विश्लेषण किया जाता है।[1] इसमें एक प्रारम्भिक कठिनाई यह आती है कि इस विषय पर लम्बे अरसे के प्रमाणिक आकड़े बहुत कम देश दे सके हैं। इतिहास में पीछे की ओर जाए तो अधिकांश देशो के आंकड़े कम और अविश्वसनीय हो जाते हैं। इस कठिनाई को दूर करने के लिये कूज़न्येन्स ने एक विशेष तरकीब निकाली। हमें यह पता लगाना है कि आर्थिक विकास के साथ तीनों क्षेत्रों के बीच राष्ट्रीय उत्पादन और श्रम बल का वितरण किस प्रकार बदलता है। इसका आशय यह है कि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के साथ लम्बी अवधि में विभिन्न आय स्तरों वाले बहुत से देशों पर विचार करके अभीप्सित परिणामों तक पहुंचा जा सकता है और यह पता लगाया जा सकता है कि यह वितरण अन्य देशों के आय स्तर से किस प्रकार सम्बन्धित है। विश्लेषण के प्रयोजन के लिए देशों को प्रथम से सप्तम् तक अलग अलग श्रेणियों में बांट दिया गया है। जिसमें अधिकतम आय वाले देशो को प्रथम के अन्तर्गत और सबसे कम आय वाले को सप्तम के अन्तर्गत रखा गया है। इस प्रकार के विश्लेषण की तुलना उनक्रम संख्या के दसों के विश्लेषण से प्राप्त सीधे साक्ष्य के साथ की जाती है जिनके सम्बन्ध में लम्बी अवधि के आंकड़े उपलब्ध हैं।

विकास की पाश्चात्य धारणा के विपरीत महात्मा गांधी की विकास सम्बन्धी धारणा में व्यक्तियों तथा आर्थिक लघु वर्गो के बीच सम्बन्धों के प्रश्न को अधिक महत्व दिया गया है। विकास के इस सिद्धान्त में ग्रामीण समुदाय जैसे लघु वर्ग सामान्य रूप से समाज में परस्पर सम्बन्ध रखते हैं। *गांधी जी के विकास सम्बन्धी विचारों के अनुसार, विकास प्रक्रिया में सरकार की भूमिका अपेक्षाकृत कम है। उनके अनुसार, स्थानीय स्तर पर गांव आर्थिक विकास का केन्द्र होना चाहिए। ऐसी स्थिति में व्यक्तियों को अपना तथा समाज का विकास करने के लिये महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है। गांधी जी की योजना के अनुसार पंचायत जैसी संस्थाओं के माध्यम से स्थानीय स्तर पर गांव आर्थिक विकास का केन्द्र बिन्दु होना चाहिए।*[2]

विकास के विभिन्न सिद्धान्तों का अध्ययन करने से पता चलता है कि विकास की समस्या को विभिन्न विचारको ने भिन्न भिन्न रूप में लिया है, परिणामस्वरूप विकास के लिये उनके मार्ग भी भिन्न भिन्न हैं। इस प्रकार ये सिद्धान्त विभिन्न मार्गो द्वारा प्रगति के समर्थक हैं।

विभिन्न देशों की भिन्न भिन्न प्राथमिकताऐं होने के कारण विकास का कोई एक अकेला मार्ग नहीं हो सकता हैं।

---

1. इण्डस्ट्रियल डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ नेशनल प्रोडक्ट एण्ड लेबर फोर्स इकनामिक डेवलपमेंट एण्ड कल्चरल चेंज जुलाई 1957 (इसका पर्याप्त सारांश कूज़न्येत्स के सिक्स लेक्चार्स आन इकनामिक ग्रोथ मे देखा जा सकता है) (फ्री प्रेस आफ ग्लेनको न्यूयार्क 1959)
2. ग्राम विकास – आर.डी.डी. 01 वोल्यूम इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय सतत् शिक्षा विद्यापीठ। पृ0 11

# आर्थिक विकास के निर्धारक घटक -

यह प्रश्न विवाद ग्रस्त है कि आर्थिक विकास के निर्धारक घटक गैर आर्थिक घटक और आर्थिक घटक में से कौन अधिक महत्वपूर्ण है, क्या गैर आर्थिक कारक आर्थिक विकास को प्रभावित करते हैं ? या आर्थिक विकास गैर आर्थिक कारकों से अधिक प्रभावित होता है। कुछ लोग गैर आर्थिक घटकों को अधिक महत्वपूर्ण बताते हैं। उनका तर्क होता है कि आर्थिक कारक तो प्रतिफल को प्रभावित करते हैं जबकि गैर आर्थिक कारक निर्णायक होते हैं। अतः सामाजिक मनोवैज्ञानिक सांस्कृतिक पहलू अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि मनुष्य केवल एक आर्थिक प्राणी नहीं है। आर्थिक पहलू उसके जीवन का एक पक्ष मात्र है और दूसरे पक्ष आर्थिक विकास के पहल करने में सहायक होने के साथ साथ कभी कभी विकास अवरूद्ध भी कर सकते हैं।

दूसरी विचारधारा के अनुसार आर्थिक विकास गैर आर्थिक कारकों को प्रभावित करता है जैसे जैसे विकास होता है सीमित व्यक्तिगत दृष्टिकोण बदलता जाता है पारिवारिक एवं जातिगत बन्धन ढीले होने लगते हैं। विकासोन्मुख एवं विकसित अर्थ व्यवस्था में यह अधिक पाया जाता है। *भारत जैसे विकासोन्मुख देश में अब भी गैर आर्थिक कारक विकास को अवरूद्ध कर देते हैं विकसित अर्थव्यवस्था में जैसे अमेरिका, इग्लैण्ड में यह बात नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह भी एक दुश्चक्र* ***(Vicious circle)*** *है।*

मनुष्य के अनेक पहलू होते हैं।सभी पहलू एक दूसरे को प्रभावित करते है।कोई भी एक दूसरे से पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं होते हैं। मनुष्य आर्थिक विकास की पहल करता है जो उसके व्यक्तित्व को प्रभावित करेगा। जिससे उसके पारिवारिक या जातिगत कारक प्रभावित होंगे जातिगत परिवर्तन से धर्म तथा संस्कृति में भी परिवर्तन हो सकता है इस प्रकार से एक चक्र चलता रहता है इस चक्र को तोड़ने के लिये आर्थिक पक्ष ही उचित दिशा होती है आर्थिक विकास के साथ साथ धीरे धीरे गैर आर्थिक परिवर्तन भी होने लगते हैं जो कि विकास की प्रक्रिया को अनुकूल तरीके से प्रभावित करते है। इस प्रकार से गैर आर्थिक कारक महत्वपूर्ण है यह माना जा सकता है। प्रोफेसर हेगन के दृष्टिकोण से जो कि उन्होंने अपनी पुस्तक ''ऑन द थ्योरी आफ सोसल चेन्ज हाऊ इकोनोमिक ग्रोंथ बिंईग'' में प्रस्तुत किया। इनके अनुसार आर्थिक परिवर्तक केवल प्राचल (Parameters) है जो कि आर्थिक विकास को प्रभावित करते हैं। [1] गतिरोध से विकास में परिवर्तन एक आधारभूत गैर आर्थिक परिवर्तन से सम्भव होता है। यह कहना कठिन है कि केवल सांस्कृतिक परिवर्तन द्वारा गतिरोध दूर किया जा सकता है।

प्रोफेसर रोस्टोव स्वचालित उड़ान की पूर्व शर्तो में गैर आर्थिक परिवर्तन का उल्लेख करते है। न इसमें केवल नये नेतृत्व की आवश्यकता होती है वरन सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन भी अपेक्षित होते हैं। इसके साथ ही प्रोफेसर रोस्टोव राजनैतिक प्रक्रिया तथा उद्देश्यों को

1. E.E. Hager : on the theory of Social Change : How Economic Growth Leging.

आर्थिक संक्रमण काल में महत्व देते हैं। राजनैतिक परिवर्तन से इनका अभिप्राय राष्ट्रीय दृष्टिकोण से है।[1]

हिर्शमन (Hirschman) विकास के अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने वाले कारकों को जो कि पूंजी, साहसी की पूर्ति कुशलता आदि को प्रभावित करते हैं, गैर–आर्थिक कारकों के रूप में उल्लेख करते हैं। विश्वास, दृष्टिकोण, विचार तथा प्रवृत्तियों (Belief, Attitudes, Climate of opinion and propensities) आदि वे कारक हैं [2] इसी प्रकार से इरमा एडिलमैन (Irma Adelman) ने अपनी पुस्तक (Theories of Economic Growth and Development) में गैर आर्थिक कारकों को मान्यता दी है। इडिलमैन अपने विकास समीकरण में इन परिवर्तकों (Variables) को U से स्पष्ट करती है। उसके अन्तर्गत सामाजिक, सांस्कृतिक तथा संस्थागत परिवर्तन आ जाते हैं। प्रोफेसर मेयर तथा बाल्डविन [3] भी इन गैर आर्थिक कारकों के महत्व की ओर संकेत करते हैं। कुछ संस्थागत परिवर्तन जो कि मूलरूप से आर्थिक कारकों के महत्व की ओर संकेत करते हैं। कुछ संस्थागत परिवर्तन जो कि मूलरूप से आर्थिक नहीं है, समाज के विकास प्रयास के लिए आवश्यक है नई आवश्यकताऐं नये अभिप्रेरण, उत्पादन की नई विधियां, नई संस्थाओं का निर्माण, यह सभी आवश्यक है, यदि राष्ट्रीय आय को तीव्र गति से बढ़ाना है। अर्थशास्त्रियों ने आर्थिक विकास के निर्धारक घटक को दो भागों में बांटा है।
(A) गैर आर्थिक कारक (B) आर्थिक कारक

## (A) गैर आर्थिक कारक -

प्रोफेसर किण्डलबरगर ने गैर आर्थिक कारक को 5 भागों में विभाजित किया है।

**(1) व्यक्ति तथा उसका वातावरण :–** प्रत्येक क्रिया चाहे जैसी भी हो, मनुष्य ही उसका केन्द्र बिन्दु होता है। इसलिये व्यक्ति तथा उसका वातावरण महत्वपूर्ण हो जाता है। व्यक्ति का संज्ञान, समाज की सदस्यता तथा उससे सम्बन्ध, ये तीनों बातें ही महत्वपूर्ण होती है, यही बातें मनुष्य के व्यवहार को प्रभावित तथा उसकी व्याख्या भी करती हैं विकास के सन्दर्भ में भी यही बातें प्रभावशाली हैं एक व्यक्ति अपने वातावरण के प्रति क्या दृष्टिकोण रखता है या उसकी कैसे व्याख्या करता है उसका समाज से किस प्रकार का सम्बन्ध है, यह विशेष से सामान्य को प्रमुखता देता या केवल व्यक्तिवाद में ही उसकी आस्था है, सामाजिक बन्धन कठोरता से लागू होते हैं यह अस्पष्ट है। वह सब बातें उसके व्यवहार को निर्धारित करती हैं, यदि वह तर्क बुद्धिवाद का सहारा लेता है तो अनेक छोटी छोटी बातें जैसे पक्षपात जाति वर्ग आदि अधिक प्रभावित नहीं कर सकती है।

---

1. W.W. Rostow " The stages of Economic Growth-a-Non-communist manifesto" cambridge university press 1961 p. 26.
2. A.O. Hirschman. " The strategy of Economic Development" yale university press 1960 p. 82.
3. Meier and Baldwin, "Economic Development theory History Policy" Asia publishine House. 1962 p 360-61.

**(2) पारिवारिक ढांचा :–** पारिवारिक ढांचा व्यक्ति तथा उसकी क्रियाओं को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक होता है, जो व्यक्ति की क्रियाओं को नियन्त्रित भी करता हैं, जिससे व्यक्ति की गतिशीलता कम हो जाती है और पहल करने की सम्भावना क्षीण हो जाती है। जैसे संयुक्त परिवार की आय एक सामान्य निधि होती है, इसमें किसी व्यक्ति विशेष का कोई विशेष अधिकार नहीं होता है फलस्वरूप अधिक कार्य करने को प्रोत्साहन कम मिलता है। आर्थिक विकास में गतिशीलता और प्रोत्साहन दोनो ही महत्वपूर्ण है। पारिवारिक ढांचे में स्त्रियों का स्थान भी महत्वपूर्ण है, क्या परिवार में स्त्रियों का स्वतंत्र व्यक्तित्व है ? क्या उनका कार्यक्षेत्र एक निर्धारित सीमा में ही है ? यह सभी बातें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में व्यक्ति के कार्य करने की क्षमता को प्रभावित करती है। जैसे जैसे विकास होता है पारिवारिक ढांचा में परिवर्तन धीरे धीरे होने लगता है।

**(3) जातिगत ढांचा :–** जातिगत ढांचा भी गैर आर्थिक कारकों में महत्वपूर्ण है, प्रायः आर्थिक क्रियाओं का बंटवारा जातिगत आधार पर होता है। फलस्वरूप व्यावसायिक गतिशीलता कम हो जाती है, विकास के लिये आवश्यक है कि आर्थिक क्रियाएं जाति की परिधि से बाहर कुशलता या क्षमता के आधार पर निर्धारित हों, जहां पर जातियों के मध्य बहुत बड़ी खाई रहती है जैसे सामन्तवादी प्रथा में,वहां विकास बहुत ही सीमित हो जाता है। इस प्रकार से जातिगत ढांचा आर्थिक विकास में अवरोध उत्पन्न कर सकता है। विकास के लिये सामान्यतः एक वर्ग विशेष अधिक सक्रिय रहता है, यह भूमिका प्रायः मध्यम वर्ग की ही होती है। इसका एक अन्य प्रमुख कारण व्यवसाय के अपनाने के जातिगत बन्धनों से मुक्त होना है, अतः जातिगत ढांचा आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है जहां यह वर्गीकरण अनम्य (Rigid) होता है वहां अधिक कठिनाई होने की संभावना है क्योंकि वहां अनेक प्रकार के नियंत्रण हो सकते हैं यदि जातिगत ढांचे में लोच हैं,तब इसका प्रतिकूल प्रभाव कम पड़ता है।

**(4) धार्मिक ढांचा :–** जातिगत ढांचे से सम्बन्धित धार्मिक ढांचा है, जातिगत ढांचा तो एक धर्म या जाति विशेष की उपजातियों से सम्बन्धित कठिनाइयों का ही उल्लेख करता है लेकिन धार्मिक ढांचा दो प्रकार से आर्थिक क्रियाओं को प्रभावित करता है, प्रत्येक धर्म की अपनी मान्यताएं विश्वास एवं धारणाऐं होती हैं, यह सभी मिलकर उसकी क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। धर्म आर्थिक क्रियाओं को बढ़ावा भी दे सकता हैं, उसमें व्यवधान भी उत्पन्न कर सकता है, यदि किसी देश में दो या अनेक प्रकार के धर्म है तो इस स्थिति में उनके आपसी सम्बन्ध भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं, यह सम्भव है कि एक धर्म विशेष के लोग दूसरे धर्म वालों को आर्थिक दासता में रखना चाहें ताकि वह पुनः बढ़ न सके। ऐसा प्रायः तभी होता है जब एक धर्म बाहर का होता है तथा दूसरा उसी देश का इस प्रकार की प्रथा मध्ययुग में थी विजित देश में अपने धर्म को प्रचलित करने के लिये विजेता आर्थिक क्रियाओं का बंटवारा कर देते थे, और इस प्रकार बनावटी बन्धन बन जाते हैं, धीरे धीरे यह बन्धन एक स्वाभाविक रूप ले सकते हैं और विकास का मार्ग अवरूद्ध कर सकते हैं।

(5) सांस्कृतिक व्यक्तित्व (Cultural Personality):– व्यक्तियों में अन्तर सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के आधार पर भी होता है, और इसका भी प्रभाव अन्य गैर आर्थिक कारकों की भांति आर्थिक विकास पर पड़ता है। प्रत्येक देश का एक राष्ट्रीय चरित्र होता हैं, वह राष्ट्र निर्माण को अपने ढंग से प्रभावित करता है यदि किसी देश में दो प्रकार की सभ्यताऐं होती है तो उनका प्रभाव अलग अलग होगा। लेकिन किसी भी देश की सभ्यता या संस्कृति आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है। किस देश में किस प्रकार के लोग हैं शान्ति से रहने वाले या अधिक जोखिम उठाने वाले। क्या वह स्वंय पहल कर सकते हैं या कोई अन्य व्यक्ति निर्णय लेते हैं और उनको वह केवल पूर्ण मात्र करते हैं, पहल करने की प्रवृत्ति मनुष्य के व्यक्तित्व का अभिन्न भाग होती हैं यदि बचपन से ही वह निर्णय लेंने में सफल होता है तो आगे चलकर पहल करने में उसे कठिनाई नहीं होगी। यदि आरम्भ से ही उसको निर्णय लेने या पहल करने की आवश्यकता नहीं पड़ती तब आगे चलकर भी वह व्यक्ति पहल करने से हिचकता है। इस प्रकार से यह सब बातें जो कि व्यक्तित्व से जुड़ी हुई हैं, आर्थिक क्रियाओं को प्रभावित करती है।

(B) **आर्थिक कारक** – आर्थिक कारकों का विश्लेषण उत्पादन के साधनों के आधार पर किया जाता है। इसमें भूमि, श्रम, पूंजी, एवं संगठन तथा साहस महत्वपूर्ण है।

*भूमि :–*

उत्पादन के साधन में भूमि का महत्व निर्विवाद है। भूमि के सहयोग के बिना उत्पादन किसी भी स्थिति में हो ही नहीं सकता। लेकिन भूमि स्वयं उत्पादन में भाग नहीं लेती है अर्थात भूमि सक्रिय न होकर उत्पादन का निष्क्रिय साधन है। किसी भी देश की जलवायु वहां के विकास प्रयास को प्रभावित करती है। यह केवल संयोग मात्र ही नहीं है कि लगभग सभी विकसित देश शीतोष्ण जलवायु के प्रदेश है जबकि अधिकांश विकासोन्मुख देश गर्म जलवायु वाले प्रदेश हैं। अतः जलवायु भी विकास को प्रभावित करती है। कुछ लोगो का विचार है कि भूमि सीमित है और इसलिये यह कम महत्वपूर्ण है। भूमि को लोग प्रायः सीमा कारक कारण मानते है। जमीन की मात्रा निश्चित होती है। इस निश्चित मात्रा में जैसे जैसे हम श्रम एवं पूंजी की मात्रा बढ़ाते जाते हैं कुछ समय बाद उत्पादन का हासमान मान नियम लागू होने लगता है। इस प्रकार यह सीमाकारक कारण हो जाता है। यदि हम तकनीक में या कृषि कला में सुधार कर सके तो यह नियम टाला जा सकता है। दूसरे शब्दों में उत्पादन के अन्य साधनों की वृद्धि की तुलना में उत्पादन में अधिक वृद्धि होगी।

विकास के कारक की दृष्टि से भूमि का क्या महत्व है। इसे कृषि, उद्योग तथा यातायात एवं संचार में प्राप्त सुविधाओं की दृष्टि से जाना जा सकता है।

*भूमि तथा कृषि उत्पादन :–*

उत्पादन के साधन भूमि या विकास के कारक भूमि तथा कृषि उत्पादन का बहुत निकट का सम्बन्ध है। कृषि उत्पादन भूमि की उर्वरता तथा जलवायु के स्तर से प्रभावित होता है। उर्वरता एवं

जलवायु दोनो ही प्रकृतिदन्त है। हम इनकी मात्रा में परिवर्तन नहीं कर सकते हैं। जल की मात्रा कम होने पर मानवीय प्रयत्नों से इसे बढ़ा सकते हैं लेकिन पानी अधिक होने पर फसलों की बर्वादी नहीं रोकी जा सकती केवल कुछ सीमा तक कम की जा सकती है। इस प्रकार मार्शल, द्वारा बताई गयी भूमि की विशेषताऐं कृषि उत्पादन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। इन्हीं कारणों से कुछ देशों में कृषि की पर्याप्त सुविधाऐं मिल जाती हैं तथा कुछ अर्थव्यवस्थाओं में इनका अभाव होता है।[1]

जमीन की उत्पादकता केवल उपर्युक्त प्राकृतिक कारणों द्वारा ही प्रभावित नहीं होती है। उत्पादन की तकनीकी, उर्वरता के अनुकूलतम उपयोग में सहायता करके कृषि उत्पादन में काफी वृद्धि कर सकती है। जैसे जैसे उत्पादन की विधियों में परिवर्तन करके उत्पादन बढ़ाया जा सकता है, विकास प्रक्रिया सरलता से आगे बढ़ाई जा सकती है। फसलों में हेर फेर अच्छी ढंग की खुदाई, पानी के निकास की समुचित व्यवस्थाऐं कृषि सुधार की प्रारम्भिक आवश्यकताऐं कही जा सकती हैं। विकास के प्रारम्भिक चरणों में इनका बहुत महत्व होता है। आर्थिक विकास के सन्दर्भ में किसी भी विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। सतत विकास के लिए कृषि से अतिरेक प्राप्त करना आवश्यक है। इसके बिना विकास प्रयास में तेजी नहीं लाई जा सकती है।

## भूमि तथा औद्योगिक उत्पादन :–

औद्योगिक उत्पादन में भी भूमि सहायक होती है। इसमें भूमि से उपलब्ध कच्चा माल, खनिज पदार्थ तथा शक्ति के अनेक साधन सम्मिलित होते हैं। कुछ निर्मित वस्तुओं के लिए कृषि से ही कच्चा माल प्राप्त होता है जैसे वस्त्र उद्योग के लिये कपास, ऊनीं कपड़ो के लिये ऊन आदिं। इस प्रकार से इन उद्योगो के विकास के लिए भूमि एक आधार भूत आवश्यकता है। कुछ कच्चे मालों के लिए विशेष जलवायु तथा भूमि की आवश्यकता होती है जैसे कपास के लिए काली मिट्टी। इस प्रकार यह उद्योग कुछ विशेष प्राकृतिक वातावरण में ही अधिक आसानी से पनप सकता है।

औद्योगिक विकास की आधारशिला खनिज पदार्थ है। आधारभूत उद्योगो के लिए कोयले तथा लोहे की खदाने आवश्यक है। एक ओर तो शक्ति के साधन के रूप में कोयले की आवश्यकता होती है तथा दूसरी ओर लोहे के सामानों के निर्माण के लिए लोहे की आवश्यकता होती है। इन दोनो के बिना प्राथमिक उद्योग स्थापित नहीं किये जा सकते हैं। इस प्रकार औद्योगीकरण के लिए यह दो अनिवार्यताएं कही जा सकती है। यदि कोई देश स्वयं उत्पादन नहीं करता है तो उनका निर्यात कर सकता है। मध्य एशिया, के अनेक देश तेल निर्यात करके आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हो गये है जैसे ईरान, ईराक, कुबैत, सउदी अरब आदि देश तेल उत्पादन तथा निर्यात करते हैं।

शक्ति के साधनों के रूप में कोयला एवं तेल ही भूमि से प्राप्त नहीं होते वरन प्राकृतिक साधनों से जल विद्युत का भी निर्माण किया जा सकता है इस प्रकार कच्चे मालों के अन्तर्गत भूमि

---

1. आर्थिक विकास जी.एस.कुशवाहा – लोकभारती प्रकाश पृ0 39 ।

शक्ति के साधन के रूप में बहुत ही महत्वपूर्ण है।

*भूमि एवं यातायात तथा संचार की सुविधाएं –*

प्राकृतिक साधन न केवल कृषि एवं उद्योगो में सहायता पहुंचाते हैं। वरन यातायात एवं संचार के साधनों में भी इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। किसी भी देश की भौगोलिक स्थिति यातायात की सुविधाओं को प्रभावित करती है। यदि देश पहाड़ी है या जंगलों से भरा हुआ है तो वहां यातायात तथा संचार में कठिनाइयां होगीं। यातायात विकास प्रक्रिया में गतिशीलता प्रदान करता है जहाँ यातायात विकसित नहीं है वहाँ विकास में अनेक प्रकार के व्यवधान आते हैं और उनको आसानी से दूर नहीं किया जा सकता है।

इस प्रकार विकास की प्राथमिक अवस्था में भूमि का महत्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में यही एक आधार प्रस्तुत करता है जो कि विकास प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में सहायक होता है। बिना खाद्य पदार्थ, कच्चे माल, खनिज तथा शक्ति के साधन के आगे नहीं बढ़ा जा सकता है। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में भूमि के स्थान पर श्रम एवं पूंजी तथा सुधरी तकनीक का प्रतिस्थापन किया जा सकता है। इससे इसकी कार्य कुशलता या उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो जाती है।

*श्रम :–*

विकास के सम्बन्ध में श्रम का महत्व निर्विवाद है। सभी अर्थशास्त्रियों ने अपने विकास सिद्धान्त में 'उत्पादन फलन' (Production function)[1] में श्रम को सम्मिलित किया है। प्रारम्भ में श्रमिकों की संख्या पर अधिक जोर दिया गया, श्रमिकों के गुण पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। जिस अर्थव्यवस्था में अधिक जनसंख्या होती थी वह देश आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं शक्तिशाली माना जाता था। इस प्रकार श्रम की संख्या ही उत्पादन में एक महत्वपूर्ण निविष्ट (Input) था। धीरे धीरे इस विचार धारा में परिवर्तन हुआ और श्रम की संख्या के साथ साथ लोगों ने उसके गुण पर भी ध्यान दिया। अब अर्थशास्त्री श्रमिकों के गुणों पर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान देते हैं। विकसित एवं विकासोन्मुख राष्ट्रों का अन्तर भी श्रमिकों की कुशलता के आधार पर किया जाता हैं यह मान लिया जाता है कि विकसित देशों में श्रमिकों की कार्य कुशलता अधिक होती है। जबकि अर्द्धविकसित देशों में उत्पादकता कम होती है। कुछ अर्थशास्त्री तो पूंजी पदार्थो की अपेक्षा कुशल श्रम एवं तकनीक को अधिक महत्व देते हैं। कुशल श्रम तथा तकनीक से विकास प्रक्रिया सरल हो जाती है। यदि एक देश ऐसा हो जहां पर आधुनिकतम पूंजी पदार्थ है लेकिन कुशल श्रम नहीं है। जबकि दूसरे देश में कुशल श्रम है लेकिन पूंजी या उत्पादन के उपकरण किसी कारण से जैसे युद्ध आदि से नष्ट हो गये हैं तो विकास की दृष्टि से दूसरा देश शीघ्र ही आगे बढ़ जायेगा। कुशल श्रम के कारण शीघ्र ही नये पूंजी पदार्थो का निर्माण हो सकेगा लेकिन यदि श्रम ही कुशल नहीं है तब आधुनिकतम उपकरणों से विशेष लाभ नहीं हो सकता। आधुनिक इतिहास में इसके दो उदाहरण मिलते हैं। द्वितीय विश्व युद्ध में जर्मनी एवं जापान की उत्पादन शक्ति पर्याप्त रूप से नष्ट हो गयी थीं लेकिन इस नष्ट शक्ति को उन्होंने कुशल श्रमिकों के कारण बहुत ही कम

---

1. उच्चतर आर्थिक सिद्धान्त – एच.एल. आहूजा – पृ. 236

समय में प्राप्त कर लिया और अब जर्मनी एवं जापान दोनो ही औद्योगिक देशों में काफी आगे है। इस प्रकार से कुशल श्रमिकों की श्रेष्ठता में किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं है। प्रोफेसर किन्डल बरगर का मत्स्य नौका का उदाहरण भी इसी बात की पुष्टि करता हैं। यह कहा जाता है कि आधुनिक मत्स्य नौका का संचालन नार्वे में 6–7 आदमी, जापान में 12–14 आदमी तथा भारत में 20–25 आदमी करते हैं। लेकिन नार्वे की कुशलता इस क्षेत्र में सबसे आगे हैं यह कुशल श्रमिकों का ही परिणाम है।

आर्थिक विकास के क्रम में श्रमिकों की कुशलता में परिवर्तन अनिवार्य है। परम्परागत समाज से औद्योगिक समाज में परिवर्तन के क्रम में श्रमिकों की कार्य कुशलता में वृद्धि आवश्यक होती है। वास्तव में विकास की प्रारम्भिक स्थिति में, जिसमें कि हम स्वचलित उड़ान की पूर्व शर्तो का निर्माण करते हैं। श्रम की कुशलता वृद्धि आवश्यक होती है। एक बात यह भी प्रकट होती है कि औद्योगिक अर्थव्यवस्था में अपेक्षाकृत कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है। यह अधिक कार्य कुशलता का ही घोतक है। कृषि अवस्था से औद्योगिक अवस्था के संक्रमण काल में चार बातें विशेष रूप से सामने आती है। सबसे पहले चुनाव की समस्या आती है। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें हम उपर्युक्त श्रमिकों का चुनाव करके उनकी योग्यतानुसार इनको कार्य देते हैं। इसके बाद दूसरी बात श्रमिकों के लगाव की है। श्रमिकों में कार्य के प्रति लगाव होना चाहिए। वह उनका एक प्रकार से जीवन दर्शन होना चाहिए। जब एक कार्य जीवन दर्शन के रूप में अपना लिया जायेगा तो उसके प्रति एक अपनत्व की भावना होगी और कार्य पूरी लगन के साथ किया जायेगा। इसलिए लगाव होना आवश्यक हैं लगाव के लिए श्रमिकों के विकास का पूरा ध्यान रखना चाहिए। उनकी आर्थिक स्थिति में जैसे जैसे विकास होता जायेगा वैसे ही उद्योग से लगाव होता जायेगा। इन दोनो का सम्मिलित प्रभाव यह होगा कि श्रमिक अपनी पूरी शक्ति से कार्य करेगा। अन्त में श्रमिकों की सुरक्षा की बात आती है, साथ ही उसका सामाजिक सुरक्षा का भी उचित प्रबन्ध होना चाहिए। कभी कभी कुछ कार्यो में जोखिम होती है। कोई दुर्घटना घट जाती है। ऐसी स्थिति में यदि उनकी सुरक्षा की उचित व्यवस्था होगी तो कार्य के प्रति लगाव भी अधिक होगा। यह परिवर्तन क्रम बहुत धीरे धीरे चलता है। प्रारम्भिक स्थिति में तो चुनाव में काफी कठिनाई थी। श्रमिक प्रायः फसल कटने के समय घर चले जाते थे इससे कठिनाई होती थी। धीरे धीरे यह कम हुआ। विकास और सुरक्षा के साथ ही उनमें लगाव या अपनत्व की भावना होगी। यह सब होने पर ही श्रमिक परम्परागत समाज से औद्योगिक समाज में प्रवेश करता है।

*पूँजी :–*

आर्थिक कारकों में पूंजी का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में बिना पूंजी के उत्पादन सम्भव नहीं है। कभी कभी तो आर्थिक विकास को प्रति व्यक्ति पूंजी द्वारा भी आंका जाता है। कुछ लोग इसे अपेक्षाकृत कम महत्व देते हैं। पूंजी के महत्व के बारे में इस प्रकार दो विरोधी विचारधाराऐं प्रचलित हैं कुछ लोगों का विचार है कि विकास पूंजी से ही प्रारम्भ होता है। वाल्टर

हैलर इसको ''विकास की कुंजी'' मानते हैं। M. Abramoritz भी इसी प्रकार का विचार व्यक्त करते हैं। उनके अनुसार केवल नए ज्ञान की खोज तथा उसका प्रयोग ही पूंजी संग्रह से आर्थिक विकास के कारक के रूप में स्पर्धा कर सकता है। हैराड डोमर का विकास प्रारूप भी इसी महत्व को प्रकट करता है, कुछ लोग इसके विपक्ष में मत व्यक्त करते हैं उदाहरण के लिये नेविन (Nevin) के अनुसार पूंजी देशभक्ति की भांति पर्याप्त नहीं है। प्रोफेसर केअर्नक्रास (Cairncross) को भय है कि विकास के सन्दर्भ में पूंजी की अतिशयोन्ति की जायेगी। अपनी पुस्तक में उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि पूंजी संग्रह अपने से ही विकास को अधिक प्रभावित करता है, स्वीकार करना आवश्यक नहीं है।[1]

प्रोफेसर आर्थर लुईस भी यही बात कहते हैं कि पूंजी विकास की केवल अकेली आवश्यकता नहीं है अन्य कारकों के अभाव में पूंजी निष्प्रयोजन हो जायेगी।[2] यह लोग भी पूंजी को महत्वपूर्ण मानते हैं। लेकिन पूंजी को ही केवल महत्वपूर्ण नहीं मानते।

हर्शमैन का कहना है कि यह लोग जो पूंजी को अधिक महत्वपूर्ण मानते वे साहस तकनीकि तथा प्रबन्ध पर अधिक बल देते हैं।[3] इससे यह स्पष्ट है कि पूंजी महत्वपूर्ण है। यह भी सही लगता है कि बिना अन्य कारकों के पूंजी अधिक उपयोगी नहीं हो पायेगी। यदि कहीं तकनीकि ज्ञान बहुत निम्न स्तर पर है और पूंजी अधिक है तो पूंजी की उत्पादकता ऐसी स्थिति में कम ही होगी। प्रोफेसर रेगनर नर्क्स ने सही कहा कि पूंजी प्राप्ति के लिये आवश्यक है लेकिन पर्याप्त नहीं है।[4] लेकिन पूंजी विकास के लिये आवश्यक आवश्यकता है इसमें दो राय नहीं हो सकती है।

वास्तविकता यह कि पूंजी की मात्रा में वृद्धि होने से उत्पादन की विधियों में सुधार किया जा सकता हैं उत्पादन के Roundabout Method प्रारम्भ किये जा सकते हैं प्रगति के साथ ही साथ पूंजी संग्रह अधिक होता जाता है, फलस्वरूप अन्य क्षेत्रों में भी पूंजी का अधिक प्रयोग होने लगता है। तकनीकी विकास के लिए भी पूंजी की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि प्रोफेसर बाइनर ने आर्थिक विकास के दूसरे प्रकार के व्यवधानों में पूंजी की कमी को बताया है प्रति व्यक्ति पूंजी की मात्रा के स्थान पर प्रति व्यक्ति पूंजी के प्रयोग को प्रो. वाइनर अधिक महत्व देते हैं। पहले प्रकार के व्यवधानों में प्रोफेसर वाइनर उत्पादकता को रखते हैं।[5] अतः पूंजी से उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है निर्विवाद है।

चूकि पूंजी की सर्वसम्मत परिभाषा देना कठिन है यह कठिनाई विकासोन्मुख देशों में और भी

---

1. A.R. Cairncross : Factors in Economic Development, Geogrge Allon & Unwin - 1961 P. 75.
2. Arthur Lewis : The Theory of Economic Growth George Allen & Unwin - 1963 P 201.
3. A.O. Hirschman : The stratege of Economic Development, yale University Press 1960 P.3.
4. Ragner Nurkse : Problems of Capital formation in under development countries, oxford University Press 1955 - p. 1.
5. Jacob Viner : The Economics of Development pp-16-19 in the economics of under-development oxford university press 1968.

अधिक हो जाती है। यह कहना उचित होगा कि पूंजी पदार्थो के लिए ही विनियोग होता है। शुद्ध विनियोग में वृद्धि से तात्पर्य पूंजी पदार्थो की वृद्धि से है। किसी भी देश की कुल पूंजी, उत्पादन के उत्पादित साधनों की मात्रा से निर्धारित होगी। (Total Stock of Produced Means of Production)[1] इसके अनेक रूप हो सकते हैं। एक रूप Social overhead Capital का है जो कि प्रायः सरकारी स्तर पर ही हो पाता है। इसमें बहुत अधिक पूंजी लगती है तथा प्रतिफल दीर्घकाल में प्राप्त होता है। इससे जन कल्याण होता है। यातयात की सुविधा, बिजली, संवाद वाहन के साधन आदि सम्मिलित किए जाते हैं। इससे वातावरण में समग्र रूप से सुधार होता है। दूसरे प्रकार में यंत्र एवं उपकरण रखे जा सकते हैं। साथ ही अन्य अनेक वस्तुएं जैसे इमारत, गोदाम, संचय क्षमता आदि, भी इसमें सम्मिलित की जा सकती है। पूंजी के इन विविध रूपों को दो भागों में बांट सकते है। (i) Fixed Capital (ii) Working Capital। किसी भी उत्पादन के लिए दोनो ही आवश्यक है। यंत्र, उपकरण आदि सभी Fixed capital के वर्ग में आ जाते हैं, क्योंकि इस पूंजी की मात्रा लागत निश्चित ही है। साथ ही कार्यचालन के लिए पूंजी की आवश्यकता पड़ती है। इसको कार्यचालन पूंजी (Working Capital) कहते हैं।

जब हम पूंजी का विनियोग करते हैं तो उत्पादन में वृद्धि होती है। मान लिया यदि हम 2000 रूपये पूंजी पदार्थो पर व्यय करते हैं और इसके फलस्वरूप उत्पादन में 500 रूपये की तो वृद्धि होती है यहां पूंजी तथा उत्पादन का अनुपात 4:1 होगा। इसको पूंजी उत्पाद अनुपात कहते है। यदि हम 500 रूपये प्रति वर्ष वृद्धि चाहते हैं तो हमको 2000 रूपये पूंजी में लगाने पड़ेगे। यह अनुपात बहुत ही महत्वपूर्ण है। जहाँ यह अनुपात अधिक होगा, वहां कठिनाई अधिक होगी, क्योंकि आय में थोड़ी भी वृद्धि करने के लिए काफी पूंजी लगानी पड़ेगी। यह अनुपात कम है तो कम पूंजी से आय में अधिक वृद्धि की जा सकती है। विकासोन्मुख देशों में जहां पूंजी की कमी होती है पूंजी उत्पाद अनुपात अधिक होने पर समस्या गम्भीर हो जाती है। यह अनुपात पूरी अर्थव्यवस्था का भी हो सकता है किसी क्षेत्र विशेष का जैसे कृषि या उद्योग। यह आवश्यक नहीं है कि कृषि तथा उद्योग में पूंजी उत्पाद अनुपात एक ही हो। हम सीमान्त एवं औसत अनुपात की कल्पना कर सकते है। व्यावहारिक दृष्टिकोण से सीमान्त पूंजी उत्पाद, अनुपात, औसत पूंजी अनुपात से अधिक उपयोगी है। क्योंकि हम प्रायः यही जानना चाहते हैं कि अमुक मात्रा की आय में वृद्धि कितनी विनियोग की मात्रा में से होगी। यदि अन्य सब बाते समान रहे तब यह दोनो अनुपात बराबर होगे लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं होता है। तकनीकि में परिवर्तन होता है और इस कारण से यह दोनो अनुपात भिन्न हो जाते हें एक बात और है पूंजी पदार्थो में घिसावट भी होती है। जो पूंजी पदार्थ अधिक समय तक उपयोगी होता हें उसकी घिसावट दूसरे पूंजी पदार्थ से जिसकी उपयोगिता कम समय तक ही रहती है कम होती है। इसलिये हम शुद्ध या कुल (Net or Gross) सीमान्त पूंजी

---

1. Stephen - Enke : Economic for Development Dennis Dobson Landon 1964- P. 212.

उत्पाद अनुपात की कल्पना कर सकते हैं।[1] शुद्ध सीमान्त पूंजी उत्पाद अनुपात वह अनुपात होगा जिसमें घिसावट का व्यय सम्मिलित होगा। कुल (Gross) में यह सम्मिलित नहीं होगा।

### संगठन तथा साहस –

विकास के मानवीय कारकों में श्रम के अतिरिक्त संगठन तथा साहस आते हैं। परम्परावादी अर्थशास्त्रियों ने इनमें कोई अन्तर स्पष्ट नहीं किया। आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने इनको दो प्रकार का कार्य बताया निर्णय लेना तथा अनिश्चियता वहन करना। उत्पादन के विभिन्न साधनों का क्या संयोग रहना चाहिए ? उनको किस अनुपात में प्रयुक्त करना चाहिए ? यह सब निर्णय लेने की समस्या है। उत्पादन कार्य में जो अनिश्चयता होती है उसको वहन करने वाला साहसी होता है। पहले प्रकार की क्रियाओं को संगठन तथा दूसरे प्रकार की क्रियाओं को साहस के अन्तर्गत रखते हैं। सैद्धान्तिक दृष्टि से यह अन्तर सुगमता से किया जा सकता है लेकिन व्यावहारिक दृष्टि से इसमे कठिनाई हो सकती है। कभी कभी संगठक तथा साहसी एक ही व्यक्ति हो सकता है। इस वर्गीकरण का आधार व्यक्ति नहीं क्रियाएं है। (It is a functional classification) बड़े बड़े निगमों में साहस तो कुछ अन्य ही व्यक्ति वहन करते है और संगठक केवल प्रारम्भिक संगठन तथा प्रबन्ध के अतिरिक्त कुछ जोखम तथा उत्पादन कुछ की नवीन प्रक्रियाओं से सम्बन्धित हो जाता है। इस प्रकार से कार्यो में कुछ Overlapping हो सकती है। इसलिये दोनो पर एक साथ विचार किया जा सकता है। विकास के अन्य कारकों की तुलना में इसमें कुछ अन्तर है। हम श्रम एवं पूंजी में प्रतिस्थापन कर सकते हैं। परिस्थिति के अनुसार श्रम की मात्रा में कमी या वृद्धि अथवा पूंजी की मात्रा में परिवर्तन कर सकते हैं। इस प्रकार का प्रतिस्थापन पूंजी व श्रम का संगठन या साहस से सम्भव नहीं है। दूसरी ओर संगठन तथा साहस की मात्रा तथा गुण का विकास से सीधा एवं स्पष्ट सम्बन्ध है जितनी ही इन कारकों में कुशलता होगी, विकास की गति में वेग आयेगा। इस प्रकार विकास पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

साहसी उत्पादन की तकनीकों में परिवर्तन करके विकास कार्य में सहायता पहुंचाते हैं। उत्पादन की तकनीकी से सम्बन्धित तीन बातें महत्वपूर्ण है। जैसे, खोज (Invention) उत्पादन की नवीन प्रक्रियाऐं (Innovation) तथा अनुकरण (Imitation)। खोज करने का कार्य तथा नवीन प्रक्रियाओं को अपनाने का कार्य एक ही व्यक्ति के द्वारा हो आवश्यक नहीं है। यह स्वतंत्र क्रियाऐं भी हो सकती है जो किसी नई बात का पता लगाती है। फिर इसका जब उत्पादन की क्रियाओं में प्रयोग करते हैं। तब यह नवीन प्रक्रियाऐं (Innovation) कहलाती है। इस तकनीक को जब कुछ साहसी अपनाते है तब यह अनुकरण (Imitation) कहलाता है। विकास की प्रारम्भिक अवस्था में विकासोन्मुख अर्थव्यवस्था में प्रायः अनुकरण ही होता है। जैसे जैसे विकास में गति आने लगती है साहसी अनुकरण को छोड़कर आधुनिक खोजों के आधार पर उत्पादन की

---

1. Kindleberger : Economic Development p. 89.

नवीन प्रक्रियाओं को अपनाने का प्रयास करते है।

कुछ अर्थशास्त्रियों ने साहसियों के विकास की अवस्थाओं का अध्ययन किया है। साहसियों के विकास की अवस्थाएं उन परिवर्तनों की ओर संकेत करेगी जिनसे साहसियों में परिवर्तन होता है और विकास प्रक्रिया प्रभावित होती है। निर्णय लेने की पद्धति में सूचना तथा युक्तिकरण के समावेश के आधार पर साहसियों के परिवर्तन की अवस्थाओं का अनुमान किया जा सकता है। इस आधार पर ए.एच.कोल (A.H.Cole) ने Rule of the thums informed तथा Sophisticated[1] नामक साहसियों की तीन अवस्थाऐं बताई। प्रारम्भिक अवस्था में एक साहसी का कार्य उत्पादन का प्रबन्ध करता होता है। उपलबध साधनों श्रम पूंजी तथा कच्चे माल को एकत्र करके आर्थिक क्रियाओं को चलायमान करना ही प्रमुख लक्ष्य होता है। यंह अवस्था Rule of the thumb के अन्तर्गत आती है। धीरे धीरे वह दूसरे साहसियों का अनुकरण या श्रमिकों को कार्य सम्बन्धी प्रशिक्षण देकर कार्य में सुधार कर सकता है। यह अवस्था Informed Stage के अन्तर्गत आती है। तत्पश्चात विकास की तीसरी अवस्था आती है। जिसमें कि साहसी स्वयं अपनी प्रतिभा के सहारे प्रबन्ध करता है। इसका यह अर्थ नहीं कि पहले वह अपनी प्रतिभा का उपयोग नहीं करता था। वह स्वयं नवीन प्रक्रियाओं के बारे में नई वस्तुओं, नये बाजारों या उत्पादन के नये साधनों की दिशा में आगे बढ़ता है। यह दोनो अवस्थाओं से आगे की ही स्थिति है। इसको Sophisticated कहा जा सकता है। एक वैकल्पिक विश्लेषण साहसियों के बाजार सम्बन्धी दृष्टिकोण के आधार पर किया जा सकता है। साहसी जब प्रारम्भिक स्थिति में होता है। तब उसका दृष्टिकोण एक स्थानीय बाजार तक ही सीमित रह सकता है। फिर जैसे जैसे विकास होता है वह एक इकाई की नहीं वरन समूचे उद्योग के बारे में सोचने लगता है कि उस उद्योग में उसका क्या स्थान है उत्पादन का कितना भाग वह स्वयं उत्पादित करता है? अपनी इकाई का महत्व बढ़ाने के लिए तकनीकी विकास आदि सभी बातों का ध्यान रखता है। स्पष्ट है कि उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन होता है। पहले वह संकुचित था अब कुछ विस्तृत होता है। साहसी धीरे धीरे फिर समूचे राष्ट्र के बारे में सोचने लगता है। वह राष्ट्रीय बाजार की ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भी पहुंचने का प्रयत्न कर सकता हैं इस प्रकार साहसियों के दृष्टिकोण में क्रमशः परिवर्तन है जो उनके विकास की विभिन्न अवस्थाओं का ही घोतक है।

अल्प–विकसित देशों में पूंजी का अभाव वहां के आर्थिक विकास में एक बहुत बड़ी बाधा है। देश के आर्थिक विकास के लिए त्याग अनिवार्य हे। पूंजी निर्माण की दर को सदैव ही बहुत बढ़ाना पड़ता है यह दर इतनी बढ़ जानी चाहिए जिससे कि राष्ट्र आसानी से अभ्युदय की अवस्था (Take of stage) से स्वयं स्फूर्त विकास अवस्था में प्रवेश कर जाए। विकास की इसी प्रणाली को ही भारत में अपनाया गया है।[2]

---

1. A.H. Cole's "A New set of stages in Explorations in Entreprenerial History. December. 1955.
2. भारतीय अर्थव्यवस्था : डॉ0 अरविन्द पाल सिंह मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ आकदमी भोपाल पृ0 85।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में लिखा गया कि "यदि यह बात वांछित नहीं समझी जाए कि पूंजी निर्माण की दर बढ़ाने के लिये आरम्भ में ही उपयोग के स्तर में कमी कर दी जाए क्योंकि जनता को इससे को इससें बहुत कष्ट होगा, तो नीति का उद्देश्य यह अवश्य होना चाहिये कि अतिरिक्त आय का अधिकतर भाग जो कि विकास का परिणाम ही है बचाकर विनियोग कार्य में लगाया जाए। इसका अर्थ यह होगा कि इस प्रकार आरम्भिक उपयोग स्तर तो कम दर पर धीरे धीरे बढ़ेगा परन्तु उपभोग स्तर पर दबाव पहले से कम नहीं होगा, और इसमें मर्यादित मात्रा में उन्नति की अनुमति भी दी जा सकती है। दूसरे शब्दों में पूंजी निर्माण बढ़ाने के इस प्रोग्राम में निरन्तर मितोपभोग (Sustained Austerity) का सुझाव दिया गया है न कि अत्यधिक कष्ट एवं वेदना का।"[1]

कुछ अर्थशास्त्री यह मानते है कि मन्द गति के प्रयासों से विकास की दर ऊंची नहीं हो पाती। इसके लिये महान प्रयास सिद्धान्त (Theory of Big Push) के रास्ते को अपनाकर ही विकास दर की गति को बढ़ाया जा सकता है। प्रोफेसर रोजेनस्टीन रोडन का विचार है कि किसी भी अर्थव्यवस्था को स्वयं स्फूर्त विकास की अवस्था (Self generating growth stage) में लाना उसी प्रकार है जैसे एक रूकी हुई मोटर कार को चालित करना। उसको चलाने के लिए यह आवश्यक है कि उसे एक साथ बहुत जोर का धक्का लगाया जाए।[2]

इस अध्ययन की विवेचना से निष्कर्ष यह निकलता है कि विकास का नियोजन और कार्यान्वयन कुछ आधारभूत तत्वों को ध्यान में रखकर करना चाहिए। समकालीन सन्दर्भ में विकास के लिये निम्नलिखित तत्वों का समावेश आवश्यक है।

(1) प्रभावशाली आर्थिक कार्यक्रम जो उत्पादन वृद्धि को सुनिश्चित करे,

(2) सामाजिक न्याय, आय, उत्पाद और सार्वजनिक सेवाओं की दृष्टि से,

(3) पारिस्थितिकी, प्रज्ञान, सीमित संसाधनों के अपव्यय और पर्यावरण के प्रदूषण को रोक सकने की दृष्टि से,

(4) सांस्कृतिक संवेदनशीलता, लक्ष्यों के निर्धारण और कार्य विधि के संचालन में

(5) लोकतंत्रीकरण और सहभागिता : वैकासिक निर्णयों और उनके क्रियान्वयन में

(6) देशज ऊर्जा को प्रोत्साहन, समस्याओं के हल और विज्ञान और प्रविधि के अनुकूलन में

(7) आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक वहनीयता, जो इन क्षेत्रों को संघर्ष मुक्त रख अविरल विकास प्रक्रिया को सम्भव बनाएं।

(8) सामाजिक समाकलन तथा सामंजस्य की दृष्टि से समर्थ, जो राष्ट्र निर्माण और नियंत्रित विश्व व्यवस्था के विकास में सहायक हों।[3]

---

1. First Five year plan P. 17
2. Notes on the theory Big push in Economic Development for Latin America By P.N.R. Rodan P. 67.
3. विकास का समाजशास्त्र – श्यामाचरण दुबे, वाणी प्रकाशन पृ0 180।

यदि हम किसी सरपंच (प्रधान) पंचायत सदस्य या पंचायत सचिव नगर पालिका अध्यक्ष विधान सभा सदस्य लोकसभा सदस्य आदि से पूंछे कि आप अपने कार्यकाल में क्षेत्र का क्या करना चाहते हैं तो उनका उत्तर एक होगा विकास। संक्षेप में विकास बदलाव की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के कारण है : उत्पादन का बढ़ना आमदनी का बढ़ना, स्वास्थ्य में सुधार होना यातायात के साधनों को बढ़ावा देना वातावरण में सुधार लाना। इन कारकों का अन्तिम उद्देश्य जीवन की गुणवत्ता में इजाफा (उन्नति) करना है।

लेकिन गांव में विकास का अर्थ निर्माण कार्यो से है। अगर किसी प्रधान या अन्य किसी जनप्रतिनिधि से पूछा जाय कि अपने कार्यकाल में विकास के क्या क्या कार्य किए हैं तो उनका जबाव होगा खडंजा बनवाया सड़क पर मिट्टी डलवाई कुंआ खुदवाया मकान बनवाए बिजली का कनैक्शन लगवाया, पंचायत घर बनवाया आदि। हां वैसे तो ये भी विकास के ही कार्य हैं लेकिन सम्पूर्ण विकास के कार्य नहीं हैं क्योंकि इस तरह के विकास कार्यो से क्या लाभ यदि गांव में महिला बच्चे व पुरूष अनपढ़ हैं। गांव में बच्चे व महिला कुपोषण का शिकार हो गांव में लोग दस्त खून की कमी आदि बीमारियों से पीड़ित हों। बच्चों की कम उम्र में ही शादी हो जाती हो। गांव में पीने का पानी शुद्ध न हो। घर में शौचालय न हो। सोचो यदि इन सड़कों खड़जों पर चलने वाले महिला पुरूष व बच्चे बीमार हो तो ऐसे विकास कार्यो से क्या लाभ ।[1]

इस तरह की विकास धारणा को जहन में लिए हुए क्या हमारे बच्चे शहर देश व विदेश के बच्चों से प्रतियोगिता कर पाऐंगे। नहीं। इसलिए विकास की व्यापक सोच को अपनाकर गांव के समग्र विकास के लिए निर्माण कार्यो के अलावा स्वास्थ्य व पोषण शिक्षा, चिकित्सा, रोजगार व महिलाओं में जागृति जैसे कारकों को भी विकास की परिधि में लेना होगा। इस प्रकार की विकास की धारणा को मानकर ही जनप्रतिनिधियों को इन सुविधाओं के वर्तमान स्तर का जायजा लेना होगा। वित्तीय संसाधनों के आधार पर गांव की विकास की योजना बनाते समय इन कारकों को उचित स्थान देना होगा तभी ग्राम विकास की अवधारणा सफल हो सकती है।

---

1. ग्रामीण योजनाऐं व पंचायती राज : डॉ0 महीपाल पृ0 6 ।

# अध्याय - द्वितीय

# भारतीय अर्थव्यवस्था

- भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताऐं
- भारतीय अर्थव्यवस्था विकासशील अर्थव्यवस्था के रूप में
- प्रो. अमर्त्य सेन का अर्थशास्त्र

# भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषतायें - .

भारत एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था है इसमें सन्देह नहीं कि भारत की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग दीनता (Destitution) की अवस्था में रह रहा है, भारत में निर्धनता का रोग तीव्र होने के साथ चिरस्थायी भी है। इसके साथ ही भारत में अप्रयुक्त प्राकृतिक संसाधन विद्यमान है इसलिए भारत को विश्व के अल्पविकसित देशों में से एक मानते हुए इसकी मूल विशेषताओं को समझना बहुत महत्वपूर्ण है। –

अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाओं में प्रति व्यक्ति आय निम्न होती है। सन 2000 में भारत की प्रति व्यक्ति आय 460 डालर थीं। चीन की 780 डालर प्रति व्यक्ति आय भारत की प्रति व्यक्ति आय से अधिक थीं। कुछ देशो को छोड़कर भारतवासियों की प्रतिव्यक्ति आय विश्व में निम्नतम है। स्विट्ज़रलैण्ड की प्रति व्यक्ति आय सन् 2000 में स्थूल रूप में भारत की आय का लगभग 83 गुना, संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रति व्यक्ति आय सन् 74 गुना है। ध्यान देने योग्य बात है कि 1960 में संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रति व्यक्ति आय भारत की प्रति व्यक्ति आय की तुलना में 36 गुना थीं। जाहिर है कि विकसित अर्थव्यवस्था भारतीय अर्थव्यवस्था की तुलना में तेजी से प्रगति कर रही है और परिणामतः इन देशों के आय स्तर में असमानता की खाई और चौड़ी होती जा रही है।

सारणी – 1

चुने हुए देशों की प्रति व्यक्ति आय (सन् 2000 में )[1]

| देश | विनिमय दर के आधार पर | क्रय शक्ति के आधार पर |
|---|---|---|
| स्विटरजलैण्ड | 38120 | 30350 |
| यू.एस.ए. | 34260 | 34260 |
| जर्मनी | 25050 | 25010 |
| यू.के. | 24500 | 23550 |
| जापान | 34210 | 26460 |
| भारत | 460 | 2390 |
| चीन | 860 | 3940 |

संयुक्त राष्ट्र द्वारा तैयार किए गए आकड़े औपचारिक विनिमय दर (Exchange Rate) पर प्राक्कलित किए गए हैं। आई.बी. क्रेविस (I.B. Kravis) एवं अन्य अर्थशास्त्रियों ने यह सुझाव रखा कि वास्तविक उत्पादन की तुलना के लिए विभिन्न करेंसियों की क्रयशक्ति (Purchasing Power) को आधार बनाना चाहिए। यू.एस.ए. की प्रति व्यक्ति आय जो औपचारिक विनिमय दर पर भारत की आय का 74 गुना थी क्रय शक्ति के रूप में घटकर केवल 14 गुना रह गयी, चाहे इसके परिणाम स्वरूप प्रति व्यक्ति आय के अन्तर कुछ हद तक कम हो गए हैं, परन्तु फिर भी विकसित देशों और भारत जैसे अल्पविकसित देश के जीवन स्तर में अन्तर काफी बड़ा

---

1. श्रोत : World Development Report (2002) से प्राप्त।

एवं महत्वपूर्ण है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था की विशेषता इसका प्राथमिक उत्पादन शील (Primary Producing) होना है, प्राथमिक उत्पादन का इस प्रंसग में अर्थ उत्पादन के ढांचे में कच्चे माल तथा खाद्य के उत्पादन का प्रधान होना है। दूसरे शब्दों में कार्यशील जनसंख्या (Working Population) का एक वहुत बड़ा भाग कृषि में लगा रहता है और राष्ट्रीय आय में कृषि के योगदान का अंश बहुत बड़ा होता है। भारत में 1999 में कार्यकारी जनसंख्या का लगभग 61 प्रतिशत कृषि में लगा हुआ था और राष्ट्रीय आय में इसका योगदान लगभग 28 प्रतिशत था। एशिया, अफ्रीका और मध्यपूर्ण के देशों में 66 प्रतिशत से लेकर लगभग 80 प्रतिशत से कुछ अधिक जनसंख्या कृषि से अपनी जीविका अर्जित करती है और बहुत से लेटिन अमेरिकी देशों में दो तिहाई से तीन चौथाई जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, विकसित देशों में कृषिरत जनसंख्या का अनुपात अल्पविकसित देशों में कृषिरत जनसंख्या के अनुपात से कम है। परन्तु कृषि उत्पाद कुल राष्ट्रीय उत्पादन का बहुत बड़ा भाग है। उद्योगो के भाग का अपेक्षाकृत कम महत्व है। कृषि क्षेत्र से प्राप्त आय का भाग कृषि में नियुक्त जनसंख्या के भाग की तुलना में कम है इसका मूल कारण कृषि में प्रतिव्यक्ति निम्न उत्पादकता (Low productivity) है। व्यावसायिक ढांचे की दृष्टि से भारतीय अर्थव्यवस्था प्राथमिक उत्पादनशील है, क्योंकि राष्ट्रीय आय में कृषि का भाग लगभग 28 प्रतिशत है और भारत में प्रत्येक 10 रोजगार प्राप्त व्यक्तियों में से 6 कृषि में लगे हुए हैं, फिर भी कृषि एक मन्द उद्योग (Depressed Industy) माना जाता है, क्योंकि इसमें संलग्न जनसंख्या की प्रतिव्यक्ति उत्पादकता बहुत कम है।

जन्म और मृत्यु की ऊँची दर अल्पविकसित देश की मुख्य समस्या है, जब किसी देश की अर्थव्यवस्था में जन्मदर तथा मृत्युदर दोनो ऊँचे होते हैं, तो इस कारण जनसंख्या की वृद्धि अपेक्षाकृत कम होती है। किन्तु स्वास्थ्य सुविधाओं और उत्तम सफाई व्यवस्था के प्रसार और निरोधात्मक तथा उपचारात्मक औषधियों के प्रयोग के कारण मृत्युदर कम होने लगती है। इसके परिणाम स्वरूप जनसंख्या में वृद्धि की दर बढ़ जाने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस समय भारत ऐसी ही स्थिति से गुजर रहा है। 1941–50 के दौरान जनसंख्या वृद्धि की दर लगभग 1.31 प्रतिशत प्रतिवर्ष थी किन्तु 1981–2001 की अवधि में यह बढ़कर 1.93 प्रतिशत हो गई। जनसंख्या की इस तीव्र वृद्धि का कारण मृत्युदर में कमी होना है। 1911–20 के दौरान मृत्युदर 48.6 प्रति हजार रह गई थी, किन्तु 1999 के दौरान यह घटकर 8.7 प्रति हजार रह गई। इसकी तुलना में जन्मदर 1911–20 की अवधि में 49 प्रति हजार थी जो 1999 में घटकर 26.1 प्रति हजार हो गई। जनसंख्या की वृद्धिदर की तीव्रता के कारण विकास दर उन्नत करने की आवश्यकता पड़ती है, ताकि जनता का पहले जैसा जीवनस्तर बनाये रखा जा सके। चुकिं जनसंख्या समाज का दायित्व है, इसलिए खाद्य, वस्त्र, आवास, औषधि, शिक्षा आदि सभी की आवश्यकताओं में वृद्धि होती है। परिणामतः बढ़ती हुई जनसंख्या का देश पर अधिक आर्थिक भार पड़ता है। और इस कारण समाज को विकास प्रक्रिया प्रोन्नत करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रयास करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण श्रम शक्ति में वृद्धि होती है। भारत में यह स्थिति विशेष रूप से दिखाई पड़ती है। भारत में श्रम प्रचुर तत्व (Abundand factor) होता

है, परिणामतः समस्त कार्यकारी जनसंख्या को लाभकारी रोजगार दिलाना बहुत कठिन होता है। विकसित देशों में बेरोजगारी की प्रकृति चक्रिक होती है और समर्थ मांग के अभाव मे ही बेरोजगारी उत्पन्न होती है। अल्पविकसित देशों में बेरोजगारी का स्वरूप संरचनात्मक होता है तथा इसका कारण पूंजी की कमी होना है। अर्थव्यवस्था अपने उद्योगों का इतना विस्तार करने के लिए कि उनमें सम्पूर्ण श्रमशक्ति खपाई जा सके, पर्याप्त पूंजी जुटा नहीं पाती है।

इसके अतिरिक्त भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र में उत्पादन में संलग्न श्रमिकों की संख्या वास्तविक आवश्यकता से बहुत अधिक है। इस प्रकार निर्वाह क्षेत्र अर्थात कृषि में श्रम का सीमान्त उत्पादन, नगण्य, शून्य अथवा नकारात्मक है। अतः कृषि में अदृश्य अथवा गुप्त बेरोजगारी वर्तमान में है। अतिरिक्त जनसंख्या को हटा देने पर भी कृषि के कुल उत्पादन में कमी नहीं आएगी क्योंकि उस अवस्था में उन श्रमिकों का पूर्ण उपयोग किया जा सकेगा, जो अभी तक अपनी क्षमता से कम काम कर रहे थे।

भारत को बेरोजगारी और अल्प रोजगार की समस्या का भी सामना करना है, यद्यपि यह सच है कि शहरी क्षेत्रों में खुली बेरोजगारी अधिक मात्रा में विद्यमान है ''ग्रामीण क्षेत्र बेरोजगारी और अल्परोजगार की समस्या से पीड़ित है, इस सम्बन्ध में तीसरी पंचवर्षीय योजना में उल्लेख किया गया है कि ''ग्रामीण क्षेत्रो में बेरोजगारी और अल्परोजगार साथ साथ विद्यमान है। उनमें किसी भी प्रकार से भेद प्रखर नहीं है। गांवो में साधारणतया बेरोजगारी, अल्परोजगार का रूप धारण कर लेती है व्यस्त मौसम दौरान कृषि में देश के अनेक भागों में श्रम की कमी दिखाई पड़ती किन्तु वर्ष के अधिकांश भाग में कृषि श्रमिकों और सम्बद्ध क्रियाओं में संलग्न अन्य लोगों को लगातार रोजगार नहीं मिल पाता। परिणामस्वरूप श्रमिक गांवो से नगरों को चले आते हैं, जिसके कारण शहरी क्षेत्रों में बेरोजगारी बढ़ जाती है। वास्तव में शहरी और ग्रामीण बेरोजगारी एक ही अविभाज्य समस्या के दो पहलू हैं''[1]

नौवीं योजना के आरम्भ के समय, खुली बेरोजगारी का आपात कुल श्रमशक्ति का 2. 02 प्रतिशत था। इसके अतिरिक्त श्रमशक्ति का 8.43 प्रतिशत अल्प रोजगार में ग्रस्त है, यदि बेरोजगारों और अल्परोजगार को एक साथ मिला लिया जाए तो इस समस्या में श्रमशक्ति का 10.45 प्रतिशत ग्रस्त है। इसके अतिरिक्त 1997–2002 की अवधि के दौरान श्रमशक्ति में 530 लाख व्यक्तियों की वृद्धि होगी। अतः बेरोजगारी और अल्परोजगार से ग्रस्त जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध कराना भारत में आयोजन प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य माना जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था के अल्पविकास का एक अन्य मूल कारण पूंजी का अभाव है, जो दो रूपों में प्रकट होता है प्रथम प्रति व्यक्ति उपलब्ध पूंजी की निम्न मात्रा, और द्वितीय पूंजी निर्माण की प्रचलित निम्नदर। अल्पविकसित देशों में प्रति व्यक्ति उपलब्ध पूंजी की कमी के दो महत्वपूर्ण सूचक कच्चा

---

1. Planning Commision : Third five year Plan P. 154.

इस्पात और विद्युत शक्ति का उत्पादन सारणी 2 में प्रदर्शित है।

सारणी – 2

कुछ देशों में इस्ताप तथा बिजली का उपभोग

| देश | कच्चे इस्पात का प्रति व्यक्ति उत्पादन (1987) किग्रा. | ऊर्जा का प्रति व्यक्ति उपभोग 1999 (तेल तुल्य किलोग्राम) |
|---|---|---|
| संयुक्त राज्य अमेरिका | 417 | 8.076 |
| इंग्लैण्ड | 259 | 3.863 |
| जापान | 582 | 4.084 |
| चीन | 64 | 907 |
| भारत | 20 | 479 |

स्रोत : World Devlopment Report (2000-01) से संकलित

उपर्युक्त आंकड़े स्पष्ट रूप से यह निर्देश करते है कि उन्नत देशों की तुलना में भारत में इस्पात का प्रति व्यक्ति उत्पादन और ऊर्जा का प्रति व्यक्ति उपभोग बहुत ही कम है। इसी प्रकार निम्न देशों में कुल देशीय विनियोग और बचत की स्थिति सारणी 3 में देखी जा सकती है।

सारणी – 3

कुल देशीय उत्पाद के प्रतिशत के रूप में

| देश | कुल देशीय विनियोग | | कुल देशीय बचत [1] | |
|---|---|---|---|---|
| | 1990 | 199 | 1990 | 1999 |
| जापान | 32 | 29 | 33 | 30 |
| आस्ट्रेलिया | 21 | 22 | 21 | 21 |
| जर्मनी | 23 | 21 | 23 | 23 |
| यू.एस.ए. | 17 | 19 | 15 | 17 |
| यू.के. | 19 | 16 | 17 | 15 |
| भारत | 25 | 24 | 22 | 20 |

इसके अतिरिक्त भारत में पूंजी निर्माण की प्रचलित दर भी कम है संयुक्त राष्ट्र संघ के विश्व आर्थिक सर्वेक्षण "World Economic Survey" में कुल पूंजी निर्माण के आकड़ों से यह संकेत मिलता है कि विकसित देशों की तुलना में अल्पविकसित देशों में कुल पूंजी निर्माण कम है। प्रोफेसर कोलिन क्लार्क (Colin Clark) के अनुसार यदि किसी देश की जनसंख्या एक प्रतिशत की दर से बढ़ रही हो तो उसे अपने वर्तमान जीवन स्तर को कायम रखने के लिए 4 प्रतिशत प्रतिवर्ष अतिरिक्त विनियोग की आवश्यकता पड़ेगी। भारत जैसे देश में जहां जनसंख्या की वृद्धि दर 2.0 प्रतिशत है। (1981–98 के दौरान) बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण उत्पन्न अतिरिक्त भार को संभालने के लिए लगभग 8 प्रतिशत तक पूंजी निर्माण की आवश्यकता है।

1. World Bank : World Development Report (2000-01)

इस प्रकार भारत जैसे निर्धन देश को मूल्यहास की पूर्ति और पूर्ववत् जीवन स्तर को बनाए रखने के लिए 14 प्रतिशत तक पूंजी निर्माण की आवश्यकता पड़ती है।अतः आर्थिक विकास के लिए कुल पूंजी – निर्माण की दर को और अधिक ऊंचा उठाना आवश्यक है। ताकि जनता के जीवन स्तर को उन्नत किया जा सके। बढ़ती हुई जनसंख्या के सन्दर्भ में वर्तमान पूंजी निर्माण [illegible] काफी उंची है, पर यह पर्याप्त नहीं। 1998 में कुल देशीय विनियोग का 23 प्रतिशत तक पहुंच जाना अभिनन्दनीय है।[1]

❖ भारतीय रिजर्व बैंक के जुलाई 1991 से जून 1992 तक के लिए ग्राम तथा शहरी परिवारों की परिसम्पत के सर्वेक्षण में परिसम्पत वितरण में तीव्र असमानता विद्यमान होने का पता चलता है ग्राम क्षेत्रों में 27 प्रतिशत परिवारों जिनकी सम्पत्ति 20000 रूपये से कम थी के पास कुल परिसम्पतों का केवल 2.4 प्रतिशत था, इसी प्रकार 24 प्रतिशत परिवार जो 20000 से 50000 रूपये की अभिसीमा में थे के पास कुल परिसम्पत का केवल 7.5 प्रतिशत था। इसका अर्थ यह हुआ कि लगभग 51 प्रतिशत परिवारों का कुल परिसम्पत में भाग केवल 10 प्रतिशत ही था, इसके विरूद्ध 9.6 प्रतिशत समृद्ध परिवार जिनमें प्रत्येक के पास 2.5 लाख रूपये से अधिक परिसम्पत थी, के पास कुल परिसम्पत का 49 प्रतिशत था।

❖ अल्पविकसित अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण लक्षण उसकी मानव पूंजी की घटिया किस्म है। मानवीय संसाधनों पर बहुत अधिक विनियोजन करना पड़ता है। स्वास्थ्य, शिक्षा, सामाजिक, सुरक्षा, सामाजिक सेवाओं और समाज कल्याण पर किया गया व्यय मनुष्यों पर किया गया व्यय होता है। अधिकांश अल्पविकसित देशों में व्यापक निराक्षरता विद्यमान है निराक्षरता विकास की अवरोधक है। सामाजिक समस्याओं की जानकारी के लिए शिक्षा का न्यूनतम स्तर आवश्यक होता है। ग्रामीण क्षेत्र जहां अशिक्षा का साम्राज्य फैला हुआ है, सभ्यता से अछूता है और अन्धविश्वास, सामाजिक प्रतिन्धबन्ध और रूढ़िवाद को केन्द्र है। भाग्यवाद दुख को जीवन का अंग स्वीकार करने की भावना और प्रारब्ध में विश्वास व्यापक अशिक्षा से सम्बद्धित है। किन्तु पूंजी निर्माण की परिभाषा का इस रूप में विस्तार कर लिया जाए कि भावी उत्पादन में योग देने वाले सभी साधन समाविष्ट हो सके तो भौतिक पूंजी के अतिरिक्त जनता का ज्ञान औरप्रशिक्षण भी पूंजी का अंग बन जाऐंगे। यही कारण है कि शिक्षा कौशल निर्माण, अनुसंधान और स्वास्थ्य सुधार पर किया गया व्यय राष्ट्रीय पूंजी (National Capital) में समाविष्ट किया जाता है। विश्व के अन्य देशो की तुलना में भारत के अल्पविकास के कुछ सूचक है, भारत में शिक्षा और अनुसंधान पर 1997 में खर्च कुल राष्ट्रीय उत्पाद का 3.2 प्रतिशत है। इसकी तुलना में संयुक्त राज्य अमेरिका में शिक्षा पर व्यय कुल राष्ट्रीय उत्पाद का 5.4 प्रतिशत है।

---

1. भारतीय अर्थ व्यवस्था–रूद्र दत्त एवं के0पी0 एम0 सुन्दरम ।

संयुक्त राष्ट्र विकास प्रोग्राम ने देशों को मानवीय विकास सूचकांक के आधार पर स्थान दिया है। इस सूचकांक का आधार जीवन प्रत्याशा, प्रौढ़ साक्षरता स्कूल में शिक्षा के औसत वर्ष और वास्तविक प्रतिव्यक्ति कुल देशीय उत्पाद है। यह बात बड़ी निराशाजनक है कि 1999 में उस सूचकांक के आधार पर भारत का नम्बर 115 है, जबकि चीन का 87 है जाहिर है कि मानवीय विकास सूचकांक के रूप में विकसित देशों के स्तर तक पहुंचने के लिए भारत को अभी एक लम्बा सफर तय करना है।

❖ अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाऐं तकनीकि पिछड़ेपन से ग्रस्त होती हैं, इसमें सन्देह नहीं कि भारत जैसी अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में एक ही उद्योग में नितान्त अविकसित तकनीक के साथ साथ आधुनिक तकनीक का प्रयोग भी किया जाता है। परन्तु अधिकांश उत्पादन इकाइयों में घटिया तकनीक का प्रयोग होता है। विकास के अभाव में अल्पविकसित देश उत्पादन के उन पुराने और प्रचलित तरीकों का प्रयोग करते चले जाते हैं, जिन्हें यूरोप तथा अमेरीका के उन्नत देश पहले ही छोड़ चुके हैं। अल्पविकसित क्षेत्रों में कम उत्पादिता के प्रमुख कारणों में अविकसित तकनीक एक उल्लेखनीय कारण है। इसलिए यह आवश्यक है कि नई तकनीकें उत्पादन की अधिकाधिक इकाइयों तक पहुंचाई जाएं ताकि इनका अर्थव्यवस्था में विस्तार हो सके। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था में नई तकनीकों को ग्रहण करने की समस्या विद्यमान है।

चूंकि नई तकनीकें महंगी हैं, और उत्पादन में उनके प्रयोग के लिए काफी मात्रा में कुशल श्रमिकों की आवश्यकता होती है, इसलिए नई तकनीकों के भारी मात्रा में प्रयोग करने की दो शर्ते हैं (1) इनके क्रय के लिए पूंजी की उपलब्धि और (2) काफी संख्या में श्रमिकों का प्रशिक्षण। नई तकनीक को अपनाने के लिए उत्पादकों के लिए शिक्षा का एक न्यूनतम स्तर प्राप्त करना अनिवार्य है। परन्तु अल्पविकसित देशो में ये परिस्थियां विद्यमान नहीं हैं। पूंजी के अभाव के कारण पुरानी तकनीकों को छोड़कर नई तकनीकों को अपनाने में रूकावट पैदा हो जाती है, निराक्षता और कुशल श्रमिकों का अभाव नई तकनीक के प्रसार में अन्य मुख्य बाधाएं हैं।

भारतीय कृषि में प्रति एकड़ निम्न उत्पादिता और कृषि एवं उद्योगो के क्षेत्र में प्रति श्रमिक निम्न उत्पादिता का प्रमुख कारण पिछड़ी तकनीक का प्रयोग ही है। भारत में कृषक इतने निर्धन है कि फसल काटने की मशीन, ट्रैक्अर और बुवाई की मशीन आदि अपेक्षाकृत मंहगी उत्पादन वस्तुओं की तो बात ही क्या वे अच्छे बीज, उर्वरक और कीटनाशक आदि सस्ती उत्पादक वस्तुए भी खरीद नहीं पाते। उद्योग के क्षेत्र में भी भारत में सबसे बड़ी संख्या, उन उद्योगों की है जिनका संचालन या तो वैयक्ति आधार पर किया जाता है या साझेदारी के आधार पर है। साथ ही यह भी सत्य है कि आधुनिक तकनीक के प्रयोग की छोटे उद्योगो के पास सामर्थ्य नहीं इस प्रकार यह आवश्यक है कि भारत में जहां पूंजी विनियोग की मात्रा बढ़ायी जाये, वहां यह भी अनिवार्य हो कि उन्नत तकनीक को सभी स्तरों पर अपनाया जाए, विशेषकर छोटे पैमाने के उद्योगों को रियायती दरों पर उधार उपलब्ध कराके उन्हें उन्नत तकनीक अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

❖ भारत में अधिकतर जनता को संतुलित भोजन प्राप्त नहीं होता और इसकी अभिव्यक्ति कैलोरी तथा प्रोटीन के निम्न उपभोग में मिलती हैं। जहां अधिकतर विकसित देशों में खाद्य का औसत कैलोरी उपभोग 3400 से अधिक हैं, वहां भारत में यह केवल 2415 है, जीवन को कायम रखने के लिए 2100 कैलोरी के न्यूनतम स्तर से यह थोड़ा सा अधिक है। चुंकि 37 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा (Poverty line) के नीचे रहती है इसलिये इस बात में भी बहुत संदेह है कि गरीब जनता 2100 कैलोरी का न्यूनतम उपभोग भी प्राप्त कर पाती है या नहीं, जनता के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालने वाला एक और महत्वपूर्ण कारण यह है कि भारतीय भोजन अनाज प्रधान है, इसके विरूद्ध विकसित देशों के लोगों के भोजन में पुष्टिकर पदार्थो अर्थात् फल, मछली, अण्डा, गोश्त, मक्खन, चीनी आदि की अधिक मात्रा उपलब्ध होती है। उन्नत देशो की तुलना में प्रोटीन का उपभोग भी लगभग आधे से कम ही है।

❖ अल्पविकास के साथ सम्बन्धित जनाकिकीय लक्षणों में जनसंख्या का अधिक घनत्व 0–15 आयुवर्ग में जनसंख्या का एक बड़ा अनुपात और कार्यकारी आयुवर्ग अर्थात 20 से 60 वर्ष की बीच जनसंख्या का कम अनुपात शामिल है। इसके अतिरिक्त जीवन की औसत प्रत्याशा कम होती है, और शिशु मृत्युदर अधिक होती है। भारत के सन्दर्भ में पता चलता है कि जनसंख्या का घनत्व वर्ष 2001 में 324 प्रति वर्ग किलोमीटर था, इसके विरूद्ध विश्व में औसत जनघनत्व 46 प्रति वर्ग किमी0 है। यू0एस0ए0 में जनघनत्व 30 है कनाडा और आस्ट्रेलिया में तो यह केवल 3 प्रति वर्ग किमी है। चीन में भी जनघनत्व 134 प्रति वर्ग किमी0 है। जाहिर है कि अधिक ज़नघनत्व होने के कारण भूमि तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर अपेक्षाकृत अधिक भार पड़ता है।

1991 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या का 36.5 प्रतिशत 0–14 आयुवर्ग में है, 57 प्रतिशत कार्यकारी आयु वर्ग अर्थात 15 से 59 के बीच और केवल 6.4 प्रतिशत 60 और उससे ऊपर के आयु वर्ग में है। दूसरे शब्दों में भारत में उन्नत देशों की तुलना में बच्चो का अनुपात अधिक हैं जाहिर है कि यह परिस्थिति निर्भरता भार को बढ़ाती है क्योंकि अनुत्पादक जनसंख्या का आकार तथा अनुपात दोनो अधिक है ऐसी परिस्थिति में अधिक जनसंख्या वृद्धिकाल के दौरान बनी रहती है परन्तु जैसे जनसंख्या की वृद्धि दर धीमी हो जाती है यह परिस्थिति उत्पादक जनसंख्या के पक्ष में परिवर्तित हो जाती है जनसंख्या का अत्यधिक निर्भरता भार अल्पविकास का एक विशिष्ट लक्षण है।

निम्न प्रति व्यक्ति आय, निम्न भोजन स्तर, सन्तुलित भोजन का अभाव, घटिया मकान, और रहन सहन की बुरी दशाएं ये सभी स्वास्थ्य के स्तर को नीचा रखने की ओर ही क्रियाशील होती हैं इस घटनाचक्र की अभिव्यक्ति जीवन की निम्न प्रत्याशा और उच्च शिशु मृत्युदर में पायी जाती हैं भारत में 1991 में औसत प्रतिशत आयु 57 वर्ष थी जबकि विकसित देशो में यह 75 वर्ष थी इसी प्रकार भारत की शिशु मृत्युदर 1990 में 91 प्रति हजार थी, जबकि विकसित देशों में यह 5 से 7 प्रति हजार थी।

भारत की लगभग 25 से 40 प्रतिशत जनसंख्या कुपोषण की शिकार है, भारतीय भोजन में प्रति दिन औसतन 44 ग्राम प्रोटीन प्राप्त होती है, जबकि उन्नत देशो में यह मात्रा तिगुनी है भारत मे 1960 में दूध की प्रति व्यक्ति उपलब्धि 46 किलोग्राम थी, जो 1997–98 में बढ़कर 75 किलोग्राम हो गयी है। परन्तु यह अब भी विकसित देशों की तुलना में कम हैं। 1996 में 85 प्रतिशत जनसंख्या को पीने का सुरक्षित पानी प्राप्त न था। जिसके कारण जनता की बीमारियों का मुकाबला करने की शक्ति कम हो गयी और यह तत्व भारतीय श्रमिकों की निम्न कुशलता के लिए एक हद तक जिम्मेदार है।

राष्ट्रीय बिल्डिंग संगठन के अनुसार भारत में मार्च 1991 के अन्त तक 310 लाख मकानों की कमी थीं 206 लाख ग्रामीण क्षेत्रों में और 104 शहरी क्षेत्रों में बड़े शहरों में गन्दी बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या भयानक रूप धारण कर गयी हैं, उदाहरणार्थ 1990 में कुल जनसंख्या के प्रतिशत के रूप में मुख्य नगरों में गन्दी बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या का अनुपात इस प्रकार था कलकत्ता 40 प्रतिशत, मुम्बई 42 प्रतिशत, चैन्नई 39 प्रतिशत, और दिल्ली 38 प्रतिशत।

❖ अल्पविकास की अभिव्यक्ति कई सामाजार्थिक सूचकों द्वारा होती है, अर्थात प्रति व्यक्ति कैलोरी उपभोग प्रति हजार जनसंख्या के लिए डाक्टर, मोटर गाड़ियों, टेलीफोन या टी.वी. सेटो की मात्रा आदि सारणी 4 में प्रदर्शित है।

सारणी – 4

कुछ चुने हुए देशों के रहन सहन के सामाजार्थिक सूचक (1999)

| देश | प्रतिव्यक्ति दैनिक उपभोग | | | प्रत्येक 10000 जनसंख्या के लिये | |
|---|---|---|---|---|---|
| | चरबी | प्रोटीन | कैलोरी | टी.वी. | डाक्टर |
| | ग्राम | ग्राम | | | |
| भारत | 45 | 59 | 2.496 | 69 | 0.4 |
| चीन | 71 | 77 | 2.897 | 272 | 2.0 |
| जापान | 83 | 96 | 2.932 | 707 | 7.3 |
| यू.एस.ए | 143 | 112 | 3.699 | 847 | 2.5 |
| यू.के. | 141 | 93 | 3.276 | 645 | 1.5 |

❖ भारतीय अर्थव्यवस्था का एक अन्य महत्वपूर्ण लक्षण निर्बल आर्थिक संगठन है। आर्थिक विकास के लिये कुछ संस्थाए पर्याप्त रूप में विकसित नहीं हुई है। उदाहरण बचत को (विशेषकर ग्रामीण बचत को) गतिमान करने के लिए वित्तीय संस्थानों का निर्माण और विकास अनिवार्य शर्ते हैं। हाल ही में सरकार ने ग्रामीण क्षेत्र में डाकघरों की संख्या बढ़ा दी है और स्टेट बैंक आफ इण्डिया ने तहसील नगरों में अपनी शाखाऐं खोली है, किन्तु अभी तक भी ग्रामीण बचत को गतिमान करने के लिए पर्याप्त मात्रा में वित्तीय संस्थाऐं कायम नहीं की गई हैं। 1969 में बैंक राष्ट्रीकरण के पश्चात ग्राम क्षेत्रों में बैंको की शाखाओं के विस्तार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई हैं।

भारत में जहां बड़ी संख्या में छोटे छोटे कृषक रहते हैं कुछ ऐसे ऋण अभिकरणों

के विकास की आवश्यकता है जो कृषकों को आसान शर्तो पर ऋण प्रदान कर सके। इसी प्रकार उद्योगों को मध्यकालीन ऋण दिलाने के लिऐ औद्योगिक वित्त निगमों का विकास अत्यन्त आवश्यक है।

निर्धन काश्तकारों का शोषण करने वाले जमींदार वर्ग के अस्तित्व के कारण यह आवश्यक हो गया है कि काश्तकारों को संरक्षण प्रदान करने वाले काश्तकारी विधान को शीघ्र लागू किया जाए। किसान जनता की उत्पादन शक्तियों के विकास के लिए भू-स्वामित्व के ऐसे संस्थानात्मक ढांचे का निर्माण करना आवश्यक है, जो उसे अधिक उत्पादन के लिये प्रोत्साहन करे। इन सब संस्थानात्मक अड़चनो का समाधान करने के लिय कुशल और ईमानदार प्रशासन की आवश्यकता है। अल्पविकसित देशों मे ईमानदार प्रशासकों की बहुत कमी है। प्रशासन तंत्र के पुनर्गठन की आवश्यकता से आर्थिक संगठन की एक अन्य कमी का पता चलता है।

सारांश यह है कि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था की मूल विशेषताऐं ये है प्राथमिक उत्पादनशीलता, प्रतिव्यक्ति निम्न आय, जनसंख्या का दबाव, बरोजगारी और अल्परोजगार, पूंजी के न्यूनता, तकनीक का निम्न स्तर, परिस्म्पतों का दोषपूर्ण वितरण, निर्बल आर्थिक संगठन और घटिया मानव शक्ति।

# भारतीय अर्थव्यवस्था विकासशील अर्थव्यवस्था के रूप में -

वरीयता तय करने वाली विभिन्न अन्तराष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा वरीयता क्रम सुनिश्चित करने के लिए कवायदें जारी हैं, और कई संकेत भी तैयार किए गए हैं भूमंडलीकरण के सन्दर्भ में इन संकतकों का महत्व बढ़ा है, मोटे तौर पर इन संकेतकों को चार श्रेणियों में बांटा गया है।

1. आर्थिक संकेतक
2. संस्थागत संकेतक
3. संरचनात्मक संकेतक
4. सामाजिक संकेतक

उपलब्धता और प्रासंगिकता के लिहाज से किया गया यह चयन किसी भी मायने में अन्तिम नहीं है। दुनिया भर के कुल नौ राष्ट्रों को ऐसे आधार के रूप में माना गया है, जो विभिन्न देशों की भौगौलिक स्थिति, उनकी आय के स्तरों में व्याप्त अन्तर, अर्थव्यवस्था के आकार आदि का समुचित प्रतिनिधित्व करते हैं। ये देश है भारत, सिंगापुर, चीन, पाकिस्तान, श्रीलंका, दक्षिण अफ्रीका, मेक्सिको, अमेरिका तथा जापान।

## आर्थिक संकेतक –

आर्थिक संकेतको के अन्तर्गत आय का स्तर और अवधि विशेष के दौरान इसके विकास बचत तथा निवेश दर के अनुसार इसके विकास करने की क्षमता बाहरी क्षेत्र का प्रदर्शन आदि शामिल है।

भारत की अर्थव्यवस्था काफी बड़ी है। आकार की दृष्टि से इसका विश्व में ग्यारहवां तथा माप के मुताबिक तीसरा स्थान है। अलबत्ता, प्रति व्यक्ति ऑकड़ो के लिहाज से भारत दुनिया के निचले राष्ट्रों की श्रेणी में है। सन् 1999 में भारत का सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जी. एन.पी.) जो वस्तुतः भारतीय नागरिकों को प्राप्त होने वाली सभी प्रकार की आय का कुल योग है, 442.2 अरब अमेरिकी डॉलर रहा। विश्व में यह ग्यारहवें स्थान पर था, इस प्रकार प्रति व्यक्ति जी.एन.पी. 450 अमेरिकी डॉलर हैं। इस हिसाब से हमारा स्थान दुनिया में 162 वे क्रम पर है जो निसंदेह हमारी श्रेणी के नौ राष्ट्रो के समूह में हमें काफी नीचे खड़ा करता है। चुंकि जी.एन.पी. 450 अमेरिकी डॉलर है। इस हिसाब से हमारा स्थान दुनिया में 162 वे क्रम पर है जो निसंदेह हमारी श्रेणी के नौ राष्ट्रो के समूह में हमें काफी नीचे खड़ा करता है। चुंकि जी.एन.पी. की यह गणना बाजार विनिमय दर के हिसाब से की जाती है। इसलिए कुछ विश्लेषकों ने इस विधि पर इस आधार पर आपत्ति की है। कि तुलनात्मक वस्तुओं के मूल्यों में उन देशों में अन्तर हो सकता है जो इनका आपसी व्यापार नहीं करते। इन अंतरो के समायोजन के बाद 'क्रय-शक्ति समानता' (पी.पी.पी.) के आधार पर

मापी गई जी.एन.पी. हासिल होती है। इस प्रकार भारत की जी.एन.पी. बढ़कर 2144.1 अरब अमेरिकी डॉलर हो जाती है जो दरअसल अमेरिका के बाद दूसरे स्थान पर है। इसके बावजूद भारत को दुनिया भर के देशों की वरीयता सूची में 153वें स्थान पर रखा गया है, जो इन नौ अन्य देशों के समूह में वह केवल एक देश से ऊपर है।

भारत का विकास प्रभावशाली रहा है। दरअसल आठवें और नौवें दशक में तो इसकी जी.डी.पी. की औसत वार्षिक विकास दर सिंगापुर और चीन सरीखे देशों के समान रही थी, लेकिन पिछले दो दशकों में जी.डी.पी. की अधिक विकास दर के बावजूद प्रति व्यक्ति जी.एन.पी. की दृष्टि से भारत का स्थान काफी पीछे है। हमारी आबादी का आकार और इसकी बृद्धि दर तथा हमारी आय के सीमित आधार इसके लिए प्रमुख रूप से दोषी है।

सन् 1997–99 के दौरान बचत तथा निवेश–दर क्रमशः 20.3 और 23.9 प्रतिशत रहीं, जो कई विकासशील एवं विकसित देशों की दर से बेहतर है लेकिन अधिक विकास दर दर्शाने वाले देशों जैसे सिंगापुर और चीन की तुलना में ये दरें काफी कम है। भारत में लगभग सम्पूर्ण बचत घरों और निजी क्षेत्र में आती है। सन् 1993–94 के दौरान सार्वजनिक क्षेत्रो की बचत मात्र। 1 प्रतिशत रही। भारत में बचत का स्तर कम होने का मुख्य कारण सरकारी बचत का राजस्व घाटे के चलते नकारात्मक होना है।

यह बात भी गौर करने लायक है कि नौवे दशक के दौरान वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात में 11.3 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि दर्ज की गई थी, जो दरअसल चीन (13 प्रतिशत) मेक्सिको (14.3 प्रतिशत) आदि बेहतरीन प्रदर्शन करने वाले कुछ ही देशो से कम थी। सन् 1998 में बाहरी ऋण तथा जी.डी.पी. का अनुपात 23 प्रतिशत रहा जो पाकिस्तान, श्रीलंका, मेक्सिको सरीखे देशों से भी काफी कम था।

1990 के दशक में भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एम.डी.आई.) के प्रवाह मे भी तेजी आई। सन् 1998 में यह ऑकड़ा 2 अरब 26 करोड़ अमेरिकी डॉलर तक जा पहुंचा। इस प्रकार सर्वाधिक एफ.डी.आई. प्राप्त करने वाले 20 विकासशील देशों की सूची में भारत का भी नाम शामिल हो गया। इसके बावजूद सिंगापुर (7 अरब 22 करोड़ अमेरिकी डॉलर) चीन (45 अरब 5 करोड़ अमेरिकी डालर), मेक्सिको (10 अरब 24 करोड़ अमेरिकी डॉलर) आदि देशो की तुलना में भारत में यह प्रभाव कम ही रहा।

इन्टरनेशनल कंट्री रिस्क गाइड (आई.सी.आर.जी.) द्वारा तैयार जोखिम वरीयता के अनुसार मार्च 2000 में भारत की जोखिम वरीयता 64.3 रही और इस प्रकार इसका स्थान अपने समूह के दो देशों से ऊपर रहा।[1]

संस्थागत निवेशकों की क्रेडिट रेटिंग के मामले में भी कमोबेश यह बात सच है जिससे

---

1. भारतीय अर्थनीति – राज कपिला, उमा कपिला, सत्याहित्य प्रकाश दिल्ली पृ0 20 ।

ज्ञात होता है कि कोई देश अदायगी में चूक कर सकता है।

भूमंडलीकरण के सन्दर्भ में ऐसा माना जाता है कि प्रौद्योगिकी प्रायः विकास को गति प्रदान करती है। इस दृष्टि से यह देखना होगा कि प्रौद्योगिकी के आविष्कार तथा विदेशों से प्रौद्योगिकी आयात करने के मामले में भारत कितना सक्रिय है, यह भी कि व्यापार स्थापित करने के लिए देश में माहौल किस हद तक मददगार है। विश्व आर्थिक मंच (डब्ल्यू. ई. एफ.) ने उपर्युक्त स्थितियों को क्रमशः प्रौद्योगिकी सूचकांक तथा स्थापना सूचकांक का नाम दिया है। इन दोनों सूचकांको को मिलाने पर आर्थिक रचनात्मक सूचकांक प्राप्त होता है, जो किसी देश के आर्थिक विकास को प्रदर्शित करता है। सन् 2000 में कराए गए 59 देशों के सर्वेक्षण में तीनों सूचकांको की सूची में भारत का स्थान 38 वां था और चीन (48वे स्थान) से आगे रहा। हालांकि भारत की तुलना में मेक्सिको में व्यापार स्थापना का वातावरण कम अनुकूल है और जापान में यह भारत से कुछ ही बेहतर है परन्तु प्रौद्योगिकी आविष्कार के क्षेत्र में इनकी भागीदारी और फलस्वरूप इनका रचनात्मक सूचकांक भारत से बेहतर है।

विश्व आर्थिक मंच ने यह स्पष्ट करने के लिए कि कुछ देश दूसरों की तुलना में तेजी से आगे किस प्रकार बढ़ रहे हैं, विकास प्रतिस्पर्धात्मकता सूचकांक (जी.सी.आई.) तैयार किया है। जिसके अन्तर्गत किसी अर्थव्यवस्था की प्रतिव्यक्ति आय में भविष्य में होने वाली वृद्धि को दर्शाया जाता है। सन् 2000 में कुल 59 देशों की सूची में इस आधार पर भारत का स्थान 49 वां रहा था जबकि चीन मेक्सिकों तथा दक्षिण, अफ्रीका क्रमशः 41 वें 43 वें तथा 33 वे स्थान पर रहें। अर्थव्यवस्था के विकास के लिए वृहद् अर्थव्यवस्था सम्बन्धी कारकों के अलावा सूक्ष्म आर्थिक आधार भी जिम्मेदार होते हैं। इसे मापने के लिये विश्व आर्थिक मंच द्वारा तैयार प्रतिस्पर्धात्मक संूचकांक (एम.सी.आई.) के आधार पर 58 देशों में भारत का स्थान 42 वां है। अलबत्ता, वह चीन (49वें स्थान) से आगे हैं, जबकि मेक्सिको (34 वें स्थान) और दक्षिण अफ्रीका (26 वे स्थल) पर कहीं आगे हैं।

ऐसी स्थिति में यह प्रश्न उठता है कि देश की मौजूदा अधिक उत्पादकता तथा आर्थिक प्रदर्शन को किन कारकों से बल मिलता है। विश्व आर्थिक मंच द्वारा इसे चालू प्रति–स्पर्धात्मक सूचकांक (सी.सी.आई.) का नाम दिया गया है। सन् 2000 में इस आधार पर तैयार 58 देशों की सूची में भारत का 37वां स्थान था, जो सी.सी. आई के अनुसार 49 वें स्थान से कहीं बेहतर है। यहां दिलचस्प तथ्य यह है कि हमारे देश की सी.सी आई के अनुसार वरीयता चीन (44वीं) तथा मेक्सिकों (42वीं) से अधिक रही, जिससे स्पष्ट है कि हमारे वर्तमान विकास को प्रभावित करने वाले कारक इन देशो के मुकाबले बेहतर है। इसके बावजूद वरीयता सूची में हम निचले स्तर पर ही टिके हुए हैं।

किसी देश के बाजारों के खुलेपन को उभरते बाजार सूचकांक से तय किया जाता हैं सन् 2000 में इस वरीयता क्रम में भारत 46 वें स्थान पर था और वह केवल चीन से ही ऊपर था। जहां तक शेष विश्व के साथ एकीकृत होने की बात है तो भारत इस दृष्टि से पिछड़ा ही कहा जाएगा। इसे मापने के लिए प्रयुक्त होने वाले 'भूमण्डलीकरण सूचकांक के अनुसार सन् 1993–97 के दौरान भारत के सन्दर्भ में यह ऑकड़ा 2 प्रतिशत प्रतिवर्ष रहा जो यकीनन कम कहा जाएगा, लेकिन हमारी अर्थव्यवस्था का 'मंदी प्रत्याशा' सूचकांक काफी अधिक रहा है। यह चीन मेक्सिको अमेरिका, जापान आदि देशों से भी ऊपर दर्ज किया गया। यह सूचकांक उस भरोसे का संकेतक है जिसके अनुसार किसी देश के बारे में अनुमान व्यक्त किया जाता है कि उसकी अर्थव्यवस्था में गिरावट नहीं आएगी। इससे स्पष्ट है कि हमारी अर्थव्यवस्था स्थिर है।

## संस्थागत संकेतक :–

सभी प्रकार के आर्थिक लेन–देन और सामाजिक प्रावधान कुछ निश्चित संस्थानों के दायरे में किए गए हैं। संस्थागत कारकों का मूल्यांकन एक जटिल प्रक्रिया है और वास्तव में यह विधि फिलहाल शैशवावस्था में है। चुंकि अधिकतर ऑकड़े मत सर्वेक्षणों के माध्यम से इकट्ठे किए गए है, इसलिये इनके माध्यम से व्यक्त विचारों को भी अन्तिम न मानकर 'तुलनात्मक' ही कहा जाना चाहिए।

'ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल' तथा गॉटिन्गन विश्वविद्यालय ने किसी देश के राजनीतिज्ञों तथा सरकारी कर्मचारियों की पारदर्शिता के बारे में वहां के व्यापारिक समुदाय की राय के आधार पर विभिन्न देशों की वरीयता सूची तैयार की है। इस सूचकांक को भ्रष्टाचार अवधारणा सूचकांक नाम दिया गया हे। ट्रांसपेरेसी इंटरनेशनल द्वारा सन् 1996 में 54 देशों में कराए गए सर्वेक्षण के आधार पर भारत को 46 वे स्थान पर रखा गया था, अर्थात् तब इन देशों में भारत नौवां सर्वाधिक भ्रष्ट देश था।

शासन–व्यवस्था के सन्दर्भ में विश्व बैंक ने अपने प्रकाशन इण्डिया रिड्यूसिंग पॉवर्टी, एक्सलरेटिंग डेवलमेंट (2000) के अन्तर्गत पांच प्रमुख संकेतकों का जिक्र किया है ये हैं –

1. सरकारी प्रभावशीलता तथा स्थिरता, जिसके अन्तर्गत संस्थागत तथा सरकारी स्थिरता समेत सरकारी नीतियों के प्रति आम जनता में संतोष का भाव शामिल रहता है।
2. कानून की भूमिका तथा व्यापारिक माहौल, जिसके अन्तर्गत भ्रष्टाचार, रिश्वत (दलाली) कानून–व्यवस्था, कानूनी अधिकार आदि शामिल है।
3. आम जनता का प्रशासन, जिसे नौकरशाही के स्तर, उसकी मजबूती तथा उसमें राजनीतिक हस्तक्षेप की मात्रा एवं जबावदेही के आधार पर परखा जाता है।
4. सार्वजनिक वित्त जो अन्य बातों के अलावा बजट की गुणवत्ता, खर्च में कुशलता तथा न्यायोचितता और सार्वजनिक वित्त की प्राप्ति एवं प्रबन्धन की दृष्टि से जांचा जाता है।
5. निष्कर्ष जिसके तहत अधिकांश सामाजिक सूचकांक जैसे गरीबी, मृत्युदर, साक्षरता आदि

शामिल है। सन् 1995 में विभिन्न देशों के 5 समूहों की तुलना में भारत को उपर्युक्त कसौटियों के आधर पर परखा जाता था। ये समूह है विकासशील देश, कुछ चुनिंदा बड़े देश जिनमें चीन, मेक्सिकों, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील तथा पौलेण्ड है, दक्षिण पूर्व एशिया, जिसमें इंडोनशिया तथा थाईलैण्ड भी शामिल है, भारत को छोड़कर दक्षिण एशिया, इग्लैण्ड और अमेरिका सरीखे औद्योगिक देश हैं।

सरकार की प्रभावशीलता तथा उसकी स्थिरता के मामले में विभिन्न देशों के सभी समूहों के मुकाबले भारत की स्थिति काफी खराब है।

कानून की भूमिका तथा व्यापारिक वातावरण की दृष्टि से भारत की स्थिति अपने पड़ोसी दक्षिण एशियाई देशों से बेहतर है। लेकिन चुनिंदा बड़े देशों तथा औद्योगिक राष्ट्रों की तुलना में भारत की स्थिति बिल्कुल अच्छी नहीं कही जा सकती।

आम जनता के प्रशासन के मामले में औद्योगिक राष्ट्रों को छोड़कर शेष देशों के सभी समूहों की तुलना में भारत का स्थान बेहतर है।

इसी प्रकार सार्वजनिक वित्त के क्षेत्र में औद्योगिक राष्ट्र तथा चुनिंदा बड़े देश के समूह हमसे आगे हैं, जबकि भारत की स्थिति शेष समूहों से बेहतर है।

सामाजिक आर्थिक संकेतकों के रूप में सामने आने वाले निष्कर्षो की दृष्टि से भी समूहों की तुलना में भारत का प्रदर्शन खराब रहा है।

## ढॉचागत संकेतक –

परिवहन, बिजली, दूरसंचार, पानी, स्वच्छता आदि टिकाऊ आर्थिक विकास के लिए आवश्यक ढॉचागत संरचना के ये महत्वपूर्ण आधार है। ये सुविधाऐं आर्थिक गतिविधियों के कुशल तथा प्रभावी प्रवाह में सहायक होने के साथ साथ जीवन के लिये आधारभूत आवश्यकताऐं जुटाती है। यहां इन संकेतकों के आइने में भारत तथा अन्य समूहों का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया।

सन् 1997 में भारत में प्रति व्यक्ति बिजली की खपत केवल 363 किवा थी। हालांकि पाकिस्तान के मुकाबले इसमें भारत की स्थिति बेहतर है, लेकिन अन्य देशों की तुलना में यह अच्छी नहीं कही जा सकती, चीन में यह खपत भारत की खपत से लगभग दो गुनी है। अन्य दक्षिणा एशियाई देशों के नक्शे कदम पर चले हुए हमने भी प्रेषण और वितरण की प्रक्रिया में काफी मात्रा में बिजली बरबाद की है। सन् 1997 में यह 18 प्रतिशत रही जबकि चीन में यह बरबादी केवल 8 प्रतिशत थी।

सन् 1998 में अच्छी हालत में या पक्की सड़के केवल 45.7 प्रतिशत थी। उधर पाकिस्तान (57 प्रतिशत) और श्रीलंका (95 प्रतिशत) आदि देश भी इस लिहाज से हमसे आगे हैं। देश का रेलवे तंत्र कुल मिलाकर अच्छी स्थिति में है, सन् 1998 में प्रति 10 लाख डॉलर जी.डी.पी. पर रेलवे ने 137.1 हजार टन किलोमीटर माल ढोया। यह ऑकड़ा जापान (101.7) से बेहतर है, लेकिन अधिक भौगौलिक क्षेत्रों वाले चीन (304.8) दक्षिण अफ्रीका (283.3) आदि देशों की तुलना में यह काफी कम है, जो माल वाहन के लिये रेलवे तंत्र का इस्तेमाल करते हैं।

सन् 1997 में प्रति 1000 भारतीयों में से 121 के पास रेडियो सेट था जबकि समूह के केवल एक देश को छोड़कर शेष सभी देश इस दृष्टि से भारत से आगे हैं। श्रीलंका (209) की स्थिति भारत से दोगुनी अच्छी है। इसी प्रकार प्रति 1000 में से केवल 68 भारतीयों के पास टी. वी. सेट था। इस मामले में भारत अपने समूह में सबसे पिछड़ा हुआ था।

सन् 1998 में देश में टेलीफोन की 22 मेन लाइनें थीं, इस मामले में समूह के केवल एक देश से हमारी स्थिति बेहतर थी, जबकि चीन (70) हमसे काफी आगे था। भारत में टेलीफोन कनेक्शन के लिये औसत प्रतीक्षा समय एक वर्ष था। यह स्थिति हमें केवल दो देशों से ही आगे खड़ा करती है, जबकि चीन आदि देश के आगे हम टिक ही नहीं पाते जहां यह समय औसतन एक माह था। सन् 1998 में देश में प्रति 1000 पर 2.7 पर्सनल कम्प्यूटर (पी.सी.) थें इस लिहाज से समूह में भारत सबसे पिछड़ा देश था। चीन में यह आंकड़ा 8.9 था, जबकि बाकी सभी देश काफी आगे थे। इंटरनेट के मामले में भी स्थिति कमोबेश यही थी। सन् 2000 में प्रति 10000 पर यह ऑकड़ा भारत मे 0.23 चीन में 0.57 पाकिस्तान में 0.34 तथा श्रीलंका में 0.63 दर्ज किया गया।

भारत अपने विज्ञान कर्मियों तथा इंजीनियरों की भारी फौज के लिए जाना जाता है। सन् 1987–97 के दौरान प्रति 10 लाख भारतीयों पर 149 व्यक्ति अनुसंधान एवं विकास गतिविधियों से जुड़े थे। इस क्षेत्र में भी केवल एक देश को छोड़कर शेष सभी देशो की स्थिति हमसे बेहतर है। यदि हम अप्रवासी इंजीनियरों और वैज्ञानिकों को भी इस आंकड़े में शामिल कर ले तो भी स्थिति में कोई सुधार आने वाला नहीं। इसी अवधि में कुल निर्मित निर्यात का 5 प्रतिशत प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित था। यहाँ भी हम दक्षिण एशियाई पड़ोसी देशों को छोड़कर शेष सभी देशों से पिछड़े हुए हैं।

· सुरक्षित जल स्रोत तथा स्वच्छता सम्बन्धी सुविधाऐं लोगो के स्वास्थ्य–सुधार से जुड़ी बुनियादी ढांचागत आवश्यकताऐं हैं। सामाजिक संकेतक के अन्तर्गत हमने पाया कि इस मोरचे पर भी भारत का प्रदर्शन खराब रहा है।

उपर्युक्त ढांचागत संकेतकों को जानने के बाद इस बारे में कोई आश्चर्य नहीं रह जाता कि विश्व आर्थिक मंच ने सन् 1998 के ग्लोबल कंपीटिटिवनेस रिपोर्ट में 53 देशों के समूह के सर्वेक्षण के बाद भारत को 53 वे स्थान पर रखा था।

## सामाजिक संकेतक –

सामाजिक संकेतकों के अन्तर्गत भोजन, आवास और कपड़े के साथ साथ लोगो का ज्ञान और उनका स्वास्थ्य भी शामिल है। हमारे समूह के देशों के बीच इनमें से कुछ संकेतको की तुलना ''मानव–विकास सूचकांक'' तथा मानव गरीबी सूचकांक के साथ करने पर प्राप्त निष्कर्षो से बहुत कुछ अपने आप स्पष्ट हो जाता है।

किसी भी देश का महत्वपूर्ण सामाजिक संकेतक उसके लोगों की साक्षरता का स्तर होता

है। सन् 1998 में हमारे देश में प्रौढ़ साक्षरता – दर मात्र 55.7 प्रतिशत थी जो पाकिस्तान (44 प्रतिशत) से भले ही बेहतर रही, मगर श्रीलंका (91.1) और चीन (82.8) के मुकाबले काफी कमी थी। युवा साक्षरता की तसवीर भी कमोवेश ऐसी ही हैं भारत (71 प्रतिशत) इस क्षेत्र में श्रीलंका (96.5 प्रतिशत) तथा चीन (97.2 प्रतिशत) से काफी पीछे है। यहां उल्लेखनीय है कि सन् 1995–97 के दौरान शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय जी.डी.पी. का 3.2 प्रतिशत रहा जो कई देशों के लगभग बराबर था। साथ ही सन् 1994 – 97 के दौरान अधिक निरक्षरता – दर के बावजूद शिक्षा व्यय के दायरे में हमनें प्राथमिक–पूर्व, प्राथमिक तथा सेकेंडरी स्तर पर कम, यानी 66 प्रतिशत ही खर्च किया। उधर पाकिस्तान श्रीलंकार आदि देशों ने शिक्षा के इस स्तर पर 75 प्रतिशत या इससे भी अधिक राशि खर्च कीं।

शिक्षा के अलावा स्वास्थ्य भी जनता की बुनियादी जरूरत हैं हालांकि सन् 1990–96 के दौरान हमारी 81 प्रतिशत की पहुंच शुद्ध पेयजल स्रोतों तक थी, लेकिन हम केवल तीन देशों की तुलना में ही बेहतर थे। स्वच्छता तक मात्र 16 प्रतिशत आबादी की पहुंच थी, और इस मोरचे पर हम समूह के सभी देशों के मुकाबले पिछढ़े हुए थे।

सन् 1998 में प्रति 1000 पर 70 शिशुओं की मृत्यु हुई इसी प्रकार सन् 1998 में केवल एक देश की जीवन संभाव्यता भारत (63 वर्ष) से कम थी। सन् 1997 में प्रति एक लाख भारतीयों में से 118.3 प्रतिशत क्षय रोग से पीड़ित थे। केवल दक्षिण अफ्रीका (242.7) इस मामलों में भारत से पिछड़ा हुआ था।

सन् 1990–97 के दौरान 33 प्रति नवजात शिशुओं का वजन औसत से कम था। इस मामले में हम पाकिस्तान, श्रीलंका आदि देशों से भी पिछड़े हुए कहे जायेंगे, जहां यह आँकड़ा 25 प्रतिशत था।

सन् 1997 में केवल दो देश ही ऐसे थे, जिन्होंने भारत द्वारा अपने प्रत्येक नागरिक को प्रतिदिन 2496 कैलोरीज की आपूर्ति से भी कम मात्रा में कैलोरीज उपलबध कराई थी। सन् 1997 में प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति 59 ग्राम प्रोटीन की खपत भी कम रही। सन् 1990–98 के दौरान हमने स्वास्थ्य सेवाओं पर जी.डी.पी. का महज 0.60 प्रतिशत खर्च किया, जो अन्य देशों के मुकाबले काफी कम हैं

सन् 1992–95 के दौरान प्रति एक लाख भारतीयों पर 48 डॉक्टर उपलब्ध थे इस मामले में हमारी स्थिति के केवल श्रीलंका से बेहतर रही।

विश्व बैंक ने बुनियादी मानव विकास के क्षेत्र में औसत उपलब्धि ऑकने के लिये मानव विकास सूचकांक तैयार किया। इसके अन्तर्गत प्रति व्यक्ति जी.डी.पी. सूचकांक शिक्षा सूचकांक तथा जीवन संभाव्यता सूचकांक को शामिल किया गया। सन् 1998 में इस क्षेत्र में भी पहले दो उप सूचकांको में केवल एक देश ही हमसे पीछे रहा, जबकि तीसरे सूचकांक में भी हम केवल एक देश की तुलना में बेहतर स्थिति में थे। इस प्रकार सन् 1998 में मानव विकास सूचकांक के आधार पर भारत का स्थान 128 वां था।

## भारतीय अर्थव्यवस्था की वर्तमान दशा –

जहां तक विकास दर का सवाल है, हमने बीसवीं शताब्दी के शुरू के 50 वर्षो की बजाय बाद के 50 वर्षों में और उनमें भी आखिरी दो दशकों में बेहतर प्रदर्शन किया है, इस बीच उत्पादन विकास में उतार चढ़ाव कम हुए हैं। झटकों को झेलने की क्षमता बढ़ी है। बाहरी क्षेत्र में हमारी स्थिति इस दृष्टि से सुधरी है कि अब विकास पर विदेशी मुद्रा का दबाव नहीं है। इन सबके बावजूद हमारे यहां व्यापक स्तर पर गरीबी और निरक्षरता के साथ साथ स्वास्थ्य और स्वच्छता की स्थिति काफी खराब है। अभाव और गरीबी के भयंकर समुद्र के बीच सूचना प्रौद्योगिकी विशेषज्ञ रूपी दीप भी इस देश में मौजूद है आर्थिक नीति विशेषकर नब्बे के दशक की नीतियों में आर्थिक विकास पर पड़ने वाले अनेक दबावो को दूर किया है। यह अपने आप में एक उपलब्धि होने के साथ साथ समाज के लिए तय अन्य लक्ष्यों को हासिल करने की आवश्यक पूर्व शर्ते भी हैं, लेकिन अब भी इस बात को लेकर शंका बनी हुई है कि क्या हम विधिवत ऐसी व्यवस्था तैयार कर रहे हैं जो विकास का निरन्तर उच्च स्तर सुनिश्चित करेगी तथा इस प्रकार के विकास के साथ जुड़े न्यूनतम समाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति में भी योगदान देगी ?

आर्थिक संकेतकों से पता चलता है कि हमारी अर्थव्यवस्था विश्व की अधिक तेजगति से विकास कर रही अर्थव्यवस्थाओं में से एक है हमारी अर्थव्यव्यवस्था का बचत तथा निवेश अनुपात काफी अधिक है, पूंजी निर्गत अनुपात से स्पष्ट है कि हमारी उत्पादकता का स्तर भी सम्माननीय है। पूंजी प्रवाह के अपेक्षाकृत कम स्तर के बावजूद बाहरी क्षेत्र में हमारी स्थिति ठीक ठाक है। यह स्थिति इस बात का प्रमाण है कि विदेशी, पूंजी–निवेशकों की कम दिलचस्पी के बावजूद घरेलू निवेशकों का मिला जुला दृष्टिकोण है। वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक सूचकांक के आधार पर तय हमारी स्थिति से उस विश्वास की झलक मिलती है जो कम अवधि में ही हमारे विकास की रफ्तार को देखकर व्यक्त किया गया है। अलबत्ता विकास प्रतिस्पर्धात्मक सूचकांक पर हमारी स्थिति से जो तसवीर उभरती है वह भविष्य में प्रति व्यक्ति आय में विकास को लेकर आशा जनक नहीं कही जा सकती। अन्य संकेतकों के सम्बन्ध में भी यही स्थिति है कि मौजूदा विकास को गति देने वाले कारक भविष्य में विकास को देने वाले कारकों के मुकाबले कहीं अधिक मजबूत है। इसके बावजूद इसबात को लेकर पूरा भरोसा है कि हमारी अर्थव्यवस्था में मंदी नहीं आयेगी अर्थात हमारी अर्थव्यवस्था स्थिर है। अर्थव्यव्यवस्था की वर्तमान, मध्यम और लम्बी अवधि की संभावनाओं को लेकर मतभेदों को औद्योगिक संकेतको के सन्दर्भ में समझा जा सकता है। साक्ष्य व्यक्तिपरक है इसलिए अधिक विश्वसीनय नहीं है। हां भ्रष्टाचार के मामले में अधिक वरीयता क्रम अवश्य चिंतनीय है। लेकिन इससे भी अधिक चिंता का विषय यह है कि सरकार की प्रभावशीलता को कम माना गया है काननू की भूमिका तथा व्यापारिक माहौल के मामले में स्थिति संतोषजनक भले ही है लेकिन मौजूदा संकेतक अधिक विकास पथ को सुनिश्चित करने वाले माहौल की गारन्टी नहीं दे सकते। सरकार कानून और व्यापारिक माहौल दरअसल उद्देश्य प्राप्ति के साधन भर है।

साध्य जनता की सामाजिक आर्थिक संपन्नता है लेकिन सामाजिक आर्थिक संकेतकों के हिसाब से भारत की स्थिति पिछड़ी हुई है।

मध्यम अवधि की संभावनाओं की दृष्टि से ढांचागत क्षेत्र से जुड़े संकेतक प्रासंगिक माने जाते हैं। ऊर्जा के क्षेत्र में चाहे वह बिजली की खपत हो या बिजली की बरबादी भारत की स्थिति काफी खराब है, हाल के वर्षो में हुए सुधारों के बावजूद दूरसंचार के क्षेत्र में भी उसका स्थान पिछड़ा हुआ ही हैं पर्सनल कम्प्यूटर के मामले में तो हम काफी पीछे हैं हालाकि सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हमारी उपलब्धियां उल्लेखनीय है मगर घरेलू मोरचे पर इसकी पहुंच कम है इस बात की पुष्टि इस तथ्य से भी हो जाती है कि निर्मित निर्यात में प्रौद्योगिकी सम्बन्धी निर्यात का हमारा प्रतिशत भी कम है। भविष्य का आकलन करते समय हमें इस तथ्य पर गौर करना होगा कि विज्ञानकर्मियों तथा इंजीनियरों की हमारी भारी फौज के बावजूद अनुसंधान तथा विकास के क्षेत्र में उनकी तैनाती के मामले में हमारा स्थान सबसे नीचे है। भूमण्डलीय प्रतिस्पर्धात्मक सूचकांक पर हमारे 49 वें स्थान को ढांचागत संकेतकों के मामले में हमारी स्थिति से समझा जा सकता है।

देश का साक्षरता स्तर काफी कम है। हालाकि इस मद में जी.डी.पी. के प्रतिशत के रूप में होने वाला सरकारी खर्च अन्य देशों के बराबर ही है। स्वास्थ्य और स्वच्छता के हालात भी अच्छे नहीं है। दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि इस दिशा में दूसरे मदों के मुकाबले खर्च भी काफी कम हो। रहा है।

कुल मिलाकर मानव विकास के क्षेत्र में तो हमारा स्थान काफी पीछे है ही देश की बड़ी आबादी की गिनती वंचितों की श्रेणी में होती है। इसके बावजूद स्वास्थ्य तथा प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में सरकारी खर्च अपेक्षाकृत कम है हालाकि अधिक खर्च का अर्थ सेवाओं की वास्तविक आपूर्ति नहीं है। हममे से अधिकतर लोग मानवी दुखःदर्द और गरीबों की जरूरतों के प्रति काफी हद तक असंवेदी है यही कारण है कि संगठित क्षेत्र से जुड़े कर्मियों के कल्याण तथा उन्हें मिलने वाली रिआयतों की कीमतें अपेक्षाकृत अधिक है। देश के पिछड़ेपन, सामाजिक अन्याय, वितरण में विफलता आदि का कारण है– स्वार्थ प्रधान उपभोगवाद/अनादि काल से समाज में असमानता रही है, फिर भी सभी सुखी थे, कारण यह था कि सभी एक दूसरे का ख्याल रखते थे। असमानता को छुआछूत, साम्प्रदायिकता आदि की संज्ञा देकर अनर्थ हुआ है। जब तक इन कुरीतियों को मिटाया न जाएगा तब तक सामाजिक सुख, शान्ति एवं समृद्धि असम्भव है।

भारत के इतिहास के उज्जवल समय पर दृष्टि डालकर विचार करता हूँ तो लगता है कि किसी भी प्रकार के विदेशी निवेश (संस्थागत व प्रत्यक्ष) को भी अवसर नहीं दिया गया था, किन्तु अपने तैयार माल का विदेशी व्यापार सदैव किया गया था। कच्चे माल (संसाधनों) का निर्यात भी देश के हित में नहीं है। अतः वर्तमान निवेश पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध लगातार केवल सीमित मात्रा में उत्पादित माल के विदेशी व्यापार को बढ़ावा देना चाहिए। लेकिन साथ साथ हर क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ने के लिए घरेलू उद्योग को भी प्रोत्साहन देना होगा ताकि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के उलट–फेर से उत्पन्न कुप्रभाव से देश पीड़ित न हो।

श्रमिकों के आवागमन के साथ साथ मुद्रा की परिवर्तनीयता अच्छी है। सभी मुद्राओं को उचित स्थान प्राप्त होना चाहिए। यदि हम केवल डालर पर निर्भर रहेंगे तो निश्चित है कि अमेरिका की आर्थिक स्थिति लुढ़कते ही विश्व में आर्थिक संकट उत्पन्न हो जाएगा। एक राष्ट्र की तानाशाही भी कब तब नहीं रहेगी ? विश्व की सुव्यवस्था के लिये बने अनेक संगठन संयुक्त राष्ट्र संघ, ग्रीन पीस, युनिसेफ, नेटो, अंकटाड़, विश्वबैंक, विश्व व्यापार संघटन, डब्ल्यू. एच. ओ. इत्यादि भी विकसित देशों के जेबी संघटन बन कर रह गए हैं। इस समस्या से निपटने का एक ही उपाय है कि विकासशील देश भिन्न भिन्न माल उत्पादक संघों – जैसे ओपेक का गठन करें ताकि विकसित देशों पर अपना दबाव डाल सें।[1]

वर्तमान में एक विश्व एक मत आदि कल्पना मात्र प्रतीत होता है। विकसित विकासशील, अमीर गरीब प्रबल–दुर्बल आदि भेद इतने सुदृढ़ हैं कि सुधार लाना असम्भव सा लगता है। तथापि कहीं न कहीं से किसी न किसी को प्रारम्भ करना ही होगा। इसके लिये भारत स्वयं आरम्भ कर सकता है। इस दिशा में हमें निम्न कदम उठाने चाहिए।

1. प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा उपलब्ध करायी जाये व आरक्षण समाप्त किया जाये। समग्रदेश में एक शिक्षा नीति व पाठ्यक्रम हो। प्राइवेट बोर्डो को समाप्त किया जाये।
2. सरकार स्वयं व्यापार करना बन्द करे एवं केवल नियत्रंक बनी रहें।
3. सरकार सार्वजनिक व्यवस्था को अपने हाथ में रखे, शेष को निजी क्षेत्र को सौंप दिया जाये।
4. विदेशी ऋण व विदेशी निवेश को समाप्त किया जाये।
5. आत्मनिर्भरता के लिये प्रयास किया जाये व घरेलू उद्योग को प्रोत्साहन दिया जाये।
6. सामाजिक व पारिवारिक असमानता (जिसको मिटाना असम्भव है) में सन्तुलन के लिए परस्पर सहयोग की प्रेरणा दी जाये। इसके लिये दूरदर्शन सिनेमा आदि प्रचार माध्यमों का उचित उपयोग किया जाये।
7. राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर माल उत्पादक संघों को गठन एवं विभिन्न प्रकार के कर्मचारियों के संघो का गठन हो।
8. आयकर को समाप्त करके अनेक प्रकार के उपभोक्ता कर लगाये जाये। उन वस्तुओं पर अधिक कर लगाए जाऐं जो धनी लोग अपनी सुख सुविधा के लिये प्रयोग करते हैं। गरीबों द्वारा जीवन के लिये उपर्युक्त अति आवश्यक पदार्थो को कर मुक्त कर दिया जाए।
9. रोजगार उपलब्ध कराने हेतु निजी निवेशकों को प्रोत्साहित किया जाये एवं स्वयं भी सरकार इस दिशा में योजना बनाए।
10. ग्रामीण विकास के अन्तर्गत ऐसी योजनाओं को लागू किया जायें जिनसे नगर की ओर पलायन समाप्त हो और वहीं पर लोगों का जीवन स्तर उच्च हो सके। इसके लिये विशेषतः

---

1. भारतीय अर्थव्यवस्था – समीक्षात्मक अध्ययन भरत झुनझुनवाला ।

ग्रामीं उद्योग को बढ़ावा देना होगा।

नीति – निर्माताओं तथा शिक्षाविदों समेत जनमत तैयार करने वालों को गरीबों के पक्ष में अधिक संवेदी दृष्टिकोण तैयार करने के मुद्दे पर ध्यान देना होगा। लम्बी अवधि की विकास संभावनाओं के लिये सामाजिक चेतना के साथ साथ सामाजिक विकास के स्वीकार्य स्तर और सरकार की समुचित भूमिका भी आवश्यक है। ताकि हमारे देश का समृद्ध भविष्य सुनिश्चित हो सके।

# प्रो. अमर्त्य सेन का अर्थशास्त्र -

भारत के आर्थिक विकास में ग्राम विकास योजनाओं के योगदान की समीक्षा करने के लिये वर्तमान में प्रासंगिक अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन के विचारों को अनदेखा नहीं किया जा सकता है, नोबिल पुरूस्कार से सम्मानित प्रख्यात अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने गरीबी की समस्या और अकालो के भुक्तभोगी सामाजिक वर्गो के कारण और निवारण पर मौलिक चिन्तन प्रस्तुत किया है। इस चिन्तन को गरीबी औ अकाल शीर्षक का नाम दिया है। इस अध्ययन के लिये अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने उन्हें आंमत्रित किया था। इस संगठन का उद्देश्य यही था कि विश्व रोजगार कार्यक्रम के स्वरूप के निर्धारण के लिये विश्व समुदाय के आर्थिक उत्पीड़न के शिकार अंगो की समस्याओं उनके कारणों और सम्भव निवारणों के लिये कोई तर्क संगत और वस्तु स्थिति पर आधारित सिद्धान्त प्राप्त हो सके। प्रो0 सेन ने अकाल ग्रस्त अर्थव्यवस्था के अध्ययन के माध्यम से आर्थिक उत्पीड़न एवं दरिद्रता की समस्या को अनेक अन पहचाने पहलुओं को उजागर किया है।

प्रो0 सेन के इन्हीं विद्वन्ता पूर्ण विचारों को भारत में ग्राम विकास की योजनाओं का स्वरूप निर्धारण करने में प्रयुक्त कर भारत जैसे विशाल राष्ट्र के आर्थिक विकास की रूपरेखा निर्धारित की जा सकती है। कुछ अनउत्तरित प्रश्न है भारत में एक तरफ उच्चकोटि के विद्धान दार्शनिक राजनेता और सभी विद्याओं के विशेषज्ञ मौजूद हैं तो दूसरे तरफ एक अरब पांच करोड़ की आबादी की 35.2 प्रतिशत निराक्षर जनता है। एक तरफ उपभोग के स्तर में कोई कमी नहीं है तो दूसरी तरफ भुखमरी है एक ओर बहुमूल्य प्राकृतिक सम्पदाये हैं जिनका दोहन नहीं किया जा सका तो दूसरी तरफ काम करने के अवसरों का अभाव है। एक ओर श्रम की अधिकता तो दूसरी ओर कुशल श्रम का अभाव। यह और इनकी जैसी अन्य विषमतायें भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषतायें हैं। ऐसा क्यों? इस बात का उत्तर अमर्त्य सेन के लेखन में बहुत सीमा तक खोजा जा सकता हैं इनसे पूर्व के अर्थशास्त्री या तो गरीबी रेखा का निर्धारण कर अपने कर्तव्य की इति श्रींमान लेते थे या फिर उस रेखा के आधार पर गरीबों की संख्या का अनुमान लगाकर संतुष्ट हो जाते थे। *प्रो0 सेन का आग्रह है कि गरीब लोग कितने अभाव ग्रस्त हें और उनकी दशा में किस दिशा में परिवर्तन आ रहे हैं इन दो बातों पर विचार किए बिना गरीबी की समस्या का सही निदान सम्भव नहीं होगा, और सही निदान के अभाव में सही उपचार कैसे हो पाएगा।*

अमर्त्य सेन ने गरीबी के स्वरूप, इसकी पहचान और इसके प्रसार को मापने की उचित विधियों की समीक्षा करते हुए एक नई विधि का प्रतिपादन किया। वह नई विधि सेनविधि समाज के विभिन्न, समूहों के बीच सापेक्ष अभावों और वंचनाओं के आधार पर उन समूहों के अपने दृष्टिकोण के अनुरूप ही गरीबी के स्तर का निर्धारण करती है। इसकी सबसे बड़ी विलक्षणता है समाज के गरीब वर्गो के बीच आन्तरिक आय के बटबारे के स्वरूप में आ रहे परिवर्तनों को मूल्यांकन का आधार बनाना।

प्रो0 अमर्त्य सेन ने गरीबी और अधिकारिताओं पर चिन्तन भुखमरी और अकाल के कारणों को बताने के लिये किया है। लेकिन इसके व्यावाहारिक पहलु को देखते हुए आर्थिक विकास के बृहत उद्देश्यों की पूर्ति में समावेश किया जा सकता है। गरीबी और अधिकारिता के विषय में सेने का कहना है – स्वामित्व सम्बन्ध एक प्रकार के अधिकारिता अर्थात् अधिकार का दावा अथवा हकदारी के सम्बन्ध होते हैं। अतः भुखमरी के विश्लेषण के लिये अधिकारिता की व्यवथा को समझना होगा। यह बात गरीबी सन्दर्भ में और भी स्वाभाविक हो जाती है। अकाल या दुर्भिक्ष काल में तो स्वंय सिद्ध सी ही प्रतीत होती है।

अधिकारिता का सम्बन्ध एक प्रकार के स्वामित्व को किसी वैधता के नियम के अनुसार अन्य प्रकार के स्वामित्व से जोड़ देता है। इस सम्बन्ध में उत्तरोत्तरता (Recursive Relation) का गुण होता है। इसके अनुसरण से हम बार बार स्वामित्व सम्बन्धों को जोड़ सकते हैं। उदाहरण के लिए बाज़ार व्यवस्था पर गौर करे मैं एक डबल रोटी का स्वामी हूं। मेरा यह स्वामित्व क्यों स्वीकार्य हुआ? क्योंकि मैने अपने कुछ रूपए देकर इसे प्राप्त किया है। पर वे रूपए मेरे कैसे हुए? क्योंकि मैने अपनी एक बांस की छतरी बेच कर उन्हें पाया था। पर उस छतरी पर मेरा स्वामित्व क्यों हुआ? क्योंकि मैने अपनी भूमि पर उगे बांसो पर अपने श्रम से उस छतरी को बनाया है। उस भूमि पर मेरा स्वामित्व क्यों हुआ? मैने उसे अपने पिताजी से उत्तराधिकार में पाया है। इस श्रृंखला में अधिकारिता की प्रत्येक कड़ी किसी अन्य कड़ी का सहारा लेकर स्वामित्व का औचित्य सिद्ध करती है। अपने श्रम के फल का उपभोग करने की मूलभूत अधिकारिता की बात भी इसी में आती है।

1. *व्यापार–आधारित अधिकारिता* – अपनी किसी वस्तु के बदले में अन्य इच्छुक व्यक्तियों से व्यापारिक आधार पर पाई गई वस्तुओं पर स्वामित्व की अधिकारिता,

2. *उत्पादन आधारित अधिकारिता* – अपने संसाधनो, अथवा इच्छुक व्यक्तियों से सामान्य व्यापार प्रक्रिया द्वारा प्राप्त संसाधनों के प्रयोग से उत्पादित वस्तुओं पर स्वामित्व की अधिकारिता।

3. *अपने श्रम पर आधारित अधिकारिता* – व्यक्ति का अपने श्रम की शक्ति पर पूरा अधिकार होता है इसी कारण उसे श्रम के प्रयोग से सुलभ व्यापार आश्रित एवं उत्पादन अधिकारिताऐं भी प्राप्त रहतीं हैं।

4. *उत्तराधिकार एवं हस्तान्तरण अधिकारिता* – वैध अधिकारी द्वारा स्वेच्छा से प्रदान की गई वस्तुओं पर प्राप्तकर्ता को स्वामित्व का पूरा अधिकार होता है। कई बार यह अधिकार दाता की मृत्यु के पश्चात ही प्रभावी हो पाता है।

अधिकारिता के ये सभी सम्बन्ध बहुत स्पष्ट और सीधे समझ में आने वाले हैं। किन्तु अनेक और भी अधिकारिताऐं हैं। जिनका स्वरूप्प काफी जटिल है। कई बार व्यक्ति को किसी सम्पत्ति के प्रयोग का अधिकार तो होता है पर वह उसे किसी अन्य को हस्तान्तरित नहीं कर सकता। कभी कभी देश में प्रचलित वंशानुगत परम्परा के अनुसार किसी को अपने दूर के

रिश्तेदारों की उस सम्पत्ति पर भी उत्तराधिकार मिल जाता है जिसे उन्होंने किसी अन्य को नहीं दिया हो। कहीं कही किसी चीज की खोज या पाए जाने के कारण भी हमें उस पर अपना हक जमाने का अधिकार मिल जाता है। किन्हीं विशेष परिस्थितियों में बाजार आश्रित अधिकारिताओं में राशन या कूपन व्यवस्था के अधिकार भी शामिल हो जाते हैं। दूसरे महायुद्ध के दौरान ब्रिटेन में ऐसा ही हुआ था। स्वामित्व के सम्बन्धों का स्वरूप आर्थिक व्यवस्था के गुणधर्मो के अनुसार बदलता रहता है। समाजवादी अर्थव्यवस्था उत्पादक साधनों (Means of Production) पर निजी स्वामित्व को स्वीकार नहीं करती। वहां उत्पादन आश्रित अधिकारिताऐं व्यक्ति के अपने श्रम से अति सामान्य औजारों और कच्चे माल से हुए उत्पादन तक ही सीमित रह जाती है, इसके विपरीत पूंजीवादी व्यवस्था में तो उत्पादन साधनों का निजी स्वामित्व उसके अपने अस्तित्व की एक आधार भूत मान्यता ही होती है। फिर भी समाजवादी व्यवस्था की भांति ही पूंजीवाद भी एक व्यक्ति पर किसी दूसरे के अधिकार को कदापि मान्यता नहीं दे सकता जबकि गुलाम प्रथा में यह एक सहज स्वीकार्य व्यवस्था रही हैं। समाजवादी व्यवस्था में उत्पादन के लिये किसी व्यक्ति की सेवाऐं भाड़े पर प्राप्त करने पर प्रतिबन्ध लगाए जा सकते हैं। पूंजीवाद में यह तो नहीं होता, पर दीर्घ अवधि के श्रम अनुबंधो की अनुमति वहां भी नहीं मिलती किन्तु सामन्तवादी एवं औपनिवेशिक बागानों में तो यह बन्धुओ मजदूरी व्यवस्था एक आम बात रही है।

## विनिमय अधिकारिता –

बाजार व्यवस्था में व्यक्ति अपने अधिकार की वस्तुओं का अन्य वस्तुओं से विनिमय कर सकता है। यह विनिमय व्यापार, उत्पादन या फिर दोनो के मिले जुले स्वरूप के माध्यम से हो सकता है। अतः अपने अधिकार की वस्तुओं के बदले में अन्य वस्तुओं के जिन संयोजनों को कोई व्यक्ति प्राप्त कर सकता है, उनके समुच्चय को हम उस व्यक्ति की विनिमय अधिकारिता या हकदारी का नाम दे सकते हैं।

प्रत्येक स्वामित्व समूह के आधार पर अनेक विनिमय अधिकारिताओं का निर्धारण हो सकता है। इस निर्धारण प्रक्रिया को ही विनिमय अधिकारिता निरूपण (Exchange Entitlement Mapping) कहा जाता है। इसे हम संक्षेप में E–निरूपण कहेंगे। यह सम्बन्ध प्रत्येक स्वामित्व अवस्था के आधार पर जिन जिन सम्भावनाओं की प्राप्ति सहज हो सकें, उनकी पहचान कराता है। यदि वास्तविक स्वामित्व के आधार पर प्राप्त विनिमय अधिकारिताओं के समुच्चय में खाद्य पदार्थो की पर्याप्त मात्रा का समावेश सम्भव नहीं हो पाता तो निश्चित ही व्यक्ति को भुखमरी का सामना करना पड़ जाएगा। अतः गैर हकदारी के हस्तान्तरणों (दान आदि) के अभाव में E–निरूपणों का स्वरूप उन स्वामित्व समूहों की प्रत्यक्ष पहचान करा सकता है जिनमें भुखमरी से बच पाना सम्भव नहीं होता। ऐसे स्वामित्व समूहों को हम भूखमरी समुच्चय[1] (Starvation Sets) का नाम दे सकते हैं।

---

1. भुखमरी समुच्चय (Starvation Sets) अर्थात् उन वस्तु संयोजनों का समुच्चय जिनमें किसी भी संयोजन में आवश्यक मात्रा में आहार सामग्री शामिल न हों।

स्वामित्व समूह के आधार पर किसी व्यक्ति की विनिमय अधिकारिताओं को निर्धारित करने वाले तत्वों पर इन कारकों का विशेष प्रभाव रहा है।

1. क्या व्यक्ति रोजगार पा सकता है ? यदि हां, तो कितने समय तक तथा किस मजदूरी की दर पर ?
2. अपनी गैर–श्रम सम्पत्तियों को बेचकर व्यक्ति क्या कुछ कमा सकता है, तथा वह जो कुछ खरीदना चाहता है, उसकी लागत क्या होगी?
3. अपनी श्रमशक्ति और अपने व अपने खरीदे हुए संसाधनों से वह क्या कुछ उत्पादित कर सकता है।
4. संसाधनों एवं साधन सेवाओं की लागत और उत्पादन को बेच कर क्या कुछ प्राप्त हो सकता है ?
5. उसे किस प्रकार की सामाजिक सुरक्षा सुविधाऐं उपलब्ध हैं तथा उसके कर आदि दायित्व क्या हैं ?

किसी व्यक्ति की भुखमरी से बच पाने की क्षमता उसके स्वामित्व अधिकार और विनिमय अधिकारिता निरूपणों पर निर्भर रहती हैं। खाद्य पदार्थो की आपूर्ति में व्यापक कमी से खाद्य की कीमतें बढ़ जाती है। उनका व्यक्ति की विनिमय अधिकारिताओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसी कारण व्यक्ति को भुखमरी की समस्या का सामना करना पड़ सकता है। यद्यपि इस प्रकार खाद्य न्यूनता उसे भुखमरी की दशा में पहुंचा सकती है, किन्तु इस दशा का तात्कालिक कारण उसकी विनिमय अधिकारिता में आई गिरावट ही होती है।

यही नहीं विनिमय अधिकारिता में खाद्य आपूर्ति की कमी के अतिरिक्त अन्य कारणों से भी गिरावट आ सकती है। उदाहरण के लिये खाद्य उत्पादन एवं आपूर्ति स्थिर रहते हुए भी यदि समाज का कोई वर्ग विशेष अधिक सम्पन्नता की अनुभूति के कारण अधिक खाद्य पदार्थो की खरीददारी कर उनकी कीमतों को बढ़ाने का कारण बन जाए तो अन्य वर्गो के लिये विनिमय अधिकारिताओं पर विपरीत प्रभाव में किसी तरह का सन्देह नहीं रहता। कुछ आर्थिक परिवर्तन व्यक्ति को रोजगार पाने की क्षमता पर दुष्प्रभाव के माध्यम से उसकी विनिमय अधिकारिताओं पर बुरा असर डाल सकते हैं। इसी प्रकार उनकी मजदूरी दर कीमतों की अपेक्षा पिछड़ सकती है। या फिर उसके उत्पादन में प्रयोज्य संसाधनों के दाम अधिक तेजी से बढ़ सकते हैं। जनसंख्या की तुलना में खाद्या आपूर्ति की भांति ही थे उपर्युक्त प्रभाव भी विनिमय अधिकारिताओं पर अपनी छाप अवश्य छोड़ते हैं।

विनिमय अधिकारिताऐं [1]केवल बाजार के लेने देन पर आश्रित नहीं रहतीं। इन पर सरकार द्वारा सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रदान सुविधाओं आदि का भी प्रभाव पड़ता है। ऐसे

---

1. विनिमय अधिकारिता अर्थात अपनी सम्पत्ति श्रम बेचकर जो कुछ खरीदने का अधिकारी हो सकता है उसे विनिमय अथवा व्यापार अधिकारिता कहते हैं।

कार्यक्रम में बेरोजगारों को सहायता, वृद्धों को पेंशन, और गरीबों को कुछ लाभ आदि प्राप्त हो सकते हैं। ये सब भी व्यक्ति की विनिमय अधिकारिताओं का हिस्सा होते हैं पर ये तभी उपलब्ध होते हैं जब व्यक्ति अन्य प्रकार की विनिमय अधिकारिताओं से वंचित रह जाता है। बेरोजगारी भत्ता तभी मिलता है जब व्यक्ति को सामान्य दर पर रोजगार नहीं मिल पाता। जैसे ही व्यक्ति किसी पूर्व निश्चित गरीबी रेखा से ऊपर उठता है, उसे विशेष गरीबी सुविधाऐं मिलनी बन्द हो जाती हैं। ये सामाजिक सुरक्षा प्रावधान बाजार के विनिमय एवं उत्पादन प्रक्रियातन्त्र के प्रतिपूरक होते हैं। इन दोनो से मिलकर ही निजी स्वामित्वपूर्ण बाजार व्यवस्था में किसी व्यक्ति की विनिमय अधिकारिताओं का निर्धारण होता है।

# अधिकारिता विश्लेषण विधि

## सम्पदा एवं विनिमय :-

भुखमरी एवं अकाल के प्रति अधिकारिता (Entitlement) विश्लेषण विधि लोगों की समाज में सुलभ, वैधानिक तरीकों से खाद्य आहार पर नियत्रंण कर पाने की क्षमता पर केन्द्रित रहती है। इन तरीकों से उत्पादन सम्भावनाओं, व्यापार के अवसरों तथा सरकार के प्रति अधिकारों के प्रयोग आदि सम्मिलित रहते हैं। अतः कोई व्यक्ति तभी भूखा रहेगा जब उसके पास खाद्य पदार्थो पर नियन्त्रण की सामर्थ्य का अभाव हो या वह भूख से बचने की अपनी क्षमता का प्रयोग न करे। अधिकारिता विश्लेषण में खाद्य आहार पर नियन्त्रण सामर्थ्य के अभाव पर ही ध्यान दिया गया है, दूसरे इसमें समाज में विधान संगत मानी जाने वाले नियत्रंण विधियों पर ही ध्यान दिया गया है। यद्यपि इस विश्लेषण विधि का स्वरूप बहुत व्यापक है, फिर भी इसमें भुखमरी के सभी कारणों का समावेश नहीं हो पाया है। इन बच रहे कारणों में लूटमार जैसे गैर वैधानिक कार्य तथा अति रूढ़ खान पान की आदतों [1] के कारण आई चयन की विफलताऐं भी शामिल हैं।

खाद्य सामग्री का स्वामित्व अत्यन्त प्राचीन सम्पत्ति अधिकार है। प्रत्येक समाज में कुछ न कुछ नियम इस अधिकार का स्वरूप निर्धारित करते हैं अधिकारिता विधि में प्रत्येक व्यक्ति के खाद्य पदार्थ सहित समस्त वस्तु संयोजनों पर अधिकारों का ही विश्लेषण होता हैं। अतः इस विधि के अनुसार भुखमरी उसी समय पैदा होती है, जबकि किसी व्यक्ति के अधिकार में आसकने वाले संयोजनों में खाद्य पदार्थो की मात्रा पर्याप्त नहीं रहे।

किसी पूर्णतः निर्देशित अर्थव्यवस्था में व्यक्ति i को सीधे से वही वस्तु संयोजन मिल जाता है जो उसके लिए नियत किया गया हो। किसी न किस रूप में इस प्रकार नियत संयोजन का आबंटन प्रायः सभी अर्थव्यवस्थाओं में प्रचलित रहता है। जैसे वृद्धावासों या मनोरोगियों के गृहों आदि में किन्तु सामान्यतः बहुत से संयोजनों में चयन की सम्भावना उपलबध होती है। इस प्रकार व्यक्ति i की अधिकारिताओं के समुच्चय को Ei द्वारा अभिव्यक्त कर सकते हैं। Ei उन सभी वस्तु संयोजनों का समुच्चय है, जिनमें से किसी भी एक को वह व्यक्ति चुन सकता हैं।

1. यदि कोई व्यक्ति केवल चावल खाता है पर चालव की फसल पूरी तरह बरवाद होने पर भी वह गेंहू का प्रयोग नहीं करता तो उसकी भूख चयन की विफलताओं का परिणाम होगी।

निजी स्वामित्व और व्यापार विनिमय [1] व्यवस्था में Ei दो प्राचलों (Parameters) पर निर्भर करता है, ये है व्यक्ति की सम्पदा (वह किस संयोजन का मालिक है।) तथा विनिमय अधिकारिता का फलनीय निरूपण अर्थात् अपने सम्पदा – संयोजन के विनिमय से वह व्यक्ति किन किन संयोजनों को पाने में समर्थ हो सकता है।[2] उदा0 के लिए एक किसान के पास कुछ भूमि, अपना श्रम व थोड़े बहुत अन्य संसाधन है। यही उसकी सम्पदा है। इनके आधार पर वह कुछ खाद्यान्न उत्पादन कर सकता है, जो उसके अपने अधिकार में होंगे। या फिर वह अपने श्रम को बेच कर मजदूरी पा सकता है। उस राशि से वह अन्न तथा अन्य वस्तुऐं खरीद सकता है। या फिर वह नकदी देने वाली फसलें उगाकर अपना उत्पादन बेचकर बदले में अन्य वस्तुऐं आदि खरीद सकता हे। इस प्रकार अनेक सम्भावनाऐं हो सकती है। इस तरह से प्राप्त सभी वस्तु संयोजनों को हम उस किसान की सम्पत्ति की विनिमय अधिकारिता कहते हैं। इस प्रकार की विनिमय अधिकारिता का फलन विभिन्न सम्पदा संयोजनों से प्राप्त वैकल्पिक विनिमय अधि ाकारिताओं का निर्धारण करता है।

विनिमय अधिकारिता निरूपण या E- निरूपण समाज की कानूनी, राजनैतिक, आर्थिक एवं अन्य सामाजिक विशेषताओं और व्यक्ति के सामाजिक व्यवस्था में स्थान पर निर्भर करता है। परम्परागत अर्थशास्त्र में इसका सामान्यतम उदाहरण सम्पत्ति संयोजन का बाजार में पूर्वनिर्धारित सापेक्ष कीमतों पर उतने ही मूल्य के किसी संयोजन से विनिमय होगा। यहां विनिमय अधिकारिता का सहज स्वरूप बजट समुच्चय ही हो जाता है।

उत्पादन का समावेश करने पर E निरूपण उत्पादन सम्भावनाओं तथा संसाधनों और उत्पादों के व्यापार के अवसरों पर भी निर्भर हो जाता है। इसमें उत्पादन के बंटवारे के कानूनी अधिकार भी शामिल हो जाऐंगे। पूंजीवाद में उद्यमी को ही उत्पादन का स्वामी माना जाता है कई बार तो इन अधिकारों का नियमन करने वाली सामाजिक परम्पराऐं बहुत ही जटिल होती है जैसे, किसान परिवार के गांव से बाहर चले गए सदस्यों का खेत की उपज में हिस्सा निर्धारण करने के नियम, आदि।

सामाजिक सुरक्षा प्रावधान भी E निरूपण में अवश्य प्रतिनिम्बित होते हैं इनमें शामिल होंगे: रोजगार न मिल पाने पर बेरोजगारी भत्ता, आय अति न्यून रह जाने पर सरकार से सहायता प्राप्ति का अधिकार, आदि। इसी तरह रोजगार गारण्टी भी है समाजवादी व्यवस्था में इसका स्वरूप न्यूनतम कीमत पर अपना श्रम सरकार को बेचने का विकल्प होता है। E निरूपण करो के प्रावधानों पर भी निर्भर करता है।

---

1. यहां व्यापार को अन्य व्यक्तियों से विनिमय तथा उत्पादन को प्रकृति से विनिमय का नाम दिया जा सकता है।
2. गणितीय दृष्टि से विनिमय अधिकारिता Ei (.) एक सम्पदा सदिश (Vector) x को वैकल्पिक वस्तु– संयोजनों के सदिश Ei (x) में परिवर्तित कर सकता है।

माना कि सभी वस्तु संयोजनों का समुच्चय जिनमें से प्रत्येक के व्यक्ति i की न्यूनतम आहार आवश्यकताऐं भी पूरी हो जाती हो, Fi है। व्यक्ति i विपरीत अधिकारिता सम्बन्धों के कारण भूखा तभी रहेगा जब कि वह अपनी सम्पदा और विनिमय अधिकारिता के आधार पर समुच्चय Fi के किसी भी सदस्य को पाने का अधिकारी नही बन पाता। अतः उसका भुखमरी समुच्चय Si उन सम्पदाओं का समुच्चय होगा जिनके विनिमय अधिकारिता समुच्चयों में कोई भी ऐसे संयोजन नहीं हो, जिससे उस व्यक्ति की न्यूनतम आहार आवश्यकताऐं पूरी हो सके।

## भुखमरी एवं अधिकारिता विफलताएं –

यदि व्यक्ति i की सम्पदा सिमट कर भुखमरी समुच्चय Si में सीमित हो जाए तो उसे भूखे रहने के अतिरिक्त कोई अन्य चारा नहीं रहता। इस प्रकार सम्पदा सिमटने के दो कारण हो सकते हैं उसकी सम्पदा के संयोजन में ही कमी आ सकती है। दूसरे, विनिमय अधिकारिता निरूपण में विपरीत परावर्तन भी इसका कारण बन सकता है। खाद्य एवं अखाद्य वस्तुओं के द्विआयामी विशुद्ध विनिमय प्रतिमान में इस भेद को चित्र की सहायता से भी देखा जा सकता है।
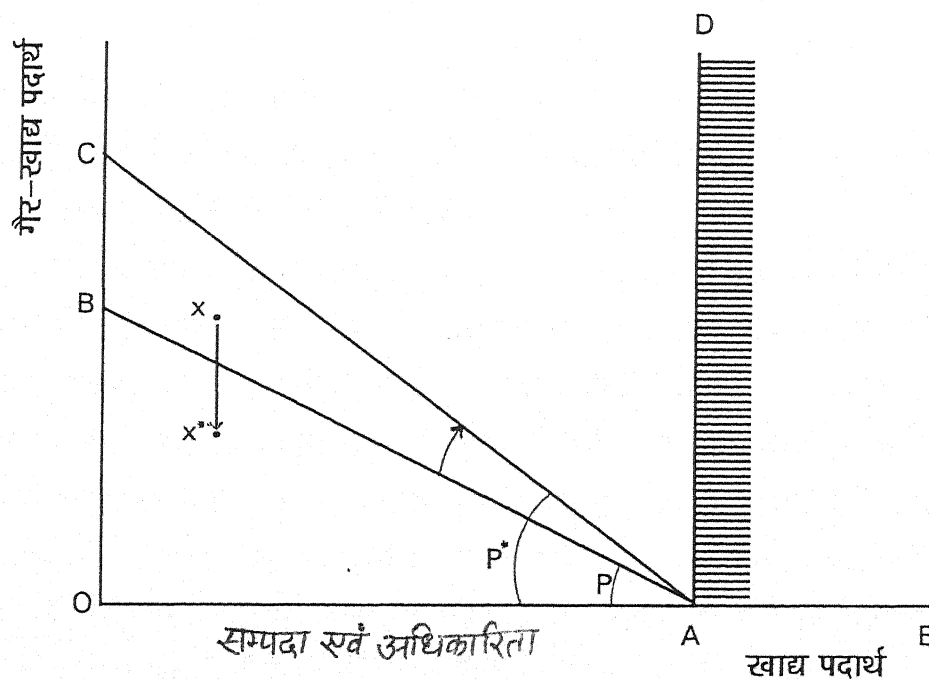
चित्र में विनिमय अधिकारिता का साधारण स्वरूप स्थिर विनिमय दर ही प्रयुक्त किया गया है। यदि यह कीमत अनुपात P तथा न्यूनतम खाद्य आवश्यकता OA हो तो भुखमरी समुच्चय Si को त्रिभुज OAB द्वारा दिखाते है – क्योंकि इस त्रिभुज के A के अतिरिक्त अन्य किसी भी बिन्दु पर न्यूनतम खाद्य आवश्यकता OA की पूर्ति नहीं हो पाती। यदि व्यक्ति का सम्पदा सदिश (Vector) x हो तो वह भूख से बचा रह सकता है। किन्तु उसकी इस क्षमता में दो प्रकार से कमी आ सकती है। (i) यदि उसकी सम्पदा कम होकर सदिश x* पर पहुंच जाए या फिर (ii) कीमत

अनुपात परिवर्तित होकर P' पहुंच जाए। इस नए विनिमय अधिकारिता निरूपण से उसका भुखमरी समुच्चय परिवर्धित होकर त्रिभुज OAC बन जाता है। इसमें उसकी पुरानी सम्पदा x उसे भूख से नहीं बचा पाती।

अतः इस बात को सहज ही समझा जा सकता है कि सम्पदा सदिश की सिमटन से किसी न किसी जनसमूह को भूख का सामना करना पड़ सकता है। विकासशील देशो की गरीब ग्रामीण जनता को कितनी ही बार ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ सकता है। इसका कारण जमीन छिन जाना या पशुधन बिक जाना हो सकता है। विनिमय अधिकारिता के वर्तन इतने सहज स्पष्ट नहीं होते फिर भी सम्पदा स्वामित्व में स्थिरता रहने पर सापेक्ष कीमत परिवर्तन के कारण भूख का सामना हो सकता है।[1]

उदाहरण– एक व्यक्ति ने अपने मकान का आधा भाग किराए पर चढ़ा रखा है, वह इसी किराए से अपना निर्वाह करता है। यदि खाद्य पदार्थो की कीमतें बढ़ जाऐं पर किराया बढ़ा पाना सम्भव नहीं हो तो उसका निर्वाह दूभर हो जाएगा। इस प्रकार की स्थिति असम्भव भी हो सकती है, यदि उसकी सम्पदा में ही पर्याप्त खाद्य सामग्री रही होती । चित्र में ऐसी पर्याप्त खाद्य सामग्री का क्षेत्र रेखा AD से दाहिनी ओर रहता है। अतः भुखमरी की हालत का पैदा होना या नहीं होना व्यक्तियों की सम्पदा की वस्तु संरचना पर भी निर्भर करेगा।

सेन ने अधिकारिता विश्लेषण विधि की गणितीय व्याख्या इस प्रकार की है।

## A.1) नियत/स्थिर कीमत पर विनिमय –

X द्वारा n आयामी तात्विक वितान (n-dimensional Real space) में परिभाषित अऋणात्मक बहुपद को अभिव्यक्त किया जाता है, इस प्रकार यह अक्षर X'n' वस्तुओं की मात्राओं को व्यक्त करता है। यह सभी वस्तुओं के अऋणात्मक सदिशों (Vectors)[2] का समुच्चय (Set) है $\Upsilon$ द्वारा हम X के एक प्राधिकृत समुच्चय (Power set) को अभिव्यक्त करते हैं। अर्थात x के सभी उपन्समुच्चयों के समुच्चय को को हम $\Upsilon$ द्वारा दिखाते हैं, किसी व्यक्ति के स्वामित्व वाली (श्रमशक्ति सहित) सभी वस्तुओं के सदिश को x द्वारा अभिव्यक्त करें। उस व्यक्ति का वास्ता इन वस्तुओं की जिन कीमतों से पड़ता है उन्हें सदिश P द्वारा दिखाया जा सकता है।

व्यक्ति द्वारा धारित वस्तु समूह x के आधार वह जिन विनिमय अधिकारिताओं को प्राप्त कर सकता है, उनके समुच्चय को E(x) द्वारा दिखाया गया है, यह उन सदिशों का समुच्चय है,

---

1. E निरूपण में अनेक कारणों से बदलाव आ सकते हैं। जैसे बेरोजगारी की वृद्धि, सापेक्ष कीमतों या व्यापार की शर्तो में परिवर्तन या फिर सामाजिक सुरक्षा प्रावधानों में परिवर्तन आदि।
2. सदिश (Vector): यह गणित से ली गई संकल्पना है – इसमें प्रत्येक सदस्य से जुड़ी किसी एक आयाम सम्बन्धी जानकारी रहती है।

जिसमें से किसी भी एक को वह व्यक्ति x के बदले में पा सकता है। अतः

(A1) $E(x) = \{y|y \varepsilon x \& Py \leq Px\}$

अर्थात् विनिमय अधिकारिता सदिश E (x) उस सदिश Υ के समान है जो कि x का एक अंग है और जिसका नियत बाजार कीमतों पर मूल्य व्यक्ति की सम्पदा के मूल्य से अधिक नहीं है।

फलन E(.) जो X तथा Υ को जोड़ता है। व्यक्ति का विनिमय अधिकारिता निरूपण (Exchange Entitlement Mapping) कहलाता है। संक्षेप में इसे E निरूपण कहा जा सकता है।

यहाँ दो बातों का स्पष्टीकरण आवश्यक है। एक तो यह बात ध्यान देने योग्य है कि $x \varepsilon E(x)$ अर्थात व्यक्ति अपनी सम्पदा से ही सन्तुष्ट रह सकता है। वह बाजार में जाने को बाध्य नहीं किया जा सकता – केवल अपने उत्पादन का प्रयोग कर निर्वाह कर सकता है।

दूसरे (A1) द्वारा अभिव्यक्त विनिमय में सम्पत्ति सदिश x की सारी वस्तुओं की मात्रा को बाजार में बेचना भी आवश्यक नहीं है। व्यक्ति उस सम्पत्ति में से जिस वस्तु की चाहे जितनी मात्रा अपने प्रयोग के लिए रख सकता है। इसका शेष मात्राओं की विनिमय की जो सम्भावनाऐं (A1) द्वारा दिखाई जा रही है, उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।[1]

न्यूनतम आहार आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकने वाले सभी सदिशों के समुच्चय को Fद्वारा अभिव्यक्त करते हैं, यह समुच्चय निश्चित रूप से हमारे बृहत समुच्चय x का ही एक सही उपसमुच्चय (Proper Sub-set) होगा, अर्थात $F \subseteq x$ । गैर–अधिकारिता हस्तान्तरणों/ अधिग्रहणों के अभाव में (लूट कर खाने की सम्भावना नहीं होने पर) यदि $E(x) \cap F = \emptyset$ तो भुखमरी सुनिश्चित हो जाएगी। अर्थात् यदि विनिमय अधिकारिता E(x) एवं आहार समुच्चय F में कोई भी सदिश सांझा नहीं हो तो व्यक्ति का भूखा रहना निश्चित होगा। दूसरे शब्दों में व्यक्ति भुमखरी समुच्चय S उन x सदिशों का समुच्चय होगा जिनकी विनिमय अधिकारिताओं E(x) में कोई भी ऐसा सदिश नहीं हो जो न्यूनतम आहार की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। अतः SF तथा E निरूपण पर निर्भर करेगा।

(A2) $S = \{x|x \varepsilon X \& E(x) \cap F = \emptyset\}$

उदा0 द्वारा इसे और स्पष्ट किया जा सकता है। यहाँ वस्तु I आहार है। चित्र A1 में बिन्दु OA न्यूनतम आहार की आवश्यकता दर्शाता हैं दोनों वस्तुओं की कीमतों का अनुपात P है। अब क्षेत्र OAB व्यक्ति का भुखमरी समुच्चय होगा क्योंकि इस क्षेत्र में किसी भी बिन्दु पर व्यक्ति की न्यूनतम आहार आवश्यकता पूरी नहीं हो पाती।

अधिक व्यापक स्वरूप में आहार में कई वस्तुऐं शामिल होंगी और न्यूनतम आहार आवश्यकताओं की पूर्ति कई तरह से सम्भव होगी। ऐसी स्थिति में हम आहार आवश्यकता पूर्ति की न्यूनतम लागत का आकलन कर सकते हैं। F के सभी सदिशों की लागत आकलित कर उन्हीं

1. गरीबी और अकाल – अमर्त्यसेन – पृष्ठ – 153 ।

में से न्यूनतम का चयन हो पायेगा। अतः

(A3) $m(p,F) = \min_{x} px|x \varepsilon F$

अर्थात न्यूनतम आहार लागत ऐसे सदिश x की लागत है जो F का तत्व है तथा F के सभी तत्वों की तुलना में जिसकी लागत सबसे कम रहती है।

अतः भुखमरी समुच्चय S का वैज्ञानिक स्वरूप इस प्रकार होगा :

(A4) $S = \{x | x \varepsilon X \& Px < m(p.F)\}$

और आखिर में यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि व्यक्ति की अभिरूचियों के आधार पर F का निर्धारण हो सकता हैं सामान्य गरीबी के स्थान पर इन संकल्पनाओं द्वारा अकाल विश्लेषण करने में अभिरूचियों के संशोधन की भूमिका प्रायः सीमित ही रहती है। हम अनिवार्य गैर खाद्य आवश्यकताओं को भी F में ही स्थान दे सकते हैं।

## A.2 परिवर्तनशील कीमतों की दशा में विनिमय –

यदि हमारा उपयुक्त व्यक्ति सहज भाव से बाजार कीमतों को शिरोधार्य करने वाला व्यक्ति नहीं हो तो हमारा उल्लिखित साधारण प्रतिमान कार्य नहीं कर पाएगा। इसके संम्बन्ध (Al), (A3) तथा (A4) विशेष रूप से असफल हो जाएगे। सामान्यतः हम निवल लागत (Net Cost) फलन f(y.z) के माध्यम से विनिमय की सम्भावनाओं को अभिव्यक्त कर सकते है। यह निवल लागत x को बेचने एवं y को खरीदने की निवल लागत है। इसका स्वरूप यह होगा।

(A5) f(y,z) एक तान्त्विक मूल्यधारण करने वाला फलन है जहाँ

$f(0,0) = 0$ (यहाँ 0 एक शून्यक सदिश है)

अब E-निरूपण की इस प्रकार पुनः परिभाषा हो सकती है।

(A6) $E(x) = \{x - z + y) | \; y,z \varepsilon X \& z \leq x \& f(y,z) \leq 0\}$

यहाँ Z व्यक्ति द्वारा बेची गई वस्तुओं की मात्राओं का सदिश है तो Y उस द्वारा खरीदी गई मात्राओं का सदिश है स्वभाविक ही है कि $x \varepsilon E(x)$

व्यक्ति का भुखमरी समुच्चय अभी भी सम्बन्ध (A2) द्वारा दिखाया जा सकता है पर उसे (A5) एवं (A6) के साथ मिला कर ही दिखाना होगा।

## A.3 प्रत्यक्ष उत्पादन एवं व्यापार –

वह व्यक्ति अपने सम्पत्ति सदिश को केवल व्यापार या उपभोग ही नहीं वरन् उत्पादन के लिये भी प्रयोग कर सकता है। उसे उपलब्ध उत्पादनों सम्भावनाओं को एक अन्य निरूपण Q(.) द्वारा दिखाया जा सकता है। यह निरूपण भी x तथा ϒ को जोड़ता है। इसमें आदानों (Inputs) के सदिश S के आधार पर उत्पादन समुच्चय Q(S) में वह सभी उत्पादन सदिश सम्मिलित है, जिनका वह व्यक्ति उत्पादन कर सकता है। अतः

(A7) Q(.);x से ϒ का निरूपण है जहां

भुखमरी समुच्चय A-1
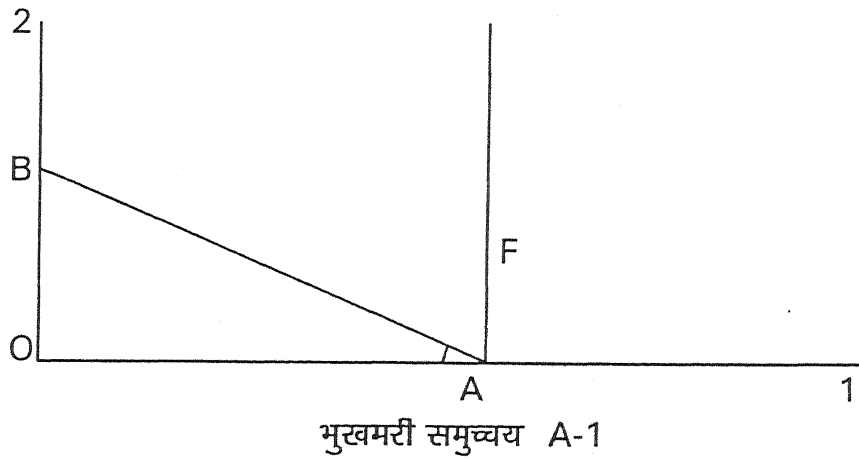
Q(O) = {O} अर्थात् आदान शून्य होने पर उत्पादन भी शून्य होगा।

अब हमारे इस व्यक्ति के पास x है, वह आदानों की भांति प्रयोग करने के लिए r तथा उपयोग के लिये Y खरीदता है। इनकी लागत चुकाने के लिये z की बिक्री करता है और x का ही एक अंश 5 तथा खरीदा हुआ r प्रयोग कर q का उत्पादन करता है। अतः अब उसकी विनिमय अधिकारिता का निरूपण इस प्रकार होगा।

(A8) $$E(x) = \{(x\text{-}S + q\text{-}z + y)\} r,s,y,z \varepsilon X \& (s + z) \leq (x + q) \& q \varepsilon Q(s + r) \& f(r + y, z) \leq O\}$$

हम f(.) तथा Q(.) फलनों की परिभाषा में करो, सहाय्यों (Subsidies) तथा सामाजिक सुरक्षा आदि का समावेश कर सकते हैं।

भुखमरी समुच्चय अभी भी (A2) ही है, उसे हम इस सम्बन्ध (A8) के साथ रख सकते हैं।

**A.4 विशेष उदाहरण** – अब समीकरणों (A2), (A5), (A7) तथा (A8) को प्रतिमान का सामान्य स्वरूप मानकर कुछ विशेष दशाओं पर विचार किया जा सकता है।

पहली विशेष शर्त : (i) r = O

दूसरी विशेष शर्त : (ii)Q(s) = {S} एक एकिक समुच्चय है, S अप्रभाावित रहता है तथा तीसरी विशेष शर्त : (iii) f (y,z)=P(y-z)। यहाँ P एक अऋणात्मक n पदीय सदिश है। यदि हम (i) (ii) तथा (iii) शर्तो को एक साथ स्वीकार करें तो हम पुनः A-1 में चर्चित अवस्था में पहुंच जायेंगे, जहाँ विनिमय अधिकारिता (Al) और भुखमरी समुच्चय (A4) द्वारा प्रकट किया गया यदि हम केवल (i) तथा (ii) शर्तो को माने तो फिर हम बिना प्रत्यक्ष उत्पादन की अवस्था की अवस्था के होंगे जहां विनिमय कीमतें भी स्थिर नहीं रहती। यह अवस्था मूलतः A-2 अवस्था जैसी ही है। क्योंकि यदि S के प्रयोग से सम्भव उत्पाद S ही रहता है तो इसे उत्पादन कहना विचित्र सा लगेगा यद्यपि Q(S) उत्पादन होने का संकेत अवश्य करता है।
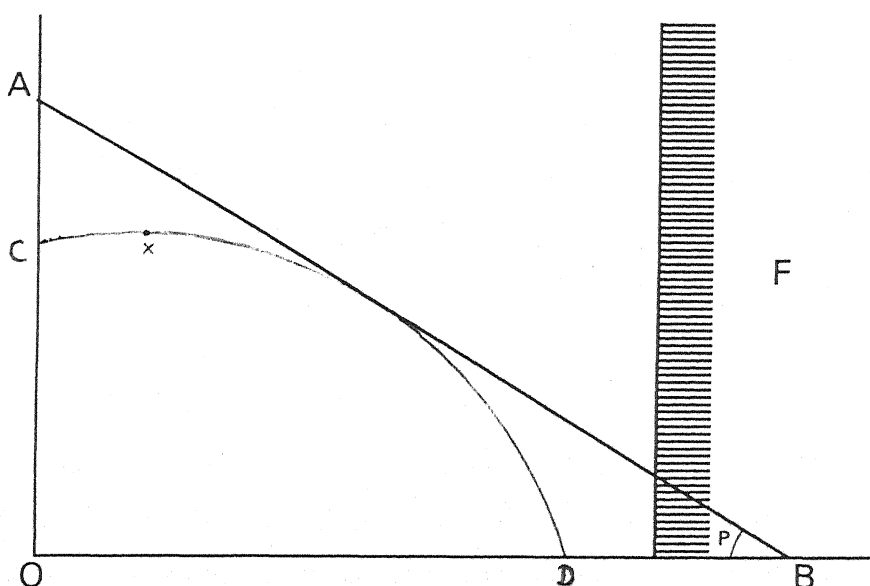
आत्म उत्पादन एवं प्रतियोगी व्यापार की दशा में अधिकारिता समुच्चय

यदि केवल (i) शर्त मानी जाती है तो प्रत्यक्ष उत्पादन केवल अपने संसाधनों के प्रयोग द्वारा ही हो पाता है। व्यक्ति बाहर से आदानों की खरीदारी कर एक उद्यमी का स्वरूप धारण नहीं कर पाता। इसे तीसरी शर्त (iii) के साथ मिलकर हम उत्पादन एवं स्पर्धात्मक व्यापार का साधारण प्रतिमान बना सकते हैं। OAB यहाँ पर E(x) को अभिव्यक्त करता है। CD उत्पादन सम्भावना वक्र है और वस्तुओं की विनिमय दर कोण ABO द्वारा निर्दिष्ट होती है।[1]

## A.5 आर्थिक प्रस्थिति एवं उत्पादन विधाएं –

एक भूमिहीन श्रमिक, जिसके पास श्रम के अतिरिक्त कोई सम्पत्ति नहीं है, और स्वयं कुछ उत्पादन कर पाने में समर्थ नहीं है, उसकी दशा उपर्युक्त शर्तों (i) तथा (ii) के अनुरूप ही होगी। यदि वस्तुओं की कीमतें तथा मजदूरी दर नियत हो तो फिर हम A-1 में चर्चित और भी सरल प्रतिमान तक पहुंच जाते हैं। हां इसके लिये (iii) शर्त भी मान्य करनी होगी।

छोटा किसान, जो अपनी भूमि पर अपनी मेहनत से फसल उगाता है, उसकी अवस्था का चित्रण केवल (i) शर्त द्वारा ही हो पाता है। किन्तु आमतौर पर छोटे किसानों को भी कुछ न कुछ आदान खरीदने पड़ ही जाते हैं। (जैसे फसल की कटाई के समय अतिरिक्त मजदूरों की जरूरत पड़ना) पहली शर्त कुछ अतिशयोक्ति पूर्ण लगती है। अतः वास्तविक स्थिति की झलक तो A.3 में वर्णित किसी प्रतिमान में ही मिल पाएगी।

बटाईदार कृषक भी इसी वर्ग में सम्मिलित होगा। वह उत्पादन करता है और उसका कुछ भाग प्रतिफल के रूप में पाता है। अतः उसका Q(.) उसका प्रतिफल–फलन बन जाएगा। (यह समग्र उत्पादन का फलन नहीं रहेगा) वह कुछ आदान खरीदता भी है। यदि बटाईदार के श्रम के

---

1. गरीबी और अकाल – प्रो0 अमर्त्य सेन – पृ0 157 ।

अतिरिक्त अन्य सभी संसाधन भूस्वामी द्वारा प्रदान किए जाते हो तो फिर शर्त (i) ही लागू हो जाती है। जहाँ Q(.) केवल उसके श्रम का फलन बन जाएगा।

किन्तु बड़े किसान तो इनमें से किसी भी शर्त से बंधे नहीं दिखते। हाँ यदि वे स्वयं खेती नहीं करते हों तो एक नयी शर्त गढ़ी जा सकती है कि हमें उसका अपना श्रम सम्मिलित नहीं है यदि ऐसा किसान अपनी भूमि नियत भाड़े पर दे देता है तो उसकी अवस्था A.1 तथा A.2 में चर्चित प्रतिमानों से मेल खा सकती है, यहाँ भूस्वामी की अधिकारिताओं में उत्पादन का स्तर शामिल नहीं होगा। यदि वह बटाई पर जमीन देता है तो उत्पादन की दशाओं का उसकी अधिकारिताओं में समावेश इस बात पर निर्भर रहेगा कि वह उत्पादन सम्बन्धी निर्णय प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेता है या नहीं, यदि वह भागीदारी करता है तो Q(.) के माध्यम से उपलब्ध चयन अवसर उसे सुलभ हो जाते हैं, अन्यथा वह तो एक प्रतिफल की आशा में भूमि की सेवाऐं बेचने वाला रह जाता है। यह प्रतिफल भी नियत नहीं रहता पर एक बार बटाईदारी का अनुवन्ध करने के बाद उसका कोई नियंत्रण भी नहीं रह जाता।

कृषि कार्यो से बाहर भी हम इसी प्रकार की अवस्थाऐं देख सकते हैं, कहीं औद्योगिक श्रमिक वर्ग है जो केवल अपनी श्रमशक्ति का विक्रय करता है तो कहीं पूंजी है जो केवल बाहर से खरीदे गए आदानों का प्रयोग कर उत्पादन करता है।

यदि श्रमिक को रोजगार नहीं मिल पाता तो उसकी अधिकारिताऐं सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था पर निर्भर रह जाती है। यदि बेरोजगारी भत्ता यदि सुनिश्चित हो तो उसकी अधिकारिताओं को श्रमशक्ति से जुड़ी विशेष अधिकारिता माना जा सकता है। यहां एक प्रकार से श्रम के लिये दोहरी कीमत व्यवस्था का प्रचलन होता है यदि रोजगार मिल जाता है तो सामान्य मजदूरी दर भी मिलती है। यदि रोजगार सुलभ नहीं हो पाता तो फिर सामाजिक सुरक्षा बीमा लाभ 'b' मिलता है हाँ $W > b$ रहेगा। अधिकारिताऐं इस बात पर निर्भर नहीं है कि वह क्या अपेक्षा करता है। इनका स्वरूप तो इस तथ्य के अनुसार निर्धारित होगा कि उसे वास्तव में रोजगार मिल पाता है अथवा नहीं। सारा दारोमदार व्यक्तिपरक अपेक्षाओं पर नहीं वास्तविक संभावनाओं पर रहता है। अतः किसी भी विशेष बाजार व्यवस्था में सभी श्रमिकों की अधिकारिताओं का स्वरूप एक जैसा होना आवश्यक नहीं है – सब कुछ इस बात पर निर्भर रहेगा कि वह व्यक्ति मजदूरी दर पाने में सफल होता है या उसे सामाजिक सुरक्षा बीमा के सहारे निर्वाह करना पड़ता है। यदि सामाजिक बीमा व्यवस्था नहीं हो तो फिर बेरोजगार एवं रोजगार वाले मजदूर के बीच का अन्तर बहुत भारी हो जाता है। बेरोजगार की श्रमशक्ति की अधिकारिता तो शून्य रह जाती है। यह भी उन कारणों में से एक है जिनकी वजह से विमिनय अधिकारिता को व्यापार की शर्तो (Terms of Trade) की व्युत्पत्ति नहीं माना जा सकता/वस्तुतः अधिकारिताओं में व्यापार एवं व्यापार शून्यता की संभावना भी निहित रहती है। एक अन्य कारण यह भी है कि अधिकारिता तो उत्पादन संभावनाओं को भी (अपने आप में) समाहित किए रहती है।

## A.6 आत्म उत्पादन अधिकारिता –

विशुद्ध रूप से विनिमय आधारित अधिकारिताओं और व्यापार रहित विशुद्ध उत्पादन अधिकारिताओं में भेद करना बहुत उपयोगी हो सकता है। हम विशुद्ध व्यापार अधिकारिता सम्बन्ध T(.) को उसी प्रकार निरूपित कर सकते हैं, जैसे उत्पादन सम्भावना नहीं रहने पर विनिमय अधिकारिता सम्बन्ध की परिभाषा की गई अब उत्पादन सम्भावनाओं को T(.) T निरूपण में समाहित करने का प्रयास नहीं रहेगा।

(A9) $T(x) = \{(x\text{-}z+y)/y, z \varepsilon X and z \leq X \text{ and } f\ (y,z) \leq O\}$

दूसरी विशुद्ध अवस्था वह होगी जिसमें केवल उत्पादन होता है – विनिमय बिल्कुल नहीं होता इसमें हम विशुद्ध उत्पादन अधिकारिता P(.) की परिभाषा कर सकते हैं।

(A10) $P(X) = \{(X\text{-}s+Q)\ \ S \varepsilon X \& s \leq X \& Q \varepsilon Q(s)\}$

यह बात सहज जाँची जा सकती है कि

$T(X) c E(x)$ और $P(x) c E\ (x)$

किन्तु सामान्यतः $E(x) \neq T(x) U P(x)$

यह भी ध्यान रहे कि x तो T(x) तथा P(x) दोनो में ही सम्मिलित रहता है। आत्म उत्पादन अधिकारिता सम्बन्ध से हम जान सकते हैं कि शेष अर्थव्यवस्था से अलग यलग रहकर कोई व्यक्ति क्या कुछ पा सकता है। यदि $P(x) \cap F \neq \emptyset$ तो शेष अर्थव्यवस्था में कुछ भी होता रहे, इस व्यक्ति को भूखा नहीं रहना पड़ता। जब शेष अर्थव्यवस्था के बाजार में व्यापार सम्बन्धों में भारी उतार चढ़ाव आ रहे हो तो इस बात का महत्व बहुत ही बढ़ जाता है। अकाल जैसी अवस्था में तो ऐसा प्रायः होता है। अतः $BP(x) \cap f \neq \emptyset$ को हम व्यापार निरपेक्ष सुरक्षा का नाम दे सकते हैं।

सामान्य व्यापक सन्तुलन से जुड़ी रचनाओं में सामान्यतः यह मानकर चला जाता है कि व्यक्ति को व्यापार निरपेक्ष सुलभ होती है। इस बात को त्जलिंग कूपमैन्स (Tjalling Koopmans) ने इन शब्दों में प्रस्तुत किया है। वे मानते है कि आवश्यक होने पर प्रत्येक उपभोक्ता अपने संसाधनों तथा बिना विनिमय के अपने श्रम के प्रत्यक्ष प्रयोग द्वारा ही गुजारा चला सकता है। यही नहीं,उसके पास फिर भी कुछ न कुछ श्रम बचा रहता है, जिसके लिए किसी भी सन्तुलन अवस्था में धनात्मक कीमत भी निर्धारित हो जाती है। किन्तु यह मान्यता बहुत ही भारी सिद्ध होती है। आधुनिक समाज में अधिकांश मानव इस मान्यता की कसौटी पर खरे नहीं उतरते। एक किसान, जो अनाज उगाता है उसे इस प्रकार की बाजार निरपेक्ष सुरक्षा सुलभ हो सकती है पर केवल श्रमधारी औद्योगिक मजदूर के लिये तो ऐसी कोई संभावना नहीं होती है। यही नहीं औद्योगिक पूंजीपति की दशा भी कुछ अलग नहीं होगी। (यदि वह अपने पास खाद्य वस्तुओं का भण्डार जमा करके रखता हो। उसकी भी खाद्य अधिकारिता बाजार में अन्य उत्पादन बेचकर बदले में आहार सामग्री खरीदने की शक्ति पर ही निर्भर रहती है। प्रत्यक्ष उत्पादन अथवा आत्म उत्पादन

अधिकारिता का यहां विशेष महत्व नहीं रह जाता।

ग्रामीण व्यवस्था के भूमिहीन श्रमिक भी केवल विनिमय द्वारा ही आहार अधिकारिता पा सकते हैं। उनके और अन्य किसानों के बीच का अन्तर भी बहुत भारी होता है। वस्तुतः केवल श्रमध ारी वर्ग के प्रादुर्भाव एवं विस्तार (मार्क्सीय विचारों के अनुसार जिनके पास एक मात्र बेचने योग्य वस्तु श्रम ही होता है) के कारण व्यापार निरपेक्ष सुरक्षा का तो प्रायः अभाव ही रहता है। इस प्रकार की व्यवस्था में अकाल की संभावनाऐं और अधिक हो जाती है। आर्थिक विकास का वह सोपान जहां मजदूरी के लिये काम करने वाला श्रमिक वर्ग तो विकसित हो गया हो किन्तु अच्छी सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था का विकास नहीं हा पाया हो, अकाल आदि से सहज ही पीड़ित हो सकता है।

अन्ततः भूमिहीन ग्रामीण जनसंख्या की विनिमय अधिकारिताऐं भी भूमि पट्टा व्यवस्था (Tenancy Arrangements) पर निर्भर रहती हैं यदि पट्टे की निश्चितता तो हो व्यापार के तत्वों की उपस्थिति के बावजूद इन किसानों की अधिकारिताऐं प्रत्यक्ष उत्पादन जैसी ही बन जाती है। निश्चित पट्टेदारी वाला बटाईदार भी कृषि मजदूर से बेहतर होगा क्योंकि मजदूर को तो कभी भी निकाला जा सकता है। दूसरे बटाईदार का हिस्सा तो वास्तविक उत्पादन में ही होता है, मजदूर की मजदूरी वस्तु के रूप में होनी अनिवार्य नहीं होती। यदि उत्पादन खाद्यान्न का हो रहा हो तो फिर मौद्रिक मजदूरी वाले श्रमिक की अपेक्षा बटाईदार बाजार की विषमता का प्रभाव काफी कम रह जाता है। यह अपेक्षाकृत कम दुष्प्रभाव की स्थिति उस समय भी बनी रहेगी जबकि बटाईदारों का अन्य तरीकों से शोषण हो रहा हो।

प्रोफेसर सेन का कहना है कि दुर्भाग्यवश हमारे इसी विश्व में आज भी अभाव दारिद्रय और दमन की समस्याऐं भी विकराल रूप धारण किए विद्यमान है। आज भी ऐसी अनेक समस्यायें हैं इनमें से कुछ नई है तो कुछ पुरानी भी हैं। आज भी विश्व के किसी न किसी भाग में अकाल और व्यापक स्तर पर भूख साम्राज्य फैला दिखाई पड़ ही जाता है, मौलिक राजनीतिक एवं सामाजिक स्वातन्त्र के हनन से आज भी संसार के बहुत विशाल जनसमुदाय मुक्त नहीं हो पाए हैं, आज भी नारी की बृहत्तर भूमिका ही नहीं वरन् उसके सामान्य हितों तक की बड़े व्यापक पैमाने पर अवहेलना हो रही है और पर्यावरण के बढ़ते हुए संकट के कारण हमारे वर्तमान जीवन के स्तर एवं शैली को बनाए रख पाने के विषय में गम्भीर आशंकाऐं उत्पन्न हो रही है। अनेक प्रकार के अभाव तो केवल निर्धन देशों में ही नहीं, अमीर देशों में भी दिखाई पड़ जाते हैं। विकास के प्रयास में इन समस्याओं पर काबू पाने का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता हे। इन सभी सामाजिक व्याधियों के निदान एवं निराकरण में विविध प्रकार के स्वातन्त्रतों की भूमिका को समझा एवं स्वीकार किया जाना चाहिए।

अन्तः इन समस्याओं के समाधान में व्यक्ति के अपने प्रयास एवं योगदान ही सबसे महत्वपूर्ण सिद्ध होने वाले हैं। दूसरी ओर वैयक्तिक रूप से हमारी कुछ भी कर पाने की स्वतन्त्रता अपरिमित नहीं है – इस पर सामाजिक राजनीतिक और हमें सुलभ आर्थिक सुयोग अनेक प्रकार

के बन्धन एवं सीमाऐं लागू कर देते हैं वैयक्तिक भूमिका और सामाजिक व्यवस्थाओं के बीच एक गहरी पारस्परिकता रहती हैं। हमें व्यक्ति के स्वातन्त्रय तथा उस स्वातन्त्रय के प्रभाव क्षेत्र एवं प्रभावोत्पादकता पर पड़ रहे सामाजिक दबावों की शक्ति के महत्व को समझना एवं स्वीकार करना होगा। हमारे समक्ष आज जो समस्याऐं खड़ी है उनके निराकरण के लिए हमें वैयक्तिक स्वातन्त्रय को एक सामाजिक प्रतिबद्धता के धरातल तक पहुंचाना होगा।[1]

इस परिपेक्ष्य में स्वातन्त्रय का संवर्धन प्रसार विकास का प्राथमिक ध्येय एवं प्रमुख माध्यम भी बन जाता है। विकास उन अस्वातन्त्रयों का निराकरण बन जाता है जिनके कारण जनसामान्य अपनी सुविचारित भूमिका निभाने और चयन आदि करने के अवसरों से वंचित रह जाते हैं। विविध स्वातन्त्रय विहीनताओं (Unfredoms) की समाप्ति ही अन्ततः विकास की रचना करती है।

---

1. आर्थिक विकास और स्वातंत्रय – अमर्त्य सेन

# अध्याय - तृतीय

# झाँसी जनपद का परिचय एवं अध्ययन विधि

- झाँसी जनपद की भौगोलिक एवं आर्थिक संरचना
- अध्ययन विधि

# झाँसी जनपद की भौगोलिक एवं आर्थिक संरचना

## सामान्य परिचय –

प्राकृतिक सौन्दर्य ऐतिहासिक गौरव और सांस्कृतिक परम्परा की विशिष्ट पहचान लिए '''बुन्देलखण्ड'' भूभाग भारत के मध्य क्षेत्र में स्थित है। पूर्व में टोंस और सोन नदियाँ, पश्चिम में बेतवा चम्बल नदियाँ और विन्ध्याचल की श्रेणी बुन्देलखण्ड की सीमा रेखाऐं हैं। उत्तर में यमुना, गंगा नदियों के साथ इटावा, कानपुर, फतेहपुर, इलाहाबाद और मिर्जापुर से बुन्देलखण्ड की सीमा रेखा बनाती है।[1]

दिल्ली–बम्बई मुख्यरेल मार्ग पर बुन्देलखण्ड का प्रमुख केन्द्र झांसी है। ऐतिहासिक कारणों से झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का यश देश में फैला है।

*बुन्देलों हर बोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी।*

*खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।*[2]

''झाँसी'' नाम के संदर्भ में एक जनश्रुति प्रसिद्ध है कि ओरछा के प्रसिद्ध बुन्देला राजा वीरसिंह जू देव ने अपने महल के शिखर से बनाये गये नये किलो को देखा उस समय राजा को नव निर्मित किले की ''झाँइसी'' नजर आयी।

ओरछा महाराज इस किले को उसी समय से ''झाँइसी'' नाम से पुकारने लगे।[3] ज्ञातव्य है कि 1913 में ओरछा महाराजा ने ही झांसी किले का निर्माण कराया था बुन्देली शब्द 'झाँइसी'' का आशय झलक से हे। कालान्तर में यह ''झाँइसी'' अर्थात् झलक शब्द ''झाँसी'' बन गया। मराठा शासकों के समय से ही झाँसी जनपदीय आकार में विकसित होने लगी। सन् 1854 में ब्रिटिश शासन ने झाँसी को एक राजस्व इकाई घोषित किया था।[4] संक्षेप में यही झाँसी की प्राचीन पृष्ठभूमि है।

## भौगोलिक परिचय :–

भौगोलिक मानचित्र पर झाँसी उत्तर प्रदेश के दक्षिण पश्चिम में 25.13 और 25.57 उत्तरी अक्षांश एवं 78.48 से 79.25 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। झाँसी जनपद के पूर्व में उत्तर प्रदेश के हमीरपुर, महोबा, पश्चिम में म0प्र0 के शिवपुरी, दतिया उत्तर में उ.प्र. के जालौन तथा दक्षिण में ललितपुर जनपद है। झाँसी जनपद का क्षेत्रफल 5024 वर्ग किलोमीटर है। 2001 की जनगणना के अनुसार झाँसी जनपद की आबादी 1746715 है।[5]

झाँसी जनपद की जलवायु विशेषता पठारी होने के कारण यहां ग्रीष्मकाल मे अधिक गर्मी तथा शीतकाल में अधिक सर्दी पड़ती है। वैसे शीतकाल की तुलना में ग्रीष्मकाल शीघ्र प्रारम्भ होकर देर तक रहता है। यहां न्यूनतम तापमान 2.8 सेंटीग्रेड से 5.1 सेटी ग्रेड तथा अधिकतम तापमान 46.00 सेंटीग्रेड से 48.00 सेंटीग्रेड के बीच होता है। औसत वर्षा 850 मि.मी. है। पर वर्षा के अनियमित स्वभाव के कारण यहाँ ''पानी–पानी'' की पुकार ज्यादा रहती है वर्षा के दिन सामान्यतः कम होते हैं।

---

1. बुन्देलखण्ड का इतिहास (प्रथम भाग) दीवान प्रतिपालसिंह पृ0 5 ।
2. श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान की प्रसिद्ध कविता की पंक्तियां।
3. झाँसी गजेटियर पृ0 1 । (1966)
4. झाँसी गजेटियर (1966)
5. झाँसी सांख्यिकी पत्रक अध्याय 1

**झाँसी जनपद की प्रशासनिक संरचना** – झाँसी जनपद में झांसी, मऊरानीपुर गरौठा, टहरौली, तथा मोंठ पांच तहसीले हैं ग्राम्य विकास कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से क्रियान्वयन कराने के लिये आठ विकासखण्ड हैं प्रत्येक विकास खण्ड में ग्रामो की संख्या निम्नांकित है। (सारणी – 5 में प्रदर्शित हैं)

सारणी – 5

| विकासखण्ड | राजस्वग्राम | गैर आबाद | कुल ग्राम |
|---|---|---|---|
| मऊरानीपुर | 83 | 4 | 87 |
| बंगरा | 82 | 6 | 88 |
| गुरसरांय | 103 | 17 | 120 |
| बामौर | 101 | 14 | 115 |
| मोंठ | 127 | 22 | 149 |
| चिरगांव | 105 | 15 | 120 |
| बबीना | 72 | 1 | 73 |
| बड़ागांव | 87 | – | 87 |
| | 760 | 79 | 839 [1] |

1. उत्तर प्रदेश 2004 सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ।

# विकासखण्ड-चिरगाँव
# जनपद - झाँसी

माप - 0.75 सें॰मी॰ = 1 कि॰मी॰

| क्रम सं॰ | विवरण | | संकेत |
|---|---|---|---|
| 1. | राज्य सीमा | | |
| 2. | जनपद सीमा | | |
| 3 | विकास खण्ड सीमा | | |
| 4. | गाँव सीमा तथा मुख्यालय | | |
| 5. | विकास खण्ड मुख्यालय | | |
| 6 | पक्की सड़क | | |
| 7 | न्याय पंचायत | 8 | |
| 8. | कमाण्ड क्षेत्र वाली न्याय पंचायत | 3 | |
| 9. | नदी | | |
| 10 | समिति मुख्यालय | 5 | |
| 11. | सहकारी उर्वरक बिक्री केन्द्र | (13) | |
| 12 | कृषि रक्षा रसायन केन्द्र | 2 | |
| 13 | सहकारी समिति गोदाम | 9 | |
| 14 | सहकारी बैंक शाखा | 1 | |
| 15 | प्रस्तावित उर्वरक बिक्री केन्द्र | 2 | |
| 16 | सहकारी पूर्ति भण्डार | 3 | |
| 17. | क्रयविक्रय समिति | (1) | |

विकास खण्ड- बबीना
जनपद- झाँसी
माप – 1 से॰ मी॰ = 5 कि॰ मी॰
[उपरोक्त माप का डेढ़ गुना]
क्र॰ सं॰ | विवरण | संकेत
1. राज्य सीमा
2. जनपद सीमा
3. विकास खण्ड सीमा
4. गाँव सीमा तथा मुख्यालय
5. विकास खण्ड मुख्यालय
6. न्यायपंचायत 7
7. कच्ची सड़क
8. रेलवे लाइन
9. नदी
10. प्रा॰ कृषि ऋण समिति मुख्यालय 9
11. सह॰ उर्वरक बिक्री केन्द्र 9
12. कृषि रक्षा रसायन केन्द्र 3
13. सहकारी समिति गोदाम 9
14. सहकारी बैंक शाखा 1
15. प्रस्तावित उर्वरक बिक्री केन्द्र 1
16. सहकारी पूर्ति भण्डार 2
17. कम उत्पादकता वाली न्याय पंचायत 3
बबीना
जनपद ललितपुर

# झाँसी जनपद का आर्थिक स्वरूप

## भूमि संरचना –

झाँसी जनपद को साधारण दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, पूर्वी उत्तरी अक्षांश भाग जो कि अधिकांश मैदानी क्षेत्र है में काबर एवं पडुवा किस्म की मिट्टी पायी जाती है। कृषि की दृष्टि से यह उपजाऊ क्षेत्र है। इस क्षेत्र को बेतवा, धसान एवं पहुज नदियों की जलधारा उपलब्ध है। द्वितीय क्षेत्र दक्षिणी पश्चिमी भाग है, इस भाग में विंध्याचल की पहाड़ श्रृंखला है। इस कारण इस क्षेत्र में पठारी भूमि व लाल मिट्टी पायी जाती है। इस भू भाग में पहाड़ झाड़वन व जंगली भूमि मिलती है। इस क्षेत्र में विकासखण्ड बंगरा, बड़ागांव तथा बबीना है।[2]

## वन सम्पदा –

झाँसी जनपद का भौगोलिक क्षेत्रफल 5024 वर्ग किमी. है। वनों का क्षेत्रफल 334.188 वर्ग किमी. है। यह क्षेत्र वन विभाग के सीधे नियंत्रण में है तथा कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 6.62 प्रतिशत है।

कुल वन क्षेत्र का वर्गीकरण इस प्रकार है।

| | |
|---|---|
| 1. आरक्षित वन | 257.96240 वर्ग किमी. |
| 2. संरक्षित वन | 5.71407 वर्ग किमी. |
| 3. अनारक्षित एवं निहित वन | 70.51196 वर्ग किमी. |
| | योग – 334.18843 वर्ग किमी. |

## भूगर्भ जल –

झाँसी जनपद के अधिकांश भाग में विन्ध्याचल पर्वत की श्रृंखला होने के कारण यहां भूगर्भजल सुगमता से उपलब्ध नहीं हो पाता है। अतः डी.टी.एच.रिंग तथा इन्वेलारंग मशीन द्वारा

1. झाँसी सांख्यिकी पत्रक अध्याय – 1

''नलकूप'' खोदे जाने में कठिनाई होती है। भूगर्भ जल सर्वेक्षण के लिए एक रिमोट सेन्सिंग एप्लीकेशन सेंटर (R.S.A.C.) स्थापित किया गया है जो सर्वे करके जल भण्डार की सूचना एवं स्थान दर बनाता है तथा उन स्थानों को इंगित करता है जहां जल भण्डारण उपलब्ध है।

## खनिज सम्पदा –

झाँसी जनपद में खनिज सम्पदा के रूप में इमारती पत्थर, ग्रेनाइट, पैराफ्लिाईट तथा डायसफोर विशेष रूप से पायी जाती है। नदियों के बेसिन में बहुत अच्छी बालू प्राप्त होती है। रामनगर घाट, देदर, मवई गिर्द, कोट, लकारा, बरूआसागर, एरचघाट, सेलमापुर, लखेरीनदी, सुखनई नदी, रक्सा रोड, बबीना तथा बेहतर कुडरी बालू के प्रमुख क्षेत्र हैं। जनपद में 72 क्रेसर कार्यरत है। उद्योग विभाग के अनुमान से जनपद में उपलब्ध खनिज एवं गिट्टी की मांग के आधार पर अभी और क्रेसर लगाये जा सकते हैं।

## जनशक्ति –

सन् 2001 की जनगणना के अनुसार झांसी जनपद की आबादी 17.46715 है.1981 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 11.37 लाख थी। 1991 में जनसंख्या 14.30 लाख थी।

सन् 2001 की जनगणना के आंकड़े कहते है कि झांसी जनपद में 9.34 लाख पुरूष तथा 8.12 लाख स्त्रियां निवास करती हैं। 5024 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वाले इस जनपद में 347.53 प्रतिवर्ग किमी0 घनत्व है, जबकि प्रदेश में जनसंख्या का घनत्व 471 प्रतिवर्ग किमी. है। झाँसी का सबसे अधिक घनत्व वाला केन्द्र विकासखण्ड बड़ागांव है तथा सबसे कम घनत्व वाला क्षेत्र बबीना और बामौर विकासखण्ड है।[1]

वर्तमान में 2001 के आंकड़ो के अनुसार जनपद में 10.29 लाख ग्रामों में तथा 7.17 लाख लोग नगरों में निवास कर रहे हैं। झांसी जनपद में प्रति हजार पुरूषों में 870 स्त्रियाँ हैं।[2]

## विद्युत, खनिज, उद्योग, एवं आर्थिक गणना –

मार्च 2003 तक झाँसी जनपद में 612 ग्राम्य केन्द्रीय विकास प्राधिकरण की परिभाषा के अनुसार विद्युतीकृत हुए हैं। कुल आबाद ग्राम्य 760 में से 80.50 प्रतिशत ग्रामों में विद्युत उपलब्ध हैं, अनुसूचित जाति, जनजाति बस्तियों सहित विद्युतीकृत ग्रामों की संख्या 593 है, जो एल.टी. लाइनें बिछाकर विद्युतीकृत हुए हैं। इस प्रकार झाँसी जनपद ग्रामों के विद्युतीकरण के कार्य में विशेष प्रगतिशील माना गया है।

## उद्योग –

उत्तर प्रदेश के 36 जिलों को पिछड़े जिलों की श्रेणी में रखा गया है। इन्हीं 36 जिलों में से एक झाँसी जनपद भी है। औद्योगिक दृष्टि से यह जनपद काफी पिछड़ा है।

झाँसी से ललितपुर रोड पर 8 किमी. की दूरी पर बिजौली औद्योगिक क्षेत्र स्थित है। 200 एकड़ भूमि पर राज्य औद्योगिक विकास निगम लिमिटेड कानपुर द्वारा यह क्षेत्र विकसित किया गया है। कुल विकसित भूखण्ड 247 है। जिनमें 243 आवंटित भूखण्ड है। इनमें से केवल 48 इकाइयां

---

1. झाँसी जनपद सांख्यिकी पत्रक अध्याय – 2
2. उत्तर प्रदेश 2004 सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर प्रदेश, लखनऊ।

कार्यरत हैं।[1]

दूसरा औद्योगिक क्षेत्र झाँसी ग्वालियर रोड पर 3 किमी. पर स्थिर है। इसका कुल क्षेत्रफल 15 एकड़ है। इसमें 30 भूखण्ड तथा 18 शैड हैं। इनमें 10 इकायां कार्यरत हैं। तीसरा औद्योगिक संस्थान मऊरानीपुर से एक किमी. दूरी पर झाँकरी में स्थित हैं। इसका क्षेत्रफल 13.4 एकड़ है। इसमें विकसित भूखण्डों की संख्या 38 है। पाँच इकायां कार्यरत हैं।

एक अनुपूरक औद्योगिक आस्थान खैलार ग्राम में स्थित है। इस आस्थान का विकास लघु उद्योग विकास निगम लिमिटेड द्वारा किया गया है। झाँसी से 9 किमी. दूर ललितपुर रोड पर 400 एकड़ भूमि पर एक ग्रोथ सेन्टर की स्थापना की गयी है। प्रथम चरण में 150 एकड़ भूमि ही विकसित की गयी है। व्यवसायिक एवं आवासीय भूखण्ड आवंटन हेतु उच्च स्तरीय सुविधायें उपलब्ध हैं।

वर्ष 1998 की आर्थिक गणना के अनुसार झाँसी जनपद में कुल 36717 उधम कार्यरत हैं इनमें कृषि उधम 1107 एवं अकृषि उधम 35610 हैं।

## *सामाजिक विकास :-*

जनपद में सामाजिक विकास में शिक्षा व स्वास्थ्य सेवाओं, पेयजल, समाजकल्याण आदि सेवाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। उच्च स्तर की शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं एवं नागरिकों का जीवन स्तर बढ़ाने के लिये अधिकाधिक सुविधाओं को उपलब्ध कराने के प्रयास किये जा रहे हैं।

## *शिक्षा :-*

झाँसी जनपद में 66.7 प्रतिशत पुरूष तथा 33.7 प्रतिशत स्त्रियाँ साक्षर है। इस प्रकार जनपद में साक्षरता का प्रतिशत 51.1 है। नगर में पुरूषों की साक्षरता का प्रतिशत 78.6 है तथा स्त्रियों की साक्षरता 54.6 प्रतिशत है। लेकिन ग्रामीण अंचलों में पुरूषों की साक्षरता का प्रतिशत 59.1 है और स्त्रियों की साक्षरता का प्रतिशत 19.6 है। शिक्षा सुविधा की उपलब्धता इस प्रकार है

सारणी – 6

| शिक्षा का स्तर | संख्या |
|---|---|
| 1. जूनियर बेसिक स्कूलों की संख्या | 1116 |
| 2. सीनियर माध्यमिक विद्यालय | 286 |
| 3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय | 114 |
| 4. महाविद्यालय | 8 |
| 5. इंजीनियरिंग कालेज | 1 |
| 6. मेडिकल कालेज | 1 |
| 7. आयुर्वेदिक कालेज | 1 |
| 8. औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (पुरूष महिला) | 2 |

1. झांसी सांख्यिकी पत्रक अध्याय – 6

| | |
|---|---|
| 9. प्राविधिक शिक्षण संस्थान (पुरुष महिला) | 2 |
| 10. शिक्षण प्रशिक्षण संस्थान बरूआसगर | 1 |
| 11. विश्वविद्यालय (बुन्देलखण्ड के क्षेत्र में) | 1 |

जिले में प्रतिलाख जनसंख्या पर जूनियर बेसिक स्कूलों की संख्या 78.1 सीनियर बेसिक स्कूलों की संख्या 20.0, हायर सेकेण्डरी स्कूलों की संख्या 8.0, महाविद्यालय की संख्या 0.6 एवं स्नातकोत्तर की संख्या 0.3 है।

## चिकित्सा –

जिले में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के लिये 35 एलोपैथिक चिकित्सालय एवं औषधालय, 25 आयुर्वेदिक, 5 होम्यौपैथिक चिकित्सालय तथा 51 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र है। परिवार कल्याण कार्यक्रम को प्रोत्साहन देने के लिये मुख्य परिवार केन्द्र 11 तथा उपकेन्द्र 251 है।

## पेयजल –

जल मानव जीवन का आधार है। शुद्ध पेयजल उपलब्ध करने के लिये जनपद में जलसंस्थान तथा जलनिगम के अन्तर्गत कार्य किये जा रहे हैं। बांधों से पानी उपलब्ध कराने के अतिरिक्त 9000 हैण्डपम्प अधिष्ठापित किये जा चुके हैं। 186 गांव पाइप पेयजल से तथा 555 ग्राम हैण्डपम्पों से लाभान्वित किये गये हैं। जनपद में 13 नगर हैं, जिनमें सभी पाइप पेयजल योजना से लाभान्वित है। इसके अतिरिक्त नगरों में भी लगभग 2500 हैण्डपम्प अधिष्ठापित किये गये हैं।[1]

---

1. झाँसी सांख्यिकी पत्रक अध्याय – 10

# अध्ययन विधि -

## अध्ययन का उद्देश्य

देश की जनसंख्या का तीन चौथाई हिस्सा ग्रामीण भारत में निवास करता है अतः भारत तभी शक्तिशाली व समृद्ध हो सकता है जब हमारे गांव गरीबी एवं पिछड़ेपन से मुक्त हों।

भारत सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में द्रुतगामी तथा निरन्तर विकास के लिये कटिबद्ध है।

ग्रामीण विकास मंत्रालय अनेक योजनाओं के क्रियान्वयन में संलग्न है। जिनका उद्देश्य ग्रामीण जनता को योग्य बनाकर उनके जीवन स्तर को सुधारना है। गरीबी उन्मूलन तथा त्वरित सामाजिक आर्थिक विकास के उद्देश्य के साथ विकास कार्यक्रमों को एक विविधतापूर्ण रणनीति के द्वारा समाज के सर्वाधिक उपेक्षित वर्ग तक पहुंचाने के लिये क्रियान्वित किया जा रहा है। स्वच्छ पेयजल ग्रामीण आवास तथा सड़क सम्पर्क को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है।

निराश्रितों और गरीब परिवारों को सहायता प्रदान करने के लिये सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों को अत्यन्त महत्व दिया जा रहा है। स्वयं सेवी संस्थाओं को सहायता व प्रोत्साहन तथा ग्रामीण विकास कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण को त्वरित ग्रामीण विकास का हिस्सा बनाया गया है।

पंचायती राज संस्थाओं को कार्यशक्तियों और वित्त के मामले में अधिकार सम्पन्न बनाने के लिये मंत्रालय निरन्तर प्रयासरत हैं। एक नई पहल के रूप में ग्राम सभा एक अत्यन्त उल्लेखनीय संस्था बन गयी है। भागीदारी आधारित लोकतंत्र को सार्थक तथा प्रभावशाली बनाने के लिये गैर सरकारी संगठनों, स्वयंसेवी समूहों और पंचायती राज संस्थाओं को उचित भूमिका प्रदान की गयी है। भूमि सुधारों के साथ साथ बंजरभूमि, मरूभूमि तथा सूखाग्रस्त क्षेत्रों के विकास को भी क्रियान्वित किया जा रहा है।

ग्रामीण क्षेत्रों में तेजी से विकास करने के लिये संसाधनों के समान वितरण को सुनिश्चित करने के लिये ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिये निधियों के आंबटन को नौवीं योजना के दौरान 42,874 करोड़ रू0 की तुलना में दसवीं योजना के लिये बढ़ाकर 76,774 करोड़ रूपये कर दिया गया है।[1]

देश की आर्थिक आयोजना तथा विकास प्रक्रिया में ग्रामीण क्षेत्रों तथा ग्रामीण लोगो का विकास प्रमुख चिन्ता का विषय रहा है। अब यह महसूस किया गया है है कि एक सशक्त तथा आधुनिक राष्ट्र के रूप में उभरने तथा राष्ट्रों के बीच अपना यथाचित स्थान बनाने के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी विकास बेहद जरूरी है। विकासात्मक असंतुलनों को दूर करने तथा ग्रामीण क्षेत्रों को उचित प्राथमिकता देने के लिये ग्रामीण विकास मंत्रालय अनेक कार्यक्रमों को कार्यान्वित कर रहा है, जिनका उद्देश्य कमजोर और उपेक्षित वर्गो पर विशेष ध्यान देते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी

---

1. वार्षिक रिपोर्ट 2003–04 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय।

विकास करना है। ग्रामीण क्षेत्रो में विकास प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिये न केवल निधियों तथा संसाधनों के आवंटन के रूप में बल्कि नये कार्यक्रमों को शुरू करके और मौजूदा कार्यक्रमों को पुनर्गठित करके भी ग्रामीण विकास का उच्च प्राथमिकता दी गई है। ग्रामीण विकास नीति को इसप्रकार से बदला गया है कि उसके विचार तथा अनुभव विकास पद्धति का अभिन्न अंग बन गए हैं।

प्रस्तुत शोध में झाँसी जनपद के सन्दर्भ में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की पहुंच, उनके संचालन और उनकी सफलता का मूल्यांकन करना ही अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य है। ग्रामीण विकास परियोजनाओं का मूल्यांकन व्यापक आधार पर तो होता है जबकि सूक्ष्म इकाइयों के अध्ययन को उतना महत्व नहीं दिया जाता है, जबकि सूक्ष्म इकाइयों का योग ही व्यापक या समग्र है। सूक्ष्म इकाइयों का गहन अध्ययन ही बड़ी परियोजनाओं का सफल मूल्यांकन करता है और विकास हेतु बड़ी परियोजनाओं के निर्माण हेतु दिशा निर्देश देता है।

भौगोलिक मानचित्र में बुन्देलखण्ड और उसका झाँसी जनपद सामाजार्थिक रूप से अत्यधिक पिछड़ा है। जनपद झाँसी में कुल गांवो की संख्या 839 है यहां की कुल आबादी 1746715 है [1] असर बंजरभूमि, असिंचत कृषि क्षेत्रफल का आधिक्य, रोजगार के अवसरों की नितांत कमी, अपर्याप्त शिक्षा के अवसर सभी कुछ यहाँ की विशेषता है इस गतिहीन समाज में सामाजार्थिक गतिशीलता लाने के लिये ''पारसमणि'' का काम तो ग्रामीण विकास योजनाओं को ही करना है।

उपयुक्त तथ्यों के आलोक में ही शोधार्थी ने अध्ययन का उद्देश्य झाँ सी जनपद में ग्रामीण विकास योजनाओं का सामाजार्थिक मूल्यांकन करना ही प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य है।

## अध्ययन विधि –

झाँसी जनपद क्षेत्र में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का सामाजार्थिक मूल्यांकन करने के लिये शोधार्थी ने निम्न तथ्यों का पता लगाने का प्रयास किया है – क्षेत्र में कौन कौन सी ग्रामीण विकास योजनाऐं संचालित है। इन विभिन्न कार्यक्रमों से किन किन व्यक्तियों को लाभ पहुंच रहा है। इनसे लाभ पाने वाले व्यक्तियों की पात्रता, नियम एवं शर्ते क्या है ? पंचायती राज व्यवस्था और स्वयं सेवी संगठनों का क्या योगदान है। परियोजनाओं के संगठन संचालन में क्या कमियां अनुभव की गई? आदि तथ्यों की तथ्यों की विशद व्याख्या करने का प्रयत्न किया गया है।

आधुनिक युग योजना युग है। किसी भी शोधकार्य को करने से पूर्व उसके बारे में एक निश्चित प्रारूप तथा पर्याप्त सामग्री का संकलन करना आवश्यक होता है। साथ ही शोधार्थी का चिन्तन और लगन महत्वपूर्ण है। नीस्पंगर का कहना है कि ''योजना निर्धारण प्रमुख महत्व रखता है, क्योंकि इसके द्वारा यह निश्चित होता है कि कौन कौन से संमक संकलित करने हैं।

1. सांख्यिकी कार्यालय जनपद झाँसी से प्राप्त वर्ष 2004 की सूचना के आधार पर।

सम्बन्धित संमको की क्या विशेषताऐं है तथा किन सम्बन्धों को ज्ञात करना है? इन क्रमों में किन प्राविधियों का प्रयोग करना है। तथा अन्तिम प्रतिवेदन का क्या प्रारूप होगा?

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में शोधार्थी ने क्षेत्रीय अनुसंधान को अपनाया है। क्षेत्रीय अध्ययन विशेष रूप से विद्वानों की भारी मांगो, साधन और स्रोतो को दृष्टि में रखते हुये, जिनकी तुलनात्मक अध्ययन में बाद में आवश्यकता पड़ेगी, न केवल न्यायोचित है बल्कि अति आवश्यक है।

क्षेत्रीय अध्ययन के लिये वैज्ञानिक अनुसंधान विधि को अपनाया गया है। वैज्ञानिक अनुसंधान विधि में शोध कार्य के प्रारम्भ से अंत तक निम्न अवस्थाऐं होती है।[1]

1. शोध का प्रयोजन
2. शोध का क्षेत्र
3. तथ्य संकलन की पद्धति
4. न्यादर्श के रूप में तैयार करना
5. प्रश्नावालियों तथा अनुसूचियाँ तैयार करना
6. समंक संकलन
7. समको का वर्गीकरण, सारणीयन तथा विधेयन
8. समंको का विश्लेषण तथा अन्तर्वचना
9. प्रतिवेदन तैयार करना।

अतः प्रस्तुत शोध की विषय सामग्री इन सभी अवस्थाऐं का परिणाम है। अध्ययन के निर्धारित उद्देश्यों को पूरा करने के लिये तथ्य संकलन हेतु समय, श्रम व धन को व्यर्थ जाने से बचाने के लिये प्रस्तुत शोध में तथ्य संकलन की न्यादर्श विधि का प्रयोग किया गया है। क्योंकि निर्देशन विधि अनुसंधान के लिये अत्यधिक परिणाम में संमको का अध्ययन करने के लिये कभी कभी एक मात्र सम्भवतः व प्रायः सर्वाधिक व्यावहारिक और सामान्यतः अधिक कुशल साधन है। यथार्थ में ''निर्देशन समग्र का सूक्ष्म प्रतिनिधित्व करता है।''[2]

बोगार्डस के शब्दों में निदर्शन एक पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के एक समूह में से एक निश्चित प्रतिशत का चुनाव है।''[3]

प्रस्तुत अध्ययन में निदर्शन विधि को प्राथमिक संमक संकलन को आधार बनाया गया है, निदर्शन का आकार निर्धारित करने के लिये जनपद को चार तहसील और आठ विकास खण्ड में बांटा गया है। प्रत्येक विकास खण्ड से 5-5 न्यादर्श गांवो को लाटरी सिस्टम के आधार पर चयनित किया गया है। लाटरी द्वारा गांव चयनित करने के लिये विकास खण्ड बार उन गांवो की

---

1. Z.H. Bready : Comparative Method in Education.
2. Good and Hatt : Methods in Social reserch p 209.
3. Thomas corson Mc. Gromuck. Elementary Social Statistis (1941) P. 224.

सूची तैयार की गयी जिनमें ग्राम्य विकास योजनायें संचालित हैं। इस प्रकार प्रारम्भिक स्तर पर समग्र जनपद में 40 न्यादर्श गांव चयनित किये गये। पुनः चयनित गांवों से 4–4 लाभार्थियों को साक्षात्कार प्रश्नावलियों और अनुसूचियों द्वारा किया गया। इस प्रकार न्यादर्श का अन्तिम आकार 40X40 = 160 लाभार्थी निर्धारित किया गया।

अध्ययन को गहन और महत्वपूर्ण बनाने के लिये प्रश्नावली को दो भागों में बांटा गया प्रथम भाग में न्यादर्श गांव के जनप्रतिनिधि (प्रधान) से पूछे जाने वाले प्रश्नों को रखा गया। द्वितीय भाग में लाभार्थी से पूछे जाने योग्य प्रश्नों को सम्मिलित किया गया। ऐसा व्यावहारिक कारकों को ध्यान में रखते हुये किया गया है।

इस अध्ययन में प्राथमिक तथ्यों के संकलन के लिये प्रश्नावलियों और अनुसूचियों का प्रयोग किया गया है। श्रीमती यंग के शब्दों में "प्राथमिक तथ्य सामग्री प्रथम स्तर पर एकत्रित की जाती है। एवं इसके संकलन तथा प्रकाशन का उत्तरदायित्व उस अधिकारी पर रहता है जिसने मौलिक रूप से उन्हें एकत्र किया था।[1]

प्रश्नावलियां विचार विमर्श एवं जनसम्पर्क के आधार पर तैयार की जाती है। प्रश्नावली एक ऐसा विवरण होता है, जिसमें प्रश्नों के उत्तरों के रूप में प्राप्त सूचना का उल्लेख किया जाता है। अनुसूची एक खाली प्रपत्र होता है, जिसमें तथ्यों का विवरण एक सारणी के रूप में दिया जाता है, जिसके सामने प्राप्त सूचना का उल्लेख किया जाता है। ये तथ्य साधारणतया प्रश्नों के रूप में नहीं होते हैं।

गुड एवं हाट के शब्दों में अनुसूची उन प्रश्नों का नाम है, जो शोधार्थी द्वारा किसी व्यक्ति के आमने सामने की स्थिति में पूछे और भरे जाते हैं।[2]

प्रस्तुत शोधकार्य में प्रयुक्त प्रश्नावली एवं अनुसूची में ऐसे प्रश्नों का समावेश किया गया है जो शोधकार्य के उद्देश्यों के अनुरूप हो। प्रश्नावली को वर्णनात्मक शोध का प्राण माना जा सकता है।

प्रश्नावली तैयार करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा गया है।

1. प्रश्नों की संख्या आवश्यकता से अधिक न हो, जिससे कि उत्तरदाता उत्तर देने में कठिनाई अनुभव करे और न ही शोधार्थी शोध के उद्देश्य से भटक सके।
2. शोधकार्य में प्रयुक्त प्रश्नावली के प्रश्न सरल प्रत्यक्ष व स्पष्ट हों
3. प्रश्न अध्ययन की सम्पूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।
4. प्रश्नावली में प्रश्नों की क्रमबद्धता का ध्यान रखा गया है।

---

1. Pauline V. Young : Scientific Social Surveses and research Prectice hall of India. Pvt. Ltd. new Delhi 1973. P136.

2. Good and Hatt : Methods of social research New yerk Mc Graw Hill 1952 P. 210

5. व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित गोपनीयता एवं भावनाओं को ठेस पहुंचाने वाले प्रश्न नहीं पूछे गये हैं।

प्रश्नावली और अनुसूची का प्रारूप परिशिष्ट में संलग्न हैं।

प्रस्तुत शोध में संकलित प्राथमिक समंक सर्वथा नवीन तथा प्रथम बार संकलित है। जिनका प्रयोग करके झाँसी जनपद में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का सामाजार्थिक मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है।

शोधकार्य में प्रयुक्त द्वितीयक समंको का सकंलन अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन, सरकारी प्रकाशन संस्थानो के प्रकाशन, पत्र पत्रिकाओं और प्रकाशित स्रोतों द्वारा दिया गया है।

संकलित समंको का सम्पादन कर सारणीयन द्वारा प्रदर्शित करके उन्हें और भी उपयोगी बनाया गया है। जिससे अध्ययन के बाद समुचित निष्कर्षो को निकाला जा सके।

सारणीयन के अन्तर्गत हस्त सारणीयन पद्धति [1] एवं टेलीशीट [2] का प्रयोग किया गया है। सामग्री के विश्लेषण के लिए औसत, दर अनुपात, गुणक, प्रतिशत आदि निकाले गये हैं। विभिन्न तर्को का प्रयोग कर अन्तर्वचन किया गया है। जिसके द्वारा निकाले गये निष्कर्षो के अन्तिम अध्याय में प्रस्तुत किया गया है। सारणियों को स्पष्ट करने के लिये आरेखीय प्रर्दशन तथा ग्राफ का भी प्रयोग किया गया है।

## *अध्ययन की सीमाएं –*

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री रिपेट के अनुसार ''तकनीकि अथवा किसी अन्य क्षेत्र में अनुसंधान कुछ मान्यताओं पर आधारित होता है तथा उसकी कुछ सीमाएं होती हैं। [3] अर्थात किसी भी क्षेत्र अथवा व्यवसाय विशेष की सीमाओं के निर्धारित कर लेना भटकाव से बचने के लिये एक उपयुक्त सरलतम उपाय है। इसीलिये प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में अपने मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिये कुछ सीमाएं पूर्व में ही निर्धारित कर ली गयी है। चुंकि प्रस्तुत अध्ययन सीमाबद्ध है इसलिये इसे पूर्ण अध्ययन नहीं कहा जा सकता है।

अध्ययन की सीमाएं निम्न है।

1. प्रस्तुत अध्ययन ''भारत के आर्थिक विकास में ग्राम्य विकास योजनाओं का योगदान'' जनपद झाँसी के विशेष सन्दर्भ में' एक विस्तृत सामाजार्थिक विषय हैं। समयाभाव एवं अर्थाभाव के कारण कुछ पहलू अध्ययन से छूट गये हैं।

---

1. हस्त सारणीयन पद्धति में सारणीयन हाथ से किया जाता है।

2. टेलीशीट के अन्तर्गत सर्वप्रथम निश्चित समूह पर वर्गोन्तरों का निर्धारण कर लिया जाता है। इसके बाद प्रत्येक सूचना को अंकित करने के लिए संदर्मित वर्गोन्तरों के सामने एक रेखा खींच दी जाती है। अन्त में समस्त रेखाओ को जोड़कर योग निकाल दिया जाता है।

3. B.N. Gupta Statistics P. 26

2. प्रस्तुत अध्ययन में शोध योजना प्रस्तुत करते समय जनपद में टहरौली तहसील नहीं बनी थीं। वर्तमान में यद्यपि औपचारिक रूप से यह उद्घोषित है किन्तु इसके कार्यालय अलग नहीं हुये हैं। अतः न्यादर्श का चयन करते समय मात्र चार तहसीलों को ही आधार बनाया गया है।

3. अध्ययन में प्राथमिक समक संकलित करने हेतु प्रश्नावली को दो खण्डों में बांटा गया है, जिससे कि कोई प्रश्न व्यक्तिगत या सामूहिक स्तर पर अनुत्तरित न रह जाए। फिर भी अध्ययन का आधार न्यादर्श लाभार्थियों से प्राप्त सूचनाऐं ही हैं।

4. न्यादर्श का चयन करते समय जनपद के उन्हीं ग्रामों को समग्र में सम्मिलित किया गया, जिनमें ग्रामीण विकास योजनाएं संचालित है अथवा संचालित की जा चुकी है।

5. ग्रामीण विकास योजनाओं के स्वरूप में लगातार परिवर्तन होते रहे हैं। यद्यपि योजनाओं के उद्देश्य और प्रभाव एक जैसे ही है अतः ठोस अध्ययन के लिए वर्तमान में संचालित योजनाओं को ही अध्ययन की विषय वस्तु बनाया गया है।

6. केवल झांसी जनपद में संचालित योजनाओं का ही अध्ययन किया गया है।

## *अध्ययन की प्रासंगिकता –*

भारत ने आजादी के समय से विकास के लिये लम्बी दूरी तय की है और विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति भी की है। तब भी राष्ट्रीयय जीवन के अन्य पहलुओं में अभी सभी दृष्टि से कुल विकास नहीं हो पाया है। अभी भी गांव की लगभग 27 प्रतिशत [1] आबादी गरीबी में जीवन यापन करती है और ग्रामीण क्षेत्रों में घर में पीने का पानी, सड़क जैसी बुनियादी सुविधाओं की भारी कमी हैं।

सदियों से ये गांव उपेक्षित रहे है, जिनके फलस्वरूप इनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति बहुत पिछड़ी और शोचनीय रही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले आर्थिक प्रगति और सामाजिक सुधारों के प्रति राज्य सत्ता उदासीन थी। सुविधाओं के अभाव में प्रति एकड़ उपज उत्तरोत्तर घटती गयी। ग्रामीण तथा कुटीर उद्योगों का विनाश हुआ और किसान निर्धन होता गया। अपनी दशा सुधारने की सामर्थ्य न होने के कारण तथा सरकारी उपेक्षा से उनमें एक विचित्र आकांक्षा हीनता तथा निराशा आ गयी और वे भाग्यवादी बनकर निश्चेष्ट हो गये, परन्तु देश में आगे चलकर राजनीतिक जागृति के फलस्वरूप लोगों का ध्यान गांव की दुर्दशा की ओर आकृष्ट हुआ। उन्होने सुधार की चर्चा की ओर आन्दोलन चलाये। गांधी जी ने गांवो को ही विकास तथा सुधार का केन्द्र माना। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के हाथ में राज्य सत्ता आने पर ग्राम पुनरूद्धार का कार्य बड़े उत्साह से आरम्भ कर दिया गया।

विकास की समस्या एक मानवीय समस्या है, जिसमें हमें गांवो में रहने वाले करोड़ो परिवारों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना, उनके मन में नवीन ज्ञान तथा जीवन यापन के नवीन ढंगो को जाने की उत्सुकता पैदा करना तथा उच्चतर जीवन की सुविधाओं की प्राप्ति के लिये

---

1. भारत 2004 – वार्षिक सन्दर्भ ग्रंथ पृ0 619
2. कुंवरपाल सिंह : योजना जून 200 पृ0 43 ।

आकांक्षा तथा दृढ़ संकल्प भरना है।

ऐसी परिस्थिति में हमारा पुराना ढंग विकास कार्यक्रमों को सरकारी कर्मचारियों द्वारा जनता के ऊपर बल पूर्वक लादना सफल नहीं हो सकता, हमें तो ऐसे उपायों को काम में लाना होगा जो जनता में आत्मविश्वास उत्पन्न करें और जनता विकास कार्यक्रमों में व्यक्तिगत रूचि प्रदर्शित करें।

गांवो का विकास आज राष्ट्र की महती आवश्यकता है। ''जब गांव प्रगति और विकास के पथ पर आगे बढ़ेगे तो नगर भी आगे बढ़ेगे। वस्तुतः गांव तथा नगर एक ही राष्ट्रीय जीवन के दो अंग हैं।

*''नगर राष्ट्र का मस्तिष्क है तो गांव हृदय''*

दोनो के सन्तुलित विकास से ही राष्ट्रीय जीवन का सर्वांगीण विकास होगा एवं राष्ट्रीय एकता का महायज्ञ भी तभी पूरा होगा।''[2]

ग्रामीण पर्यावरण के विकास की आवश्यकता को तीव्रता से अनुभव करते हुए शोधार्थी ने क्षेत्रीय अनुसन्धान के माध्यम से जनपद झाँसी के गांवो के सामुदायिक विकास की समस्या की ओर स्थानीय नेताओं, कार्यकर्ताओं, स्वयंसेवी संस्थाओं और नौकरशाहों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत अध्ययन कदाचित उनके लिये दि्क दर्शक सामग्री और उपाय प्रस्तुत करेगा। उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अध्ययन पूर्णतया प्रासंगिक और सामाजिक हैं।

# अध्याय - चतुर्थ

# ग्राम्य विकास योजनाऐं

- ग्राम्य विकास योजनाओं का परिचय
- वर्तमान में संचालित ग्राम्य विकास योजनाऐं
- जनपद झाँसी में संचालित ग्राम्य विकास योजनाऐं

ग्रामीण विकास योजना के लिए आवेदन करते ग्रामीण

# ग्राम्य विकास योजनाओं का परिचय -

स्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद देश के विकास हेतु ग्रामीण क्षेत्रों के विकास की जो योजनाऐं बनीं उनके द्वारा ग्राम विकास हेतु आधारभूत ढांचे का निर्माण करने की ओर ध्यान देना आरम्भ किया गया। बाद में रोजगार के अवसर कैसे बढ़े इस पर ध्यान दिया गया, जब देखा गया कि योजनाओं के लाभ सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से निम्नतर स्तर के व्यक्ति को नहीं मिल पा रहे हैं तो कैसे उन्हें लाभान्वित किया जाऐं इस पर विचार आरम्भ किया गया। विकास योजनाऐं सबसे पहले निम्नलिखित विषयों पर आधारित हो ऐसा निश्चय किया गया–

(क) कृषि उत्पादन हेतु

(ख) ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर हेतु विशेषकर उन समयों में जबकि कृषि आधारित कार्य नहीं किये जाते।

(ग) शिक्षा एवं स्वास्थ्य की सुविधायें हेतु।

(घ) आवास सुविधाऐं हेतु एवं

(ड़) ऊर्जा, पीने के पानी की सुविधाऐं उपलबध कराने हेतु।[1]

पंचवर्षीय योजनाऐं उपर्युक्त उद्देश्यों को लेकर ही बनायी गयीं। हालाकि समय समय पर इससे अन्य बाते भी जुड़ती गयी जैसे शहरी क्षेत्रों के विकास तथा उद्योगों पर विशेष ध्यान परन्तु जहां मोटे तौर पर इन उद्देश्यों की प्राप्ति हो पाई है वहीं जो 70 प्रतिशत देश की जनसंख्या प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि कार्यो में जुड़ी है, उसके एक बहुत बड़े भाग को इन योजनाओं से अपेक्षित लाभ नहीं पहुंच सका है। इसका कारण यह रहा कि ऐसे कृषि कार्यो से जुड़े लोगों में 75 प्रतिशत परिवार ऐसे थे जिनके पास भूमि या तो बहुत कम थी, या थी ही नहीं, और ऐसे व्यक्तियों के पास श्रम करने के अतिरिक्त जीविकोपार्जन के और कोई साधन नहीं थें ऐसे लोग ग़ांवो से पलायन कर शहरों की ओर काम की खोज में आते रहे। ग्रामीण परिवारों में जनसंख्या की वृद्धि के साथ साथ भूमि की उपलब्धता और भी कम होती जा रही है, जिससे वे कृषि कार्यो की अपेक्षा गांवो से नगरों की ओर लगातार पलायन करते रहे हैं। यह समस्या दिन प्रतिदिन गम्भीर होती जा रही है। जो कृषि कार्यो में लगे हुए है, उन्हें भी अधिकतर वर्षा ऋतु जनय कृषि पर निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि सिंचाई सुविधाऐं देश में पर्याप्त नहीं है। यह स्थिति उत्पन्न हुई क्योंकि प्रारम्भिक योजनाओं में जहाँ क्षेत्रीय विकास पर ध्यान था, पिछड़े और निर्धन लोगों को लाभान्वित करने वाली योजनाओं का अभाव रहा तथा अमीर तथा गरीब के बीच खाई लगातार बढ़ती रही।

विकास के लिये तय किये गये उद्देश्यों की पूर्ति के लिये सरकार ने जो प्रमुख कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिये हाथ में लिये वे इस प्रकार थे।

---

1 जन–सहभागिता से ग्रामीण विकास बी.जी. शर्मा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर – पृष्ठ – 4 ।

1. सामुदायिक विकास कार्यक्रम – इसके अन्तर्गत समुदायों के विकास को कार्यक्रम 1952 में आरम्भ किया गया और राष्ट्रीय विस्तार सेवा 1953 में आरम्भ की गयी प्रथम पंचवर्षीय योजना भी 1952 में आरम्भ हुई।

2. अन्न उत्पादन को बढ़ाने हेतु विशेष ध्यान कृषि क्षेत्र पर दिया गया जिससे कि विदेशों पर अन्न की निर्भरता देश के कृषि उत्पादन को बढ़ाकर कम की जा सके। बाद में इस पर बहुत अधिक ध्यान दिया गया और देश में हरित क्रान्ति इसका ही परिणाम था।

3. छोटे और सीमान्त कृषकों हेतु विकास एजेन्सी (SMFDA) का गठन 1968–69 में छोटे और सीमान्त कृषकों के विकास के लिये किया गया।

4. न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम पांचवी पंचवर्षीय योजना से आरम्भ किया गया और इसका उद्देश्य था कि उत्पादन के लिये आधारभूत ढांचे में सुधार हो, जिसमें सड़के और पीने का पानी की उपलब्धता सम्मिलित हो व जनता के कल्याण की योजनाऐं जिनमें शिक्षा व स्वास्थ्य इत्यादि हो, को बढ़ावा मिले।

5. एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम 1977 में आरम्भ किया गया। सर्वप्रथम इसे 20 जिलों में प्रारम्भ किया गया था परन्तु बाद में इसे देश के सभी जिलों में लागू किया गया। यह मूल रूप से गरीबी उन्मूलन का कार्यक्रम है। इसका लक्ष्य गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले ग्रामीण परिवारों को बेरोजगारी एवं साधन हीनता के अभिशाप से मुक्ति दिलाकर स्वरोजगार की ओर प्रेषित करना है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब परिवारों का पता लगाकर ऐसे चयनित परिवारों को इस योजना में सहायता दी जाती है। एक समन्वित दृष्टिकोण रखकर विकास योजनायें बनाई जाती हैं और निम्न चार प्रमुख बातों पर बल दिया गया है –

(i) कृषि एवं सम्बन्धित गतिविधियों जैसे कि पुशलपालन, मछली पालन एवं वन विकास एवं फल विकास को बढ़ावा।

(ii) ग्रामीण, कुटीर उद्योग एवं लघु उद्योगों को बढ़ावा

(iii) विभिन्न कार्यो के लिए कारीगरों और अप्रशिक्षित व्यक्तियों को प्रशिक्षण

(iv) जिन क्षेत्रों में रोजगार की सम्भावनाऐं हो, उनमें प्रशिक्षण द्वारा ऐसी सम्भावनाऐं बढ़ाना।

IRDP का उद्देश्य सम्पत्ति निर्माण करने हेतु लक्षित समूह की पहचान कर उसे वित्तीय सहायता देना भी है जो कि सब्सिडी के रूप में अथवा वित्तीय संस्थाओं से ऋण दिलवाने के रूप में हो सकता है। इस सम्पत्ति निर्माण से रोजगार के अधिक अवसर उपलबध कराने में सहायता मिलती है।

समय समय पर ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य विशिष्ट योजनाऐं बनाई एवं लागू की गई। यह निम्न प्रकार हैं।

| योजना का नाम | प्रारम्भ होने का वर्ष | उद्देश्य/विवरण |
|---|---|---|
| 1. सामुदायिक विकास कार्यक्रम | 1952 | सामुदायिक विकास करना |
| 2. कृषि विपणन | 1960 | कृषि विपणन हेतु मण्डियों का विकास परिणाम स्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में गोदामों का निर्माण |
| 3. छोटे और सीमान्त कृषकों हेतु विकास एजेन्सी | 1968–69 | छोटे एवं सीमान्त कृषकों का विकास करना |
| 4. सूखाग्रस्त क्षेत्र विकास कार्यक्रम | 1973–74 | प्राकृतिक स्रोतो का विस्तार एवं उपयोग विशेषतः जल ग्रहण क्षेत्र विकास की दिशा में केन्द्र राज्य के मध्य व्यय अनुपात 50 : 50 |
| 5. अत्योदय योजना | 2 अक्टू. 1977 | इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र में जीवन का स्तर सुधारने के उद्देश्यों से ग्रामीण क्षेत्रों में लघु व कुटीर उद्योगों की स्थापना एवं विस्तार के प्रयास। |
| 6. काम के बदले अनाज योजना | 1977–78 | इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में आय व पोषण के स्तर में वृद्धि करना मण्डारण की क्षमता की समस्या को देखते हुये इनका सदुपयोग करना |
| 7. मरूभूमि विकास कार्यक्रम | 1977–78 | प्राकृतिक स्रोतों एवं प्रचार/प्रसार केन्द्र एवं राज्य योगदान का अनुपात 75:25 जल ग्रहण कार्य प्राथमिकता |
| 8. ग्रामीण युवा रोजगार प्रशिक्षण योजना (ट्राइसेम) | 1979 | गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले युवा ग्रामीणों को तकनीकी एवं प्रशासन में प्रशिक्षण 50 प्रतिशत अनु0जाति/जनजाति एवं 40 प्रतिशत महिलाओं हेतु प्रशिक्षण के दौरान निःशुल्क औजार व छात्रवृत्ति प्रदान करना। |

| | | |
|---|---|---|
| 9. समन्वित ग्रामीण विकास योजना | 1980 | निधनों (जिनकी आय 11000 रूपये वार्षिक से कम है) के हेतु स्वरोजगार योजना 150 प्रतिशत लाभान्वित अनु0जाति व जनजाति के, 40 प्रतिशत महिलाऐं तथा 25 प्रतिशत सीमान्त एवं लघु कृषक। |
| 10. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (N.R.E.P.) | 1980 | ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार तथा अल्परोजगार वाले पुरूष एवं महिलाओं दोनो के लिये अतिरिक्त लाभकारी रोजगार उत्पन्न करना। |
| 11. सामुदायिक जलोत्थान सिंचाई योजनाऐं | 1981 | जिलों में छोटे एवं सीमान्त कृषकों के लिये लागू। कृषकों की सोसाइटी बनाकर चलाई जाती हैं। |
| 12. बायोगैस योजना | 1981–82 | ग्रामीणों को प्रशिक्षण देकर गांव में पशुधन से प्राप्त गोबर के दुरूपयोग को रोकना, महिलाओं के स्वास्थ्य की रक्षा, घरेलू, ईधन, प्रकाश व खाद्य की निःशुल्क व्यवस्था करना। |
| 13. ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम | 1982 | निधनों एवं महिलाओं को आत्म निर्भर एवं आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाना। ग्राम स्तर पर 10 से 15 महिला समूहों को कार्य आरम्भ हेतु ऋण एवं प्रशिक्षण। |
| 14. राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम | 1983–84 | वन सम्पदा एवं जलाऊ लकड़ी की बचत, धुंये से बचाव, वायु प्रदूषण की रोकथाम, महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य में सुधार, खाना पकाने के समय में कटौती। |
| 15. इन्दिरा आवास योजना | 1985 | ग्रामीण गरीबो–विशेषकर अनुसूचित जाति/जनजाति आदि के लोगों को आवासीय इकाइयों के निर्माण में आर्थिक सहायता देना। |
| 16. राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन | 1986 | ग्रामीण क्षेत्रों में पीने योग्य पानी सुलभ कराना। |

| | | |
|---|---|---|
| 17. ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम | 1986 | ग्रामीण पर्यावरण में सुधार एवं विशेषकर ग्रामीण महिलाओं की सुरक्षा, सम्मान वं सुविधा की दृष्टि से पंचायती राज विभाग द्वारा क्रियान्वयन। |
| 18. जवाहर रोजगार योजना | 1989 | रोजगार व परिसम्पत्तियों का निर्माण, महिलाओं हेतु 30 प्रतिशत अनु.जाति व जनजाति को प्राथमिकता, केन्द्र व राज्य योगदान का अनुपात 80:20 श्रम एवं सामग्री का अनुपात 60:41 |
| 19. दस लाख कुआ योजना | 1989 | NREP/RLEGP कार्यक्रम के तहत उपयोजना के रूप में प्रारम्भ। गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले अनु. जाति/जनजाति के लोगो को प्राथमिकता। जहां कुआ न बन सके वहां सिंचाई के अन्य तरीकों का प्रयोग। |
| 20. बंजर भूमि विकास | 1992 | मरूक्षेत्र में तथा पहाड़ी इलाकों में विकास पूर्ण कार्य एवं अन्य भूमि उत्पादन आधारित विकास करना। |
| 21. ग्रामीण कारीगरों को उन्नत किस्म के औजार किट की आपूर्ति योजना | 1992 | ग्रामीण कारीगरों को उन्नत किस्म के औजार बढ़ई व चर्म कार्य जूता निर्माण आदि हेतु वितरण/प्रशिक्षण व 2000 रू0 मूल्य के औजार किट देना। |
| 22. पंचायती राज | 1993 | 73वें संविधान संशोधन विधेयक 1992 के द्वारा ग्राम सभाओं व ग्रामीणों के सहयोग से उन्हें और अधिकार व शक्तियां प्रदान करना। 33 प्रतिशत आरक्षण महिलाओं हेतु तथा अनु.जाति एवं जनजाति के लिये। प्रति पांचवे वर्ष चुनाव। |

| | | |
|---|---|---|
| 23. सुनिश्चित रोजगार योजना | 1993 | गैर कृषि कार्य अवधि में ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर, परिसम्पत्तियों का निर्माण, दो वयस्कों हेतु वर्ष भर में कम से कम 100 कार्य दिवस रोजगार, केन्द्र व राज्य योगदान अनुपात 80:20 श्रम व सामग्री अनुपात 60:40 |
| 24. महिला समृद्धि योजना | 1993 | इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं में बचत की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करके उन्हें आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाना है। |
| 25. रोजगार आश्वासन योजना | 1993 | इस योजना का मुख्य उद्देश्य युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराना है। इस योजना के अन्तर्गत खण्डों का चयन मुख्य रूप से सूखाग्रस्त क्षेत्रों, मरूस्थलीय क्षेत्रों, जनजातीय क्षेत्रों और पहाड़ी क्षेत्रों से किया जाता है। |
| 26. प्रधानमंत्री रोजगार योजना | 1993-94 | इस योजना के अन्तर्गत 18 से 35 वर्ष आयु वर्ग के शिक्षित बेरोजगारों को स्वरोजगार हेतु 1 लाख रूपये तक वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है। |
| 27. सीमा क्षेत्र विकास | 1993-94 | सीमा क्षेत्रों में समन्वित विकास करना। |
| 28. राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम | 1995 | वृद्धों तथा निराश्रियों हेतु (जिनका कोई आय का साधन नहीं) सहायता कार्य/गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालों हेतु। |
| 29. ग्रामीण निर्माण केन्द्र योजना | 1995 | ग्रामीण क्षेत्रों में सस्ती व पर्यावरण अनुकूल निर्माण सामग्री के उत्पादन हेतु आवासों के निर्माण के लिये प्रौद्योगिकी हस्तांतरण को बढ़ावा देने वाले ग्रामीण निर्माण केन्द्रों की स्थापना करना। |

| | | |
|---|---|---|
| 30. जवाहर ग्राम समृद्धि योजना | 1999 | जवाहर रोजगार योजना का यह पुनर्गठित रूप हैं यह ग्राम स्तर पर ग्रमीण सुविधाओं के विकास करने हेतु आधारित होगा तथा इसकी आवंटित राशि सारी ही सीधे ग्राम पंचायतों को दी जाती है। |
| 31. प्रधानमंत्री ग्रामोदय ग्रामीण आवास योजना | 1999 | ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों के लिये आवासीय सुविधा प्रदान करने हेतु सहायता प्रदान करना। |
| 32. ग्रामीण आवास हेतु ऋण एवं सब्सिडी योजना | 1993 | 3200 रूपये तक की आय वाले के लिये आवास बनाने हेतु ऋण एवं सब्सिडी उपलब्ध कराना। |
| 33. समग्र आवास योजना | 1999 | ग्रामीण क्षेत्रों में आवास, स्वच्छता और पेयजल की समन्वित रूप से व्यवस्था करना। |
| 34. ग्रामीण आवास एवं पर्यावरण विकास की अभिनव योजना | 1999 | ग्रामीण क्षेत्रों में अवासीय इकाइयों के निर्माण में किफायती, पर्यावरण अनुकूल आधुनिक, डिजाइनों, प्रौद्योगिकियों और साम्रगियों के उपयोग को बढ़ावा देना। |
| 35. स्वर्णजयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना | 1999 | समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्र महिला एवं बाल विकास, स्वरोजगार के लिये ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण, ग्रामीण दस्ताकारों की उन्नत औजारों की आपूर्ति, गंगा कल्याण, योजना तथा दस लाख कुआं योजनाओं को मिला कर निर्मित योजना इस योजना में लाभान्वित होने वाले व्यक्तियों की पहचान करने, उन्हें प्रशिक्षण और ऋण उपलब्ध कराने आदि का काम अब इसी योजना में समन्वित ढंग से किया जाता है। इसकी एक विशेषता ग्रामीण विपणन केन्द्र स्थापित करना हैं जिसके माध्यम से ग्रामीण दस्तकार अपनी वस्तुओं का विक्रय कर सकेंगे। |

| | | |
|---|---|---|
| 36. सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना | 2001 | प्रमुख उद्देश्य खाद्यान्न सुरक्षा सुनिश्चित करते हुये ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अतिरिक्त अवसर सृतिज करना। अन्य उद्देश्यों में स्थाई सामुदायिक सामाजिक एवं आर्थिक परिस्म्पत्तियों का सृजन तथा अवस्थापना सुविधाओं का विकास। |
| 37. बत्तीस जिला बत्तीस काम | | प्रत्येक जिले में किसी एक वर्ष में कोई भोजन उपयोग हेतु गतिविधि निर्धारण कर उनका क्रियान्वयन उसी वर्ष में करना। |
| 38. मैसिव योजना | | सिंचाई योजनाओं में सुधार एवं उन्नयन की दिशा में कार्य लघु एवं सीमान्त कृषकों हेतु ट्यूब वैलस का निर्माण, डीजल एवं विद्युत चालित पम्पसेट, पानी की लाइने विछाने का कार्य। |
| 39. अपना गांव अपना काम | | आधारभूत ढांचे का निर्माण एवं रोजगार आधारित व्यवसायों का ग्रामीण इलाकों में प्रचार प्रसार। राजकीय विनियोजन एवं जन सहयोग का अनुपात क्रमशः 66 प्रतिशत एवं 33 प्रतिशत। |
| 40. 'कर्पाट' | | गैर–सरकारी संगठन एवं स्वयं सेवी संस्थानों द्वारा सहायता उपलब्ध कराकर विकास की गतिविधियों का ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसार। रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने की दिशा में कार्य। |

निम्नलिखित योजनाओं में वर्तमान समय की आवश्यकताओं को देखते हुये कुछ योजनाओं को बन्द करना पड़ा और कुछ योजनाओं को एक साथ मिलाकर नये नाम से प्रारम्भ किया गया।

इस प्रकार से आवश्यकता अनुसार ग्रामीण विकास हेतु योजनाओं को बनाने में समय की आवश्यकता के अनुरूप कई बदलाव किए गए, पर अभी भी बहुत सुधारों की गुंजाइश है।

इन योजनाओं से वर्तमान मे जो योजनाओं देश के विभिन्न भागों में संचालित है, उनका अध्ययन अध्याय के अगले भाग में किया गया है।

## वर्तमान में संचालित ग्राम्य विकास योजनायें -

वर्तमान समय में देश में निम्न लिखित ग्राम्य विकास योजनायें मुख्य रूप से संचालित हैं।

*प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना* – ग्रामीण सड़क सम्पर्क आर्थिक और सामाजिक सेवाओं तक पहुंच का संबर्धन करते हुए और भारत में कृषि आय और उत्पादक रोजगार अवसरों का अधिक मात्रा में सृजन करते हुए ग्रामीण विकास का न केवल एक मुख्य घटक है, वरन स्थायी रूप से गरीबी निवारण कार्यक्रम का भी एक मुख्य भाग है। पिछले वर्षो में विभिन्न कार्यक्रमों के जरिए राज्य और केन्द्र स्तरों पर किए गए प्रयासों के बावजूद देश में अभी भी लगभग 40 प्रतिशत बसावटें बारहमासी सड़को से नहीं जुड़ी हुई हैं यह सर्वविदित है कि जहां पर सड़क सम्पर्क मुहैया भी कराया गया है वहां निर्मित सड़कों की हालत (खराब निर्माण अथवा रख रखाव की बजह से) ऐसी नहीं है कि उन्हें बारहमासी सड़कों के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सके।

इस स्थिति को सुधारने के मद्देनजर सरकार ने 25 दिसम्बर 2000 को प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना प्रारम्भ की है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (पी.एम.जी.एस.वाई.) शत–प्रतिशत केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना है। इस कार्यक्रम के लिए हाई स्पीड डीजल (एच.एस.डी.) पर 50 प्रतिशत उपकर निर्धारित है।

**कार्यक्रम के उद्देश्य** :– पी.एम.जी.एस.बाई. का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों से न जुड़ी बसावटों को बारह मासी सड़कों (आवश्यक पुलियों और क्रास–डेनेज ढांचो, जो साल भर काम करने के लायक हो) के जरिए सड़क सम्पर्क इस तरह से मुहैया कराना है कि 1000 और इससे अधिक की आबादी वाली बसावटे तीन वर्षो (2000–2003) में तथा 500 और इससे अधिक की आबादी वाली सड़कों से न जुड़ी सभी बसावटे दसवी योजना अवधि (2007) के अन्त तक कवर हो जाए। पर्वतीय क्षेत्रों (पूर्वोत्तर, सिक्किम, हिमाचल प्रदेश जम्मू व कश्मीर, उत्तरांचल) तथा मरूभूमि क्षेत्रों में इस योजना का उद्देश्य 250 और इससे अधिक की आबादी वाली बसावटों को सड़कों से जोड़ना होगा।

पी.एम.जी.एस.वाई. में उन जिलों मे मौजूदा सड़को को सुधारने (निर्धारित मानदण्डों के अनुसार) की अनुमति दी गयी है जहां निर्दिष्ट जनसंख्या वाली सभी बसावटों को बारहमासी सड़क संपर्कता प्रदान की गई है। सुधार कार्य कार्यक्रम का केन्द्र बिन्दु नहीं है और इस स्थिति में यह उन राज्यों के राज्य आवंटन के 20 प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकता है जहां अभी भी सड़कों से न जुड़ी बसाबटें मौजूद है। सुधार कार्य में कोर नेटवर्क में सामान्य और सभी सड़कों को बारहमासी सड़कों में बदलने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।[1]

**राज्य स्तरीय एजेन्सियां** – ''ग्रामीण सड़क'' राज्य का विषय है, इसलिये, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के कार्यो के राज्य एजेन्सियों द्वारा निष्पादित किया जाता है। राज्य सरकारों ने राज्यों में कार्यक्रम के निष्पादन के लिये नोडल विभाग के साथ साथ कार्यान्वयन

---

1. दिशा– निर्देश पुस्तिका – प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना – ग्रामीण विकास मंत्रालय – भारत सरकार।

एजेन्सियों का अभिनिर्धारण किया है अधिकांश राज्यों ने इस कार्य के लिये ग्रामीण सड़क विकास एजेन्सियों की स्थापना की हैं, जो क्षेत्र में कार्यक्रम के निष्पादन का समन्वय कार्य भी करता है।

*बजट* – प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना कार्यक्रम का वित्तपोषण फिलहाल सेन्ट्रल रोड फण्ड एक्ट के अन्तर्गत लगाए गए 1 रू0 प्रति लीटर के डीजल उपकर के ग्रामीण सड़क अंशदान के माध्यम से किया जाता है कार्यक्रम के प्रारम्भ में दिया गया बजट सारणी 7 में प्रदर्शित हैं।

सारणी – 7

| वर्ष | राशि (करोड़ रूपये में) |
|---|---|
| 2000–01 | 2500 |
| 2001–02 | 2500 |
| 2002–03 | 2500 |
| 2003–04 | 2350 |

2003–04 के दौरान बजट में कमी का कारण उपकर की उगाही में कमी होना है। 2003–04 की बजट घोषणा में हाई स्पीड डीजल पर 50 पैसे प्रति लीटर का अतिरिक्त उपकर लगाया गया था, परन्तु इस अतिरिक्तता को 2003–04 के प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के आवंटन में नहीं दर्शाया गया है।

पी.एम.जी.एस.वाई. में कार्यो की गुणवत्ता ग्रामीण सड़क नियमावली में निर्धारित मानकों के अनुसार निर्धारित की जाती हैं एन.आर.आर.डी.ए. इस प्रयोजनार्थ, गुणवत्ता नियंत्रण पुस्तिका निर्धारित करती है तथा उसे परिचालित करती हैं। पी.एम.जी.एस.वाई.कार्य के लिये तीन स्तरीय गुणवत्ता नियंत्रण प्रणाली की व्यवस्था की गई है। कार्यक्रम कार्यान्वयन ईकाई (पी.आई.यू.) पहला स्तर है, राज्य सरकार के जरिए स्वतंत्र राज्य गुणवत्ता निरीक्षक दूसरा स्तर है। राष्ट्रीय ग्रामीण सड़क विकास ऐजेसी (एन.आर.आर.डी.ए.) व्यवस्थित आधार पर सड़क कार्यो की गुणवत्ता की जांच करने के लिये राष्ट्रीय गुणवत्ता निरीक्षकों को तीसरे स्तर के रूप में शामिल करती है।[1]

राष्ट्रीय गुणवत्ता निरीक्षकों की रिपोर्ट आवश्यक कार्यवाही के लिये राज्य सरकार को भेजी जाती है जनवरी 2003 तथा मार्च 2004 के बीच राष्ट्रीय गुणवत्ता निरीक्षकों द्वारा जांचे गए 17837 सड़क कार्यो में से 36 प्रतिशत को ''बहुत अच्छे'' 53 प्रतिशत को अच्छे, 10 प्रतिशत को औसत तथा 1 प्रतिशत को ''खराब'' कार्य के रूप में वर्गीकृत किया गया हैं राज्यों को राष्ट्रीय गुंणवत्ता निरीक्षकों की रिपोर्ट पर आवश्यक कार्यवाही करनी होती है तथा की गई कार्यवाही रिपोट प्रस्तुत करनी पड़ती हैं राज्य प्राधिकारियों द्वारा आगे भुगतान किए जाने से पहले राज्यों को यह सुनिश्चित कर लेने की सलाह दी गई है। कि निरीक्षकों द्वारा बताई गई कमियों को सुधार लिया गया है।

**प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (पी.एम.जी.आई.)** – इस योजना का प्रारम्भ वर्ष 2000–01 में सभी राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में किया गया ताकि ग्राम स्तर पर स्थायी मानव विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। पी.एम.जी.वाई. के अन्तर्गत चुनिंदा बुनियादी न्यूनतम

1. वार्षिक रिपोर्ट – 2003–04 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय –

सेवाओं के लिए राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों को अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता प्रदान करने पर विचार किया गया है, ताकि कतिपय प्राथमिकता वाले क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित किया जा सके। शुरू में पीएमजीवाई के पांच घटक थे, अर्थात प्राथमिक स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा, ग्रामीण आश्रय गृह (शैल्टर), ग्रामीण पेयजल तथा पोषाहार। 2001–2002 से ग्रामीण विद्युतीकरण को एक अतिरिक्त घटक के रूप में जोड़ा गया है। 2002–2003 तथा 2003–2004 के लिए प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना के लिए अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता 2800[1] करोड़ रूपये है, इस कार्यक्रम की वित्तीय तथा वास्तविक दोनो प्रकार की मॉनीटरिंग योजना आयोग द्वारा की जाती है।

**अन्त्योदय अन्न योजना (ए.ए.वाई)** – अन्त्योदय अन्न योजना दिसम्बर 2000 में प्रारम्भ की गई। इस योजना के अन्तर्गत लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत शामिल गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों में से निर्धनतम् 1 करोड़ लोगों की पहचान की गई। 2 रू0 प्रति किग्रा0 गेहूं और 3 रू0 प्रति किग्रा0 चावल की अत्यधिक सब्सिडी प्राप्त दर पर प्रत्येक पात्र परिवार को पच्चीस किलोग्राम खाद्यान्न मुहैया कराया गया। अप्रैल 2002 से यह मात्रा 25 किग्रा0 से बढ़कर 35 किग्रा0 कर दी गई है। जून 2003 में गरीबी रेखा से नीचे के 50 लाख और परिवारों को शामिल करके इस योजना का और विस्तार किया गया। इस योजना के अन्तर्गत वर्ष 2003–04 के दौरान 41.27 लाख टन खाद्यान्न के आवंटन की तुलना में राज्य सरकारों द्वारा उठाई गई मात्रा 35.39 लाख टन थी और 2003–04 के दौरान 45.56 लाख टन के आवंटन की तुलना में खाद्यान्न की उठाई गई मात्रा 38.24 लाख टन थी।

**बाल्मिकी अम्बेडकर आवास योजना (वेम्बे)** – शहरों के गंदी बस्तियों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों। (जिनके पास रहने की पर्याप्त जगह नहीं है) की स्थिति को सुधारने के लिये ''बेम्बे'' दिसम्बर 2001 को शुरू की गयी। इस योजना का मूल उद्देश्य गंदी बस्तियों में रहने वाले लोगों के लिए आवासीय यूनिटों का निर्माण और उन्नयन करना तथा इस योजना के एक घटक निर्माण भारत अभियान के अंतर्गत सामुदायिक शौचालयों के माध्यम से एक स्वस्थ तथा शहरी पर्यावरण को बेहतर बनाना है। केन्द्र सरकार इस योजना के लिए 50 प्रतिशत सब्सिडी प्रदान करती है तथा शेष 50 प्रतिशत भाग की व्यवस्था राज्य सरकार द्वारा की जाती है। इसके अन्तर्गत आवासीय यूनिटों और सामुदायिक शौचालयों दोनों के लिये अधिकतम लागत की सीमा निर्धारित होती है। वर्ष 2003–04 के दौरान 239 करोड़ रूपये तक की केन्द्रीय सब्सिडी पहले दे दी गयी है। इसकी शुरूआत में मई 2004 तक इस योजना के अन्तर्गत 246035 आवासीय यूनिटों तथा 29263 शौचालयों सीटों के निर्माण/उन्नयन के लिए भारत सरकार की सब्सिडी के तौर पर 522 करोड़ रूपये की राशि जारी की गई थी।

**स्वर्णजयन्ती शहरी रोजगार योजना (एस.जे.एस.आर.वाई.)**–

शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम और शहरी मजदूरी रोजगार कार्यक्रम दिसम्बर 1997 में प्रारम्भ किया गया, एस जे एस आर वाई की दो विशेष योजनाऐं हैं, जिन्होंने शहरी निर्धनता उन्मूलन के लिए पहले चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों का स्थान ले लिया। केन्द्र और राज्यों के लिए एस जे एस आर वाई का वित्तपोषण 75:25 अनुपात के आधार पर किया जाता है। वर्ष 2002–2003

1. आर्थिक समीक्षा – 2003–04 वित्त मंत्रालय भारत सरकार – पृ0 206 ।

के दौरान, इस कार्यक्रम के विभिन्न घटकों के लिए आबंटित 105 करोड़ रू0 की पूरी राशि जारी कर दी गयी थी। 2003-04 के लिये 94.50 करोड़ रू0 और पूर्वोत्तर तथा सिक्किम के लिये 10.5 करोड़ रू0 का आवंटन इस कार्यक्रम विभिन्न घटकों के लिए किया गया। इस योजना के तहत वर्ष 2003-04 में 105 करोड़ रू0 व्यय किये गये।

## समेकित बंजर भूमि विकास कार्यक्रम -

समेकित बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (आई.डब्ल्यू.डी.पी.) जो एक केन्द्र प्रायोजित कार्यक्रम है, वर्ष 1989 - 90 से कार्यान्वित किया गया और इसे राष्ट्रीय बंजरभूमि विकास बोर्ड के साथ पूर्ववर्ती बंजर भूमि विकास विभाग (भूमि संसाधन विभाग) को जुलाई 1992 को वाटरशेड विकास के लिए समान मार्गदर्शी सिद्धान्तों के अन्तर्गत वाटरशेड पद्धति के जरिए कार्यान्वित किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बंजरभूमि और अवक्रमित भूमि के विकास से सभी स्तरों पर लोगों की भागीदारी को बढ़ाए जाने के अलावा ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों के सृजन में वृद्धि होने की आशा की जाती है, जिससे भूमि के सतत विकास और लाभों के समान वितरण में सहायता मिले। समेकित बंजरभूमि विकास कार्यक्रम (आई.डब्ल्यू.डी.पी.) के अन्तर्गत देश में वने तर बंजरभूमि को विकसित करने की परिकल्पना की गई है। इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन की मूल क्रियाविधि 1.04.1995 से संशोधित किया गया है, जब वाटर रोड पद्धति के जरिए वाटर शेड विकास के लिए मार्गदर्शी सिद्धान्त लागू हुए थे, तब से बंजरभूमि को माइक्रोवाटर शेड आधार पर विकसित करने हेतु परियोजनाएं स्वीकृत की जा रही है वर्ष 1999-2000 से समेकित बंजरभूमि विकास कार्यक्रम की नई परियोजनाओं की स्वीकृति के लिए प्राथमिकता राज्य सरकारों के साथ परामर्श से निर्धारित की जाती है। परियोजना प्रस्ताव जिला पंचायतो/जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों द्वारा तैयार किए जाने होते हैं और इन प्रस्तावों को भूमि संसाधन विभाग में अपर सचिव की अध्यक्षता वाली परियोजना स्वीकृति समिति के विचार के लिए सम्बन्धित राज्य सरकारों के माध्यम से विभाग को प्रस्तुत किया जाता है। 31.03.2000 तक स्वीकृत की गई परियोजनाओं को 4000 रूपये प्रति हैक्टेयर की समग्र लागत पर तथा 01.04.2000 के बाद स्वीकृत की गई परियोजनाओं को 6000 रूपये प्रति हेक्टेयर की समग्र लागत पर पांच वर्षो की अवधि में कार्यान्वित किया जाता है।

इस कार्यक्रम का मूल उद्देश्य गांव/माइकोवाटर शेड योजनाओं के आधार पर बंजरभूमि/अवक्रमिक भूमि का समेकित विकास करना है, ये योजनाएं भूमि की उर्वरता, स्थल स्थिति तथा लोगों की स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में लेने के पश्चात परियोजना कार्यान्वयन एजेंसियों के वाटर शेड विकास दलों के तकनीकी मार्गदर्शन के साथ वाटरशेड संघो/वाटर शेड समितियों द्वारा तैयार की जाती है। कार्यक्रम का लक्ष्य निम्नलिखित उद्देश्यों को पूरा करना है।

भूमि की उर्वरता, स्थल स्थितियों तथा स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए बंजरभूमि/अवक्रमिल भूमि को वाटर रोड आधार पर विकसित करना।

- कार्यक्रम वाले क्षेत्रों में रहने वाले संसाधन हीन गरीब लोगों तथा उपेक्षित वर्गो के समग्र आर्थिक विकास को बढ़ावा देना तथा उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाना।
- भूमि, जल, वानस्पतिक आच्छादन जैसे प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग, संरक्षण तथा विकास के द्वारा पारिस्थितिकीय सन्तुलन को बहाल करना।

गांव के समुदाय को निम्नलिखित के लिये प्रोत्साहित करना।

(क) जल ग्रहण (वाटर शेड) क्षेत्र में सृजित परिसम्पत्तियों के संचालन तथा रख रखाव तथा प्राकृतिक संसाधनों की शक्यता का आगे और विकास करने के लिए सतत सामुदायिक प्रयास।

(ख) साधारण, सरल और वहन कर सकने योग्य ऐसे प्रौद्योगिकीय समाधान और संस्थागत व्यवस्थाएं जिनका उपयोग किया जा सके और जिन्हें स्थानीय तकनीकी ज्ञान और उपलब्ध सामग्री के आधार पर तैयार किया जा सके।

- रोजगार सृजन, गरीबी उपशमन, सामुदायिक अधिकार सम्पन्नता तथा गांव के मानव संसाधनों और अन्य आर्थिक संसाधनों का विकास।

## कवरेज –

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत परियोजनाएं सामान्यतः उन ब्लाकों में स्वीकृत की जाती हैं, जो मरूभूमि विकास कार्यक्रम (डी.पी.ए.पी.) के अन्तर्गत शामिल नहीं होते हैं। इस समय इस कार्यक्रम के अन्तर्गत परियोजनाएं देश के 301 जिलों में कार्यान्वित की जा रही है। संशोधित मार्गदर्शी सिद्धान्तों में पंचायती राज संस्थाओं स्वसहायता समूहों तथा प्रयोक्ता समूहों, विशेष रूप से वाटर शेड परियोजना क्षेत्रों में रहने वाले भूमिहीन, अनुसूचित जातियों, अनु0 जनजातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गो के लोगों के लिए अधिक भूमिका सुनिश्चित की जाती है।

## वित्तपोषण पद्धति –[1]

समेकित बंजरभूमि विकास कार्यक्रम (आई.डब्ल्यू.डी.पी.) एक केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना है। 31.03.2000 से पहले कार्यक्रम के अन्तर्गत वाटर शेड विकास परियोजनाऐं 4000 रूपये प्रति हैक्टेयर के लागत मानदण्ड पर स्वीकृत की जाती थीं। इनका वित्तपोषण पूर्णतया केन्द्र सरकार द्वारा किया जाता था। 01.4.2000 के बाद स्वीकृत की गई परियोजनाओं के लिए लागत मानदण्ड को अब संशोधित करके 600 रूपये प्रति हैक्टेयर कर दिया गया है। नई परियोजनाओं के वित्तपोषण की राशि को केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों के बीच क्रमशः 5500 रूपये और 500 रूपये प्रति हैक्टेयर के अनुपात में बाटा जाता है। तथापि 31.3.2000 तक स्वीकृत की गई पुरानी परियोजनाओं का वित्तपोषण पूर्णतः केन्द्र सरकार द्वारा किया जाता है।

## वास्तविक और वित्तीय निष्पादन –

इस समय विभिन्न राज्यों में 50.79 लाख हैक्टेयर के कुल परियोजना क्षेत्र को विकसित करने हेतु 01.4.1995 के बाद स्वीकृत की गई 662 आई.डब्ल्यू.डी.पी. परियोजनाएं कार्यान्वयन की विभिन्न अवस्थाओं में है।

## बजट एवं लक्ष्य –

वर्ष 2003–04 में समेकित बंजरभूमि कार्यक्रम के लिये 335.00 करोड़ रूपये के बजट प्रावधान की तुलना में 312.90 करोड़ रूपये (93.4प्रतिशत) की राशि जारी की गई, आई.डब्ल्यू.डी.पी. के तहत चल रही परियोजनाओं के लिए निधियों की आवश्यकता को पूरा करने के अलावा 31.3.04 तक 10 लाख हैक्टेयर क्षेत्र के लक्ष्य की तुलना में कुल 10.06 लाख हैक्टेयर क्षेत्र को

---

1. वार्षिक रिपोर्ट – 2002–03 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय ।

शामिल करने हेतु वर्ष 2003–04 के दौरान 190 नई परियोजनाएं स्वीकृत की गई है, इन नई परियोजनाओं को हरियाली के लिए मार्गदर्शी सिद्धान्तों के अन्तर्गत कार्यान्वित किया जा रहा है। समेकित बंजर भूमि विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 2004–05 के लिए 368.00 करोड़ रूपये का परिव्यय सरकार द्वारा निर्धारित किया गया है।

## सुनिश्चित रोजगार योजना (ई.ए.एस.) के अन्तर्गत चल रहीं वाटरशेड परियोजनायें–[1]

31.03.1999 से पूर्व सुनिश्चित रोजगार योजना (ई0ए0एस0) के मार्गदर्शी सिद्धान्तों में यह निर्धारित किया गया था कि सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम और मरूभूमि विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत क्षेत्रों में सुनिश्चित रोजगार योजना के तहत जारी की गई निधियों के 50 प्रतिशत तक की राशि और अन्य क्षेत्रों में जारी की गई निधियों के 40 प्रतिशत तक की राशि को वाटरशेड विकास परियोजनाओं और अन्य सम्बन्धित कार्यकलापों पर खर्च किया जाना अपेक्षित है। तथापि, विभिन्न योजनाओं की संरचना को युक्ति संगत बनाने हेतु हाल ही में की गई कार्यवाही के एक भाग के रूप में सुनिश्चित रोजगार योजना को मुख्यमतः मजदूरी रोजगार योजना के रूप में ही रखा जाता है और योजना के अन्तर्गत नई वाटरशेड परियोजनाओं के स्वीकृत करना 1.4.1999 से बंद कर दिया गया है।

इसी बीच राज्यों द्वारा पहले से स्वीकृति की गई वाटरशेड विकास परियोजनाओं के सम्बन्ध में एक देनदारी शुरू कर दी गई, 63.50 लाख हैक्टेयर क्षेत्र को शामिल करते हुए प्रारम्भ की गई इन वाटर शेड विकास परियोजनाओं को पूरा करने के लिये (राज्यों के भाग सहित) कुल देनदारी लगभग 1500 करोड़ रूपये आंकी गई है। सरकार ने यह निर्णय लिया है कि उपयुक्त राशि में से केन्द्र के भाग को राज्यों को तीन वर्षो में जारी कर दिया जाए।

## सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम –

सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (डी0पी0ए0पी0) सबसे पुराना क्षेत्र विकास कार्यक्रम है, जिसे केन्द्र सरकार ने उन क्षेत्रों (जहां पर लगातार भंयकर सूखे की स्थिति बनी रहती है) के विशेष समस्याओं को हल करने के लिए वर्ष 1973–74 में शुरू किया था। इन क्षेत्रों की विशेषता यह है कि यहाँ पर मानव जनसंख्या और पशुओं की संख्या अधिक होने के कारण भोजन, चारे तथा ईधन के लिये यहां के उन प्राकृतिक संसाधनों पर लगातार काफी अधिक दबाव पड़ रहा है जो पहले से ही निम्नीकृत है। यहाँ पर मुख्य समस्याऐं वानस्पतिक आच्छादन का सतत् रूप मे क्षीण होना, भूमि–कटाव में वृद्धि होना तथा भूमि के नीचे जल के भंडार को पुनः भरने के लिये कोई प्रयास किए बिना लगातार दोहन के कारण भू–जल के स्तर में गिरावट आना है।

यद्यपि टिकाऊ सार्वजनिक परिसम्पत्तियों के सृजन के रूप में कार्यक्रम का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है तथापि, कुल मिलाकर सूखे के प्रतिकूल प्रभाव को कारगर रूप से रोकने में इस कार्यक्रम का असर बहुत उत्साह वर्धक नहीं रहा है, इसके अतिरिक्त बहुत से राज्यों ने इस कार्यक्रम में अतिरिक्त क्षेत्रों को सम्मिलित करने की भी मांग की थी। अतः कार्यक्रम में कमियों

1. वार्षिक रिपोर्ट – 2003–04 भारत सरकार – ग्रामीण विकास मंत्रालय ।

का पता लगाने और कार्यक्रम के अन्तर्गत और क्षेत्रों को शामिल करने सम्बन्धी मामले पर विचार करने को ध्यान में रखते हुए सभी क्षेत्र विकास कार्यक्रमों के विषयों, कार्य प्रणाली तथा कार्यान्वयन प्रक्रियाओं की व्यापक रूप से समीक्षा करने के लिए तथा सुधार के लिये उपयुक्त उपाय सुझाने हेतु अप्रैल 1993 में योजना आयोग के भूतपूर्व सदस्य प्रो.सी.एच. हनुमंत राव की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय तकनीकी समिति गठित की गई थी।

समिति ने अप्रैल 1994 में प्रस्तुत की गई अपनी रिपोर्ट में कार्यक्रमों के असन्तोषजनक कार्य निष्पादन के लिए मुख्य रूप से निम्न लिखित कारणों को उत्तरदायी ठहराया था।

- कार्यक्रम सम्बन्धी कार्यकलापों को विशाल क्षेत्रों में कार्य क्षेत्र आधार पर और प्रकीर्ण रूप से कार्यान्वित करना।
- कार्यक्रम के लिये अपर्याप्त आवंटन और समस्या ग्रस्त विस्तृत क्षेत्रों में कार्यक्रम के तहत कम व्यय किया जाना।
- कार्यक्रम को स्थानीय लोगों की बहुत कम भागीदारी या इसके बिना ही सरकारी एजेन्सियों के माध्यम से कार्यान्वित किया जाना।

विभिन्न प्रकार के कार्यकलापों को बड़े स्तर पर शुरू करना जिन्हें न तो उचित रूप से समेकित किया गया था और न ही इन्हें कार्यक्रम के उद्देश्यों के साथ सम्बद्ध किया गया था। हनुमंत राव समिति की सिफारिशों के आधार पर सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम मरूभूमि विकास कार्यक्रम तथा समेकित बंजरभूमि विकास कार्यक्रम के लिये समान रूप से लागू वाटर शेड विकास सम्बन्धी व्यापक मार्गदर्शी सिद्धान्त अक्टूबर 1994 से जारी किये गये थे, इन्हें 01.4.1995 से लागू किया गया था, तत्पश्चात्, राज्यों परियोजना कार्यान्वयन एजेंसियो तथा अन्य सम्बन्धितों से प्राप्त सूचना के आधार पर मार्गदर्शी सिद्धान्तों को सितम्बर 2001 में संशोधित किया गया।

**उद्देश्य** – कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य फसलों के उत्पादन, पशुधन तथा भूमि की उत्पादकता, जल और मानव संसाधनों पर पड़ने वाले सूखे के प्रतिकूल प्रभावों को कम करना है, तथा इसके द्वारा अंततः प्रभावित क्षेत्रों को सूखे के प्रभाव से मुक्त कराना है, कार्यक्रम का उद्देश्य कार्यक्रम क्षेत्रों में निवास करने वाले संसाधनहीन गरीब लोगों और उपेक्षित वर्गो की सामाजिक आर्थिक स्थिति में संसाधन आधार के सृजन, इसे व्यापक बनाकर और समान वितरण के द्वारा तथा रोजगार के अवसरों को बढ़ाकर सुधार लाना और उनके समग्र आर्थिक विकास को बढ़ाना है। कार्यक्रम के इन उद्देश्यों को सामान्यतया भूमि विकास, जल संसाधन विकास और वनीकरण/चारागाह विकास के लिए विकासात्मक कार्यो को वाटरशेड पद्धति के आधार पर शुरू करके पूरा किया जा रहा है मंत्रालय द्वारा प्रायोजित हाल ही के प्रभाव सम्बन्धी अध्ययनों से यह पता चला है कि सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (डी0पी0ए0पी0) के तहत वाटरशेड परियोजनाओं के कार्यान्वयन के फलस्वरूप भूमि की समग्र उत्पादकता तथा जल स्तर में वृद्धि हुई है तथा जल और वायु द्वारा होने वाले भू – कटाव को रोकने में महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। इस कार्यक्रम से परियोजना क्षेत्रों में समग्र आर्थिक विकास में भी सहायता मिली है।

**वित्तपोषण पद्धति** – मार्च 1999 तक निधियां केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच 50:50 के आधार पर बांटी जा रही थी, तथापि 1 अप्रैल 1999 से निधियां केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच 75:25 के आधार पर बांटी जाती है, अप्रैल 1999 से पूर्व स्वीकृत की गई चल

रही परियोजनाओं को पूरा करने के लिये वित्तपोषण की पुरानी पद्धति जारी रहेगी। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 500 हेक्टेयर क्षेत्र की परियोजनाएं स्वीकृत की जाती है। सूखा-प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न पारिस्थितिकी-प्रणालियों के मार्च 2000 तक निम्न लिखित लागत मानदण्ड अपनाए गए थे।

सारणी - 8

| पारिस्थितिकी प्रणाली का प्रकार | प्रति हैक्टेयर औसत लागत (रूपये में) | वाटरशेड परियोजना लागत (लाख रू0 में) |
|---|---|---|
| 1. अर्द्धशुष्क क्षेत्र | 4000 | 20.00 |
| 2. शुष्क अर्द्ध-आर्द्ध क्षेत्र | 3000 | 15.00 |
| 3. शुष्क अर्द्ध-आर्द्ध (पहाड़ी क्षेत्र) | 4000 | 20.00 |
| 4.. उड़ीसा के के.बी.के. जिले | 5000 | 25.00 |

तथापि 01.04.2000 से 6000 रूपये प्रति हैक्टेयर की दर से एक समान लागत मानदण्ड लागू किये गये हैं ये लागत मानदण्ड वर्ष 2000-01 के दौरान या इसके बाद स्वीकृत की गई परियोजनाओं के लिए लागू है। वर्ष 1999-2000 तक स्वीकृत की गई पूर्ववर्ती परियोजनाओं के सम्बन्ध में पूर्व संशोधित लागत मानदण्ड लागू हैं।

## मरूभूमि विकास कार्यक्रम -

मानव जनसंख्या और पशुधन में निरन्तर वृद्धि होने के कारण सूखा प्रवण तथा मरूभूमि की पारिस्थितिकीय व्यवस्था के कमजोर प्राकृतिक संसाधन आधार पर लगातार अत्यधिक दोहन किया जाता रहा है, वानस्पतिक आच्छादन की काफी अधिक क्षति होने के कारण प्राकृतिक संसाधनों में कमी आने, भूमि-कटाव में वृद्धि होने और भूमिगत - जल के स्तरों में कमी आने से न केवल भूमि की बायोमास उत्पादकता में कमी आयी है, बल्कि इससे क्षेत्र के स्थानीय निवासियों की जीविका संसाधन संरचना पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

मरूभूमि विकास कार्यक्रम (डी.डी.पी.) को राजस्थान, गुजरात और हरियाणा के गर्म मरूभूमि क्षेत्रों और जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश के शीत मरूभूमि क्षेत्रों, दोनो में वर्ष 1977-78 में प्रारम्भ किया गया था। वर्ष 1995-96 से इसके क्षेत्र को बढ़ाकर आन्ध्र प्रदेश और कर्नाटक के कुछ जिलों में बढ़ा दिया गया।

इस कार्यक्रम की प्रो0 सी0 एच0 हनुमंत राव की अध्यक्षता वाली तकनीकी समिति द्वारा वर्ष 1994-95 में समीक्षा की गई थी, समिति द्वारा कार्यक्रम के तहत संतोषजनक परिणाम प्राप्त न होने के लिए पता लगाया गया मुख्य कारण क्षेत्र विकास कार्यक्रम के वाटर शेड आधार पर कार्यान्वित न करना और कार्यक्रम की आयोजना और कार्यान्वयन दोनो में ही स्थानीय लोगों की भागीदारी वास्तव में नगण्य होना था। इसके अलावा निधियों की अपर्याप्ता, प्रशिक्षित कार्मिकों का उपलब्ध न होना, एक साथ ऐसे बहुत से कार्यकलापों को शुरू करना, जिन्हें न तो उचित रूप से समेकित किया गया था और न ही उन्हें कार्यक्रम के उद्देश्यों से आवश्यक रूप से सम्बद्ध किया गया था, ऐसे कारण पाए गए थे, जो कार्यक्रम के असर को कम करने में सहायक रहे थे।

समिति की सिफारिशों के आधार पर, कार्यक्रम के तहत नए ब्लाकों/जिलों को शामिल किया गया था। वाटर शेड विकास के लिए विस्तृत मार्गदर्शी सिद्धान्तों को अक्टूबर 1994 में जारी किया गया था और इन्हें क्षेत्र विकास कार्यक्रम के लिए 1.04.1995 से लागू किया गया था। तत्पश्चात विभिन्न भागीदारी से प्राप्त सूचना के आधार पर संशोधित किए गए मार्गदर्शी सिद्धान्त

सितम्बर 2001 में परिचालित किए गए थे । ये मार्गदर्शी सिद्धान्त वर्ष 2000-01 के दौरान या इसके बाद स्वीकृत की गई परियोजनाओं के लिये लागू हैं।

उद्देश्य :- इस कार्यक्रम की परिकल्पना भूमि, जल, पशुधन और मानव संसाधनों के संरक्षण, विकास और इन्हें उपयोग में लाकर पारिस्थितिकीय सन्तुलन की बहाली के लिए एक दीर्घकालीन उपाय के रूप में की गई थी। इसका उद्देश्य ग्रामीण समुदाय के आर्थिक विकास को बढ़ाना और ग्रामीण क्षेत्रों में संसाधन हीन गरीब लोगों और समाज के उपेक्षित वर्गो की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना है। इस कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य निम्नानुसार है।

- फसलों, मानव और पशुधन पर मरूस्थलीकरण और विपरीत जलवायु परिस्थितियों के प्रतिकूल प्रभावों को कम करना और मरूस्थलीकरण को रोकना।
- प्राकृतिक संसाधनों अर्थात् भूमि, जल, वानस्पतिक आच्छादन का उपयोग, संरक्षण और विकास करके पारिस्थितिकीय सन्तुलन को बहाल करना और भूमि की उत्पादकता बढ़ाना।
- भूमि के विकास, जल संसाधनों के विकास और वनीकरण/चारागाह विकास के लिए वाटरशेड पद्धति के जरिए विकासात्मक कार्यो को कार्यान्वित करना।

## मरूभूमि विकास कार्यक्रम का प्रभाव मूल्यांकन -

वर्ष 1995-96 से 1997-98 तक की अवधि के दौरान स्वीकृत की गई उन परियोजनाओं, जो पूरी हो चुकी हैं, अथवा पूरी होने वाली हैं, सम्बन्ध में मंत्रालय ने स्वतंत्र संगठनों के जरिए प्रभाव मूल्याकन अध्ययन शुरू करवाये थे। इनमें से कुछ अध्ययन पूरे हो चुके हैं और प्राप्त परिणामों में से यह पता चलता है कि मरूभूमि विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत वाटरशेड परियोजनाऐं कार्यान्वित किए जाने से भूमि की समग्र उत्पादकता तथा जल के स्तर में वृद्धि हुई है और परियोजना क्षेत्रों में समग्र आर्थिक विकास पर इसका सकारात्मक और महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है, अध्ययनों से यह भी पता चला है कि मरूभूमि क्षेत्रों में हरित वानस्पतिक आच्छादन में भी सुधार हुआ है जिसका जल और वायु द्वारा होने वाले भूमि के कटाव को रोकने में सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

## वर्ष 2003-2004 के लिए परिव्यय और व्यय -

वर्ष 2002-03 में मरूभूमि विकास कार्यक्रम के लिए 185 करोड़ रूपये के योजना आवंटन की तुलना में वर्ष 2003-04 के लिए 215 करोड़ रूपये का बढ़ा हुआ प्रावधान किया गया है। इस आंबटन में से 31.03.04 तक 214.80 करोड़ रूपये की राशि जारी की जा चुकी है।

## बंजर भूमि विकास की अन्य योजनाऐं -

## प्रौद्योगिकी विकास, विस्तार तथा (टी.डी.ई.पी.) प्रशिक्षण योजना-

बंजरभूमि के विकास के लिये प्रौद्योगिकी सहायता अत्यन्त महत्वपूर्ण है, कृषि-जलवायु सम्बन्धी परिस्थितियों तथा भूमि की उर्वरता को ध्यान में रखते हुए क्षेत्र विशिष्ट उपयुक्त कार्यनीति तैयार की जानी होती है। खाद्यान्नो, ईधन, लड़की, चारे आदि के सतत् उत्पादन के लिए बंजरभूमि को विकसित करने/उपजाऊ बनाने हेतु उपयुक्त प्रौद्योगिकियां विकसित करने के उद्देश्य से केन्द्रीय क्षेत्र की प्रौद्योगिकी विकास, विस्तार एवं प्रशिक्षण (टी.डी.ई.टी.) योजना वर्ष 1993-1994 के दौरान आरम्भ की गई थी।

इस योजना के उद्देश्यों में अन्य बातों के साथ साथ निम्नलिखित शामिल हैं-

- बंजरभूमि के सम्बन्ध में आंकड़ा आधार तैयार करना।
- बंजरभूमि की विभिन्न श्रेणियों के विकास के लिए किफायती तथा प्रामाणिक प्रौद्योगिकियों को उपयोग में लाना।
- बंजरभूमि के विकास को बढ़ावा देने के लिए अनुसंधान निष्कर्षों तथा उपर्युक्त प्रौद्योगिकियों का प्रचार प्रसार करना।

यह योजना भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों तथा पर्याप्त संस्थागत संरचना तथा संगठनात्मक आधार रखने वाली सरकारी संस्थाओं के जरिए कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के सफल कार्यान्वयन से विद्यमान प्रौद्योगिकियों तथा अद्यतन स्थिति के लिए संगत अपेक्षित प्रौद्योगिकियों के बीच के अन्तर के समाप्त होने की आशा है।

बंजरभूमि के सम्बन्ध में आंकड़ा आधार तैयार करने के उद्देश्य से भूमि संसाधन विभाग ने राष्ट्रीय दूर संवेदी एंजेसी (एन0आर0एस0ए0) हैदराबाद के सहयोग से ''भारत की बंजरभूमि सम्बन्धी एटलस 2000'' (वेस्टलैण्ड एटलस ऑफ इण्डिया 2000) प्रकाशित किया है। वर्ष 2004-05 के लिए इस योजना के अन्तर्गत 15 करोड़ रूपये की राशि आबंटित की गई है।

## निवेश संवर्धन योजना -

वनेतर बंजरभूमि के विकास के लिए संसाधन जुटाने हेतु निगमित क्षेत्र/वित्तीय संस्थाओं, आदि की भागीदारी को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से केन्द्रीय क्षेत्र की निवेश संवधन योजना (आई0पी0एस0) वर्ष 1994-95 में प्रारम्भ की गई थी।

इस योजना के मुख्य उद्देश्यों में अन्य बातों के साथ साथ निम्नलिखित शामिल है। केन्द्र/राज्य सरकारों, पंचायतों/ग्राम समुदायों, किसानों आदि की वनेतर बंजरभूमि को विकसित करने के लिये प्रयोक्ता उद्योगों और अन्य उद्यमियों सहित वित्तीय संस्थाओं बैंको, निगमित निकायों से संसाधन प्राप्त करने को सुसाध्य बनाना/आकृष्ट करना/सुचार बनाना/जुटाना।

## विदेशों से सहायता प्राप्त परियोजनाएं -

देश में बंजरभूमि के विकास के लिए संसाधन जुटाने की दृष्टि से विदेशों से सहायता प्राप्त करने हेतु प्रयास किए गए हैं, इस समय विभिन्न विदेशी दाता एजेंसियों की सहायता से 6 परियोजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं। डिपाटमेंट फॉर इंटरनेशनल डिवेलपमेंट (डी.एफ.आई.डी.) से सहायता प्राप्त आन्ध प्रदेश और उड़ीसा राज्यों में ग्रामीण जीविका सम्बन्धी परियोजनाओं के मामले में, निधियां भूमि संसाधन विभाग के माध्यम से जारी की जा रही है/मुहैया करायी जाती है। अन्य परियोजनाओं में दाता एजेंसियों द्वारा कार्यान्वयन एजेंसियों को निधियां आर्थिक कार्य विभाग के जरिए उपलब्ध कराई जा रही है।

## आंध्र प्रदेश ग्रामीण जीविका परियोजना (ए.पी.आर.एल.पी.) -

आन्ध प्रदेश ग्रामीण जीविका परियोजना (ए0पी0आर0एल0पी0) डिपार्टमेंट फॉर इंटरनेशल डिवेलपमेंट यू. के. द्वारा जून 1999 में 320 करोड़ रूपये (45.54 मिलियन पाउंड = 40.176 मिलियन पाउंड की राशि की वित्तीय सहायता सात वर्षो में मुहैया करायी जा रही है + 5.367 मिलियन पांउड की राशि की सहायता तकनीकी सहयोग निधि के रूप में क्षमता निर्माण और ज्ञान

वर्द्धन के लिये होगी) यह परियोजना औपचारिक रूप से मेहबूब नगर जिले में 13.11.1999 को आरम्भ की गई थी तथा इसे 31.07.06 तक पूरा होना है।

आंध्र प्रदेश ग्रामीण जीविका परियोजना का उद्देश्य राज्य के पांच जिलों नामतः अनंतपुर, कुर्नूल, मेहबूबनगर, नालगोंडा और प्रकाशम जिले में गरीबोन्मुखी वाटरशेड आधारित सतत्, सम्पोषणीय ग्रामीण जीविका प्रणालियों को कार्यान्वित करना है। इस परियोजना के अन्तर्गत उपर्युक्त पांच जिलों में प्रत्येक माइक्रोवाटरशेड में 500 हैक्टेयर क्षेत्र को शामिल करते हुऐ प्रत्येक जिले में 100 माइक्रोवाटरशेड की दर से 500 माइक्रोवाटरशेडों के विकास का कार्य शुरू किया गया है।

इस परियोजना के अन्तर्गत डी.एफ.आई.डी. राज्य में चल रहे लगभग 2000 वाटरशेडों तथा 500 नए वाटरशेडों में वाटर शेड सदस्यों के लिए प्रशिक्षण तथा क्षमता निर्माण हेतु सहायता दे रहा है। इसके अलावा, लगभग 50 ऐसे अच्छे वाटरशेडों का चयन किया जाएगा जहां पर भूमिहीनों के लिये आय प्राप्ति के अवसरों तथा समुदाय आधारित संगठनों तथा परियोजना कार्यान्वियन एजेंसियों आदि के लिए प्रशिक्षण तथा क्षमता निर्माण सम्बन्धी कार्यकलापों सहित वाटर शेड ''प्लस'' कार्यकलापों पर जोर देते हुए प्रयोग मूलक तथा नए कार्य आरम्भ किए जा रहे हैं। आन्ध प्रदेश ग्रामीण विकास अकादमी को दो जिलो के वाटरशेडों की प्रक्रिया के मूल्यांकन का कार्य सोंपा गया है और गैर सरकारी संगठनों के नेटवर्क ''वासान'' (डब्ल्यू.ए.एस. एस.ए. एन.) को तीन जिलों में यह कार्य सौंपा गया है।

इस परियोजना के लिए राज्य सरकार को निधियां भूमि संसाधन विभाग के जरिए सहायता अनुदान के रूप में उपलब्ध करायी जा रही हैं परियोजना का कार्यान्वयन वाटरशेड विकास के लिए समान मार्गदर्शी सिद्धान्तों के अनुसार किया जा रहा है। अतः राज्य सरकार ने परियोजना के कार्यान्वयन हेतु अपेक्षित प्रशासनिक संरचना तैयार कर ली है। ग्रामीण विकास मंत्रालय में सचिव (ग्रामीण विकास) की अध्यक्षता में उच्चाधिकार प्राप्त एक समिति परियोजना की आवधिक तौर पर समीक्षा करती है।

इस परियोजना के अन्तर्गत स्वीकृत की गई परियोजनाओं तथा राज्य सरकार को जारी की गई निधियों का वर्षवार ब्यौरा सरणी 9 में देखा जा सकता है।

सारणी – 9

| वर्ष | परियोजनाओं की संख्या | जारी की गई राशि करोड़ रू0 में |
|---|---|---|
| 2000–01 | 50 | 1.74 |
| 2001–02 | 200 | 14.88 |
| 2002–03 | 250 | 55.21 |
| 2003–04 | – | 46.71 |
| योग | | 118.54 |

## पश्चिमी उड़ीसा ग्रामीण जीविका परियोजना–

पश्चिमी उड़ीसा ग्रामीण जीविका परियोजना (डब्ल्यू.ओ.आर.एल.पी.) डिपार्टमेंट फॉर इंटरनेशनल डिवेलपमेंट द्वारा जून 1999 में 230 करोड़ रूपये (32.75) मिलियन पांउड = 23.00 मिलियन पाउंड वित्तीय सहायता 10 वर्षो की अवधि में दी जाएगी + 9.75 मिलियन पाउंड की तकनीकी सहयोग निधि सरकार तथा गैर सरकारी संगठनों के लिए क्षमता निर्माण तथा ज्ञान वर्द्धन के लिये सहायता के रूप मे) की लागत पर स्वीकृति की गई है। यह परियोजना 18.8.2000

को आरम्भ की गई थीं तथा 31.7.2009 तक पूरी होनी है।

यह परियोजना पश्चिमी उड़ीसा के पिछड़े जिलो में वाटरशेड क्षेत्रों के विकास हेतु कार्यान्वित की जा रही है। परियोजना का लक्ष्य उड़ीसा में पिछड़े जिलों में तथा अन्य किन्हीं स्थानों पर सरकारी एजेंसियों तथा अन्य भागीदारों द्वारा सतत् ग्रामीण जीविका के लिये अपनाई गई पद्धतियों को और अधिक प्रभावी बनाना है। परियोजना का उद्देश्य चार जिलों में विशेष रूप से अत्यंत गरीब व्यक्तियों के लिये विकसित सतत् सम्पोषणीय जीविका साधनों को 2010 तक प्राकृतिक रूप में उपलबध कराना है।

परियोजना में न केवल भूमि सुधार का कार्य किया जाता है बल्कि इसमें अतिरिक्त कार्य अर्थात् देश में अत्यंत पिछड़े क्षेत्रों में दलितों के लिए सतत् आधार पर पूर्ण जीविका सुनिश्चित करने का भी कार्य किया जाता है। इस परियोजना के अन्तर्गत दो जिलों अर्थात् बोलांगीर (14 खण्ड) नौपाड़ा (6 खण्ड) को शामिल किया गया है समीक्षा के दौरान इस परियोजना में कालाहोड़ी (6) तथा बाड़बढ़ (4 खण्ड) को शामिल करने पर विचार किया जाना है और यदि आवश्यक हो तो समग्र वित्तीय प्रतिबद्धता के प्रति समायोजन की सिफारिश की योजना है।

इस परियोजना के लिए राज्य सरकार को निधियां भूमि संसाधन विभाग के जरिए सहायता अनुदान के रूप में उपलब्ध करायी जा रही है। परियोजना का कार्यान्वयन वाटरशेड विकास सम्बन्धी मार्गदर्शी सिद्धान्तों के अनुसार किया जाना है। राज्य सरकार ने परियोजना के कार्यान्वयन हेतु उपयुक्त प्रशासनिक संरचना तैयार कर ली है। परियोजना की आवधिक तौर पर समीक्षा करने हेतु सचिव, ग्रामीण विकास मंत्रालय की अध्यक्षता में उच्चाधिकार प्राप्त एक समिति गठित की गई है, परियोजना के तीन संघटक है अर्थात जीविका सम्बन्धी विकास कार्यो को बढ़ावा देना, मूल और उत्तरवर्ती भागीदारों के लिए क्षमता निर्माण तथा उपर्युक्त वातावरण को प्रोत्साहन देना।

परियोजना के अंतर्गत राज्य के 4 जिलों के 29 ब्लाकों में प्रत्येक परियोजना में लगभग 500 हैक्टेयर क्षेत्र को शामिल करते हुए 290 वाटरशेड परियोजनाऐं आरम्भ की जानी है और एक खण्ड में कार्यान्वयन हेतु 10 वाटरशेड परियोजनाए हाथ में ली गयी। परियोजना के अन्तर्गत कार्यान्वित किए जाने वाले कार्यक्रम के दो संघटक हैं अर्थात् वाटरशेड और वाटर शेड ''प्लस'' कार्यकलाप अर्थात् वाटरशेड के अलावा दूसरे कार्यकलाप और प्रत्येक परियोजना में लगभग 500 हैक्टेयर क्षेत्र शामिल हैं। परियोजनाओं के अन्तर्गत वाटरशेड सम्बन्धी कार्यकलापों को वाटरशेड विकास सम्बन्धी मार्गदशी सिद्धान्तों के अनुसार कार्यान्वित किया जाता है। परियोजना के अन्तर्गत राज्य सरकार को उपलब्ध कराई जाने वाली वित्तीय सहायता की दर वाटरशेड कार्यकलापों के लिये 6000 रूपये प्रति हैक्टेयर तथा वाटरशेड प्लस कार्यकलापों के लिये 3500 रूपये प्रति हैक्टेयर है।

इस परियोजना के अन्तर्गत स्वीकृत की गई परियोजनाओं तथा राज्य सरकार को जारी की गई निधियों का वर्षवार ब्यौरा सारणी 10 में प्रदर्शित है।

सारणी – 10

| वर्ष | परियोजनाओं की संख्या | जारी की गई निधिया करोड़ रूपयें में |
|---|---|---|
| 2000–01 | 4 | 0.26 |
| 2001–02 | 22 | 1.51 |
| 2002–03 | 48 | 3.79 |
| 2003–04 | 60 | 8.57 |
| योग | | 14.13 |

## ट्री ग्रोअर्स सहकारी परियोजनाऐं –

दी फांउडेशन फॉर इकोलॉजीकल सिक्योरिटी (एफ.ई.एस.) कैनेडीयन इन्टरनेशनल डिवेलपमेन्ट एजेंसी (सी.आई.डी.ए.) की सहायता (45.99 करोड़ रूपये) से आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात, मध्य प्रदेश और उत्तरांचल के राज्यों में ट्री ग्रोअर्स सहकारी परियोजना कार्यान्वित कर रही है, परियोजना में सहभागी तौर पर और सतत् आधार पर चारे और ईधन लकड़ी की जीवन निर्वाह सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सार्वजनिक भूमि पर वानस्पतिक आच्छादन की परिकल्पना की गई है। राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड (एन.डी.डी.बी.) को परियोजना के वित्तपोषण और निगरानी की जिम्मेवारी सौंपी गयी है और इस परियोजना के अन्तर्गत 7862 हैक्टेयर बंजरभूमि को विकसित किया जाना हैं। भारत सरकार और कनाडा सरकार के बीच समझौता ज्ञापन मार्च 1993 में लागू हुआ था, तथा यह मार्च 2006 तक मान्य है।

## अट्टापड्डी बंजरभूमि विस्तृत पर्यावरणिक संरक्षण परियोजना –

यह परियोजना जापान बैंक फॉर इन्टरनेशन कोऑपरेशन (जे.बी.आई.सी.) की सहायता से 219.31 कराड़े रूपये की कुल लागत पर केरल के पालाकाड जिले में कार्यान्वित की जा रही है। इस वर्ष 1996 में स्वीकृत किया गया था और इस परियोजना के लिए जापान की एजेंसी द्वारा लम्बी अवधि के ऋण के रूप में 176.89 करोड़ रूपये की राशि उपलब्ध करायी जानी है। इस परियोजना का लक्ष्य पालाकाड जिले के 13 वाटर शेडो में 50700 हैक्टेयर बंजरभूमि को विकसित करना है। ऋण अनुबंध के अनुसार परियोजना को मार्च 2003 तक पूरा किया जाना था। तथापि, इस विभाग द्वारा परियोजना की अवधि मार्च 2007 तक बढ़ाने की संस्तुति की गई है और आर्थिक कार्य विभाग से इस मामले को जे0बी0आई0सी0 के साथ उठाने के लिए अनुरोध किया गया है।

इस परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए एजेंसी के रूप में अट्टापड्डी हिल्स एरिया डिवेलपमेंट सोसाइटी के नाम से एक सोसाइटी वर्ष 1995 में पंजीकृत की गई थीं। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य अवक्रमित क्षेत्रों में पारिस्थितिकीय सन्तुलन को पुनः कायम करने सम्बन्धी कार्यक्रमों की आयोजना तैयार करके और इनको कार्यान्वित करके तथा गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों के लिए आर्थिक विकास योजनाओं (जिनमें अनुसूचित जनजातियों के लोगो, महिलाओं आदि के सम्बन्ध में अधिक ध्यान दिया गया हो) के द्वारा अट्टापड्डी का सततृ रूप में विकास करना है।

## हरियाणा सामुदायिक वानिकी परियोजना –

हरियाणा सामुदायिक वानिकी परियोजना का वित्त पोषण यूरोपीय समुदाय (ई.सी.) के 23.30 मिलियन यूरो (97.80 करोड़ रूपये) के कुल अंशदान के द्वारा किया गया है, तथा हरियाणा सरकार 6.80 यूरो के बराबर (28.20 करोड़ रूपये का) अंशदान कर रही है। इस परियोजना में पंचायत तथा गांव की सार्वजनिक भूमि पर ईधन, चारे, इमारती लकड़ी तथा फलों के पौधे लगाने, रेत के टीलों का स्थिरीकरण करने, विभिन्न किस्मों के पेड़ पौधे लगाकर कृषि

वानिकी आरम्भ करने, उपवन लगाने घरों के आस पास पौधे लगाने (किचन गार्डन) सार्वजनिक नर्सरियां तैयार करने तथा सिंचाई के लिए जल की आपूर्ति में सुधार करने के उद्देश्य से जल संग्रहरण बांध बनाने की परिकल्पना की गई है, परियोजना के कार्यकलापों के अन्तर्गत हरियाणा के 10 जिलों में 43 ग्रामीण सामुदायिक विकास ब्लाकों के 300 चयनित गांवो को शामिल किया गया हैं परियोजना के अन्तर्गत विकसित की जा रही सार्वजनिक भूमि का कुल क्षेत्रफल 1.25 लाख हैक्टेयर है, इसमें से 39000 हैक्टेयर भूमि कृषि योग्य है।

परियोजना के लिये भारत सरकार तथा यूरोपीय संघ के बीच एक वित्तीय अनुबन्ध पर 24 जनवरी 1997 को हस्ताक्षर किए गए थे, जो अधिकारिक रूप से 30.11.1998 से लागू हुआ था। यह परियोजना वास्तव में वर्ष 1999–2000 में आरम्भ की गई थीं, और इसे 9 वर्षो की अवधि, अर्थात् वर्ष 2007–2008 तक कार्यान्वित किया जाना है।

## मध्य प्रदेश ग्रामींण जीविका परियोजना चरण – 1 :–

मध्य प्रदेश ग्रामीण जीविका परियोजना (एम.पी.आर.एल.पी.) चरण–1 डिपार्ट मैट फॉर इन्टरनेशनल डिवेल्पमेंट द्वारा दिसम्बर 2003 में 114.87 करोड़ रूपये (16.41 मिलियन पाऊंड = 13.89 मिलियन पाउंड तीन वर्षो की अवधि में वित्तीय सहायता के रूप में + 2.52 मिलियन पाऊंड तकनीकी सहयोग निधि के लिए) की लागत पर स्वीकृत की गई है।

एम0पी0आर0एल0पी0 का उद्देश्य ऐसे प्रभावी कार्यक्रमों और नीतियों का कार्यान्वयन करना है, जिनसे राज्य के 6 जनजातीय जिलों अर्थात झाबुआ, ढिंडोरी, बड़वानी मांडला, धार और शहडोल के गरीब ग्रामीण लोगों की जीविका में सतत् रूप से वृद्धि हो। परियोजना के कार्यान्वयन के फलस्वरूप 6 जिलो में गरीब ग्रामीण लोगों की जीविका में सतत् रूप से वृद्धि होने की आशा है। समीक्षा के उपरांत अन्य 11 जनजातीय जिलों में परियोजना के विस्तार के सम्बन्ध में विचार किया जाना है।

परियोजना का कार्यान्वयन राज्य के ग्रामीण विकास और पंचायत विभाग द्वारा किया जा रहा है। परियोजना 20.2.04 को आरम्भ की गई और 30.3.06 तक पूरी की जाना है तथापि राज्य सरकार इसके कार्यान्वयन के लिये उपयुक्त प्रशासनिक संरचना तैयार करने के लिए कार्यवाही कर रहीं है। तदनुसार परियोजना का वास्तविक रूप से कार्यान्वयन शीघ्र ही शुरू होने की संभावना है।

## हरियाली –

भूमि संसाधन विभाग ने देश में वाटर शेड विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं को वित्तीय और प्रशासनिक दोनों ही रूप से अधिकार सम्पन्न बनाने के उद्देश्य से ''हरियाली'' नाम से एक नया कार्यक्रम तैयार किया, प्रधानमंत्री ने इस नए कार्यक्रम को 27. 01.2003 को प्रारम्भ किया, पहले से चल रहे सभी क्षेत्र विकास कार्यक्रमों नामतः समेकित बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (आई0डब्ल्यू0डी0पी0), सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (डी0पी0ए0पी0) तथा मरूभूमि विकास कार्यक्रम (डी0डी0पी0) को इस कार्यक्रम के अन्तर्गत पंचायती राज संस्थाओ के द्वारा कार्यान्वित किया जाता है। नयी व्यवस्था में ग्राम पंचायतें परियोजना कार्यान्वयन अभिकरणों (पी0आई0ए0) के समग्र पर्यवेक्षण तथा मार्गदर्शन के अन्तर्गत परियोजनाऐं कार्यान्वित करनी है। किसी एक ब्लॉक/तालुक के लिए स्वीकृत की गई सभी परियोजनाओं के लिये मध्य वर्ती पंचायत परियोजना कार्यान्वयन अभिकरण हो सकती है। यदि इन पंचायतों को पर्याप्त अधिकार नहीं दिए

गए हो तो जिला पंचायत या तो स्वयं परियोजना कार्यान्वयन अभिकरण के रूप में कार्य कर सकती है या किसी उपयुक्त समनुरूप विभाग जैसे कृषि वानिकी/सामाजिक वानिकी, भूमि संरक्षण विभाग आदि को अथवा राज्य सरकार के किसी अभिकरण/विश्वविद्यालय/संस्थान की परियोजना कार्यान्वयन अभिकरण के रूप में नियुक्त कर सकती है। इन विकल्पों के उपलब्ध नहीं होने पर जिला पचायत/जिला ग्रामीण अभिकरण वाटरशेड परियोजनाओं के कार्यान्वयन में अथवा सम्बन्धित क्षेत्र विकास कार्यो को करने में पर्याप्त अनुभव और विशेषज्ञता रखने वाले जिले में किसी प्रतिष्ठित गैर सरकारी संगठन को, इसकी विश्वसनीयता की पूरी तरह जांच करने के पश्चात परियोजना कार्यान्वयन अभिकरण के रूप में नियुक्त करने पर विचार कर सकता है।

परियोजना कार्यान्वयन अभिकरण (पी.आई.ए.) ग्राम पंचायत को वाटरशेड के लिये विकास योजनाएं तैयार करने में सहभागी ग्रामीण मूंल्याकन प्रक्रिया के जरिए आवश्यक तकनीकी मार्गदर्शन उपलब्ध कराता है। तथा ग्राम समुदायों को संगठित करने और उन्हें, प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करने, वाटरशेड विकास सम्बन्धी कार्य कलापों का पर्यवेक्षण करने परियोजना लेखो की जांच करने तथा उन्हें प्रमाणित करने कम लागत वाली तथा स्वदेशी तकनीकी जानकारी के आध ार पर तैयार प्रौद्योगिकियों को अपनाने हेतु उन्हें प्रोत्साहित करने का कार्य भी करेगा। इसके अलावा परियोजना के समग्र कार्यान्वयन की निगरानी और समीक्षा करने तथा परियोजना अवधि ा के दौरान सृजित परिसम्पत्तियों के परियोजना पूरी होने के पश्चात, संचालन तथा रख रखाव एवं इनका आगे और विकास के लिये संस्थागत व्यवस्था स्थापित करने का उत्तरदायित्व भी परियोजना कार्यान्वयन अभिकरण का ही होगा।

चल रहे क्षेत्र में विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत नई परियोजनाओं को 1.4.03 से हरियाली के लिये मार्गदर्शी सिद्धान्तों के अनुसार कार्यान्वित किया जा रहा है। इस तिथि से पूर्व स्वीकृत की गई परियोजनाऐं वर्ष 2001 के वाटर शेड विकास सम्बन्धी मार्गदर्शी सिद्धान्तों के अनुसार ही कार्यान्वित की जा रही है।

## नई योजनाऐं -

### प्रधानमंत्री ग्रामीण जल संवर्धन योजना (पी.एम.जी.जे.एस.वाई.)–

प्रधानमंत्री कार्यालय द्वारा केन्द्र सरकार के सम्बन्धित मंत्रालयों और विभागों, योजना आयोग और प्रतिष्ठित गैर–सरकारी संगठनों से सदस्यों को शामिल करके हुए गठित किए गए कोर–ग्रुप की सिफारिशों के आधार केन्द्र द्वारा प्रायोजित एक नई योजना तैयार की गई है, भूमि संसाधन विभाग द्वारा वर्तमान में कार्यान्वित किए जा रहे वाटरशेड विकास कार्यक्रमों में जल संरक्षण और जल संचयन का कार्य भी शामिल है। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत वाटरशेड विकास परियोजनाओं के अन्य घटकों में बागवानी, कृषि वानिकी, चारागाह विकास और सामदायिक अवक्रमित भूमि के विकास सहित भूमि संसाधन का संरक्षण, फसल उत्पादन और वृक्षारोपण का कार्य शामिल है। इन कार्यक्रमों में गरीबी उन्मूलन और रोजगार सृजन पर मुख्यतः ध्यान देते हुए अवक्रमित सामुदायिक भूमि के विकास पर जोर दिया जाता है जबकि प्रस्तावित योजना का आशय मुख्यतया गम्भीर रूप से सूखा प्रभावित क्षेत्रों, विशेष रूप से उन क्षेत्रों, जहां पर पेयजल एक प्रमुख समस्या है, में जल संचयन उपायों के द्वारा जल का संरक्षण करना है। अतः प्रस्तावित योजना में पीने के लिए जल की उपलब्धता तथा सूखे की अवधि के दौरान जीवन रक्षक सिंचाई के लिये की जल की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये केवल जल संरक्षण उपायों पर ही विचार किया जा रहा है, जिन्हें केवल सूखा प्रभावित क्षेत्रों में ही कार्यान्वित किया जाना है।

## उददेश्य –

- सूखे के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिए पता लगाए गए शुष्क और वर्षा–सिंचित क्षेत्रों को स्थान विशिष्ट/स्थल विशिष्ट जल संरक्षण उपायों और जल भण्डारण प्रौद्योगिकियों के द्वारा सूखे के प्रभाव से मुक्त बनाना।
- जल की कमी वाले गॉवों में वर्षा जल के संग्रहण के द्वारा भू जल शक्यता में सुधार करना और विशेष रूप से पीने के पानी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये जल आपूर्ति को बढ़ाना।
- भूमि की नमी उपलब्धता में सुधार लाने के लिए विशेष रूप से उन क्षेत्रों, जहां पर जल का अधिक दोहन किया गया है, में जल उपलब्धता का बेहतर प्रबन्धन करना।
- व्यापक स्तर पर दीर्घकालिक जल सुरक्षा।

## वार्षिक योजना 2004–05 के लिए प्रस्ताव–

वर्ष 2004–05 के लिये इस योजना हेतु 200 करोड़ रूपये का परिव्यय उपलब्ध कराया गया है।

## बायो ईधन के सम्बन्ध में राष्ट्रीय मिशन –

बायो–ईधन के उपयोग को बढ़ावा देने की दृष्टि से, जिससे इसके पारिस्थितिकीय रूप से अनुकूल होने के अतिरिक्त पेट्रोलियम उत्पादों के आयात पर पड़ने वाले बोझ भी कम होगा, योजना आयोग ने बायो ईधन के विकास के सम्बन्ध में एक समिति गठित की थीं, समिति की रिपोर्ट में कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं के एक मिशन पद्धति में कार्यान्वयन के लिए केन्द्रीय सरकार में विभिन्न मंत्रालयों जैसे पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस, गैर–परम्परागत ऊर्जा स्रोत, कृषि (आई0सी0ए0आर0सहित) पर्यावरण और वन, विज्ञान और प्रौद्योगिकी (सी0एस0आई0आर0सहित) कृषि और ग्रामीण उद्योग (के0वी0आई0सी0) ग्रामीण विकास मंत्रालय आदि की भूमिकाओं की परिकल्पना की गई है। रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के कार्यान्वयन के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय को केन्द्रक (नोडल) मंत्रालय बनाया गया है।

रिपोर्ट की प्रमुख सिफारिशों में जटरोफा, करकास के पौधरोपण पर विशेष फोकस के साथ बायो डीजल के सम्बन्ध में एक राष्ट्रीय मिशन शुरू करना शामिल है। प्रस्तावित राष्ट्रीय मिशन को दो चरणों में कार्यान्वित किया जाना है, अर्थात्, चरण प्रथम प्रदर्शन परियोजना के रूप में होगा तथा द्वितीय चरण में कार्यक्रम का विस्तार शामिल है, प्रदर्शन परियोजना को वर्ष 2003 में प्रारम्भ किए जाने और वर्ष 2007 तक पूरा किए जाने का प्रस्ताव था, जबकि द्वितीय चरण को वर्ष 2007 में प्रारम्भ किया जाना है और वर्ष 2012 में पूरा किया जाना है।

प्रदर्शन परियोजना में निम्नलिखित संघटक शामिल हैं :–

- वन भूमि और वनेत्तर भूमि क्षेत्रों मुख्यतः बंजर भूमि में 1200 करोड़ रूपये की कुल लागत पर आठ राज्यों में 4 लाख हेक्टेयर क्षेत्र (2.0 लाख हैक्टेयर वन भूमि और 2.0 लाख वनेत्तर भूमि में) को शामिल करते हुए जटरोफा करकास की खेती को बढ़वा देना।
- 296 करोड़ रूपये के परिव्यय पर बीज प्राप्त करने व तेल निकालने वाले केन्द्रों की स्थापना करना, तेल के प्रसंस्करण (ट्रांस–एसटेरीफिकेशन) अनुसंधान एवं विकास कार्यकलाप और प्रशासनिक व्यय करना/परिणामतः प्रथम चरण में परियोजा का कुल

परिव्यय 1496 करोड़ रूपये (लगभग 1500 करोड़ रूपये) हैं।

कृषि मंत्रालय में राष्ट्रीय तिलहन और वनस्पति तेल विकास बोर्ड (नोबोड) को बनेत्तर भूमि में जटरोफा की खेती के लिए और परियोजना के अन्य कार्यो के कार्यान्वयन के लिये नोडल एजेंसी बनाया गया है; पर्यावरण एवं वन मंत्रालय वन भूमि में जटरोफा की खेती के लिये नोडल एजेंसी है।

**वार्षिक योजना 2004–05 के लिए प्रस्ताव** – बायो–डीजल के सम्बन्ध में राष्ट्रीय मिशन को शुरू करने के लिये योजना आयोग का सिद्धानत रूप में अनुमोदन प्राप्त करने हेतु विस्तृत परियोजना रिपोर्ट तैयार करने के लिए कार्यवाही आरम्भ की गई। बाद में व्यय वित्त समिति (ई0एफ0सी0) आर्थिक मामलों के सम्बन्ध में मंत्रिमंण्डल समिति (सी0सी0ई0ए0) का अनुमोदन प्राप्त किया जाएगा। योजना अयोग ने चालू वित्त वर्ष 2004–05 के दौरान इस कार्यक्रम के लिये 10 करोड़ रूपये का आवंटन किया है।

यह योजनायें वर्तमान समय में देश में ग्राम विकास में सहायक हो रही हैं। निम्नलिखित योजनाओं के साथ कुछ और ग्राम्य विकास की योजनायें जनपद झांसी के साथ ही साथ देश में संचालित हैं। जिनका विस्तृत अध्ययन आगे किया गया है।

# जनपद झाँसी में संचालित ग्राम्य विकास योजनाऐं -

वर्तमान समय में जनपद में प्रमुख रूप से निम्नलिखित ग्राम्य विकास योजनाऐं संचालित हैं।

1. बायोगैस योजना
2. राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम
3. इन्दिरा आवास योजना
4. प्रधानमंत्री ग्रामोदय (आवास) योजना
5. ग्रामीण आवास की ऋण सह सब्सिडी योजना
6. ग्रामीण आवास और पर्यावास विकास के लिए अभिनव कार्यक्रम
7. समग्र आवास योजना
8. स्वर्ण जंयती ग्राम स्वरोजगार योजना (एस0जी0एस0वाई0)
9. सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एस0जी0आर0वाई0)
10. राजीव गाँधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन

## 1. बायोगैस योजना -

यह योजना वर्ष 1981-82 में प्रारम्भ की गयी। भारत सरकार के अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय ने वर्तमान समय में तेजी से समाप्त हो रही प्राकृतिक ऊर्जा जैसे लकड़ी, कोयला, मिट्टी का तेल आदि के विकल्प के रूप में यह खोज की है कि इनसे हटकर इन प्राकृतिक वस्तुओं के विकल्प स्वरूप ऐसी ऊर्जा शक्ति तैयार की जाए, जो इनके मुकाबले तो हो ही, साथ ही प्राचीन साधनों के विकल्प रूप में सिद्ध हो।

विकासशील देशों की आबादी का दो तिहाई से भी अधिक ग्रामीण क्षेत्रों में होने के कारण आम जीवन की गुणवत्ताा को उन्नत बनाने तथा आधारित ढाँचे व आर्थिक प्रणाली को आत्मनिर्भर वनाने का कार्य एक बड़ी चुनौती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा की उपलब्धता को भोजन, आवास, पेयजल तथा स्वच्छ पर्यावरण जैसी मूल आवश्यकताओं से अलग नहीं किया जा सकता। जीवाष्म ईधनों की कमी तथा सीमित भण्डारों एवं पर्यावरण के प्रति बढ़ती चिन्ता को दृष्टिगत रखते हुये स्थानीय वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतो के समुचित एवं सक्षम तरीके से उपभोग किये जाने की आवश्यकता है।

आजकल परिवर्तित तथा विकसित किये जा रहे तमाम पारम्परिक ऊर्जा स्रोत हमारे देश के विशाल ग्रामीण क्षेत्रों की ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति के लिये अधिकाधिक अवसर पैदा कर रहे हैं। बायोगैस, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा एवं लघु जल विद्युत उत्पादन आदि कुछ ऐसी नयी तकनीके हैं, जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने की असीमित क्षमताऐं हैं।

इसके बहुत से आर्थिक व सामाजिक लाभ हैं। उन्नत चूल्हा और बायोगैस कार्यक्रम एक ओर महिलाओं के स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभदायक है। वहीं दूसरी ओर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत जैसे लकड़ी, कोयला, गैस, मिट्टी के तेल पर निर्भरता कम कर ऊर्जा संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। बायोगैस संयत्र से प्राप्त स्लरी खाद में फसल की पैदावार हेतु सहायक पोषक तत्व जैसे नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटास के साथ साथ अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे आयरन, कॉपर, जिंक आदि भी पाये जाते हैं, जो कृषि योग्य भूमि की मृदाशक्ति व जलधारण क्षमता को बढ़ाने

में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होते हैं। स्लरी खाद मृदा के पी0एच0मान में परिवर्तित होने से रोकती हैं, जिसके कारण मृदा का सन्तुलन बना रहता है।

प्रदेश में कुल 20,21000 बायोगैस संयत्रों की स्थापना की सकल सम्भावना है। जिसके विपरीत राष्ट्रीय बायोगैस विकास परियोजना के प्रारम्भ वर्ष 1981–82 से वर्ष 1997–98 तक कुल 290608 बायोगैस संयत्रो की स्थापना की जा चुकी है। अवशेष 1730392 बायोगैस संयत्रो की स्थापना से प्रतिदिन लगभग 3460000 घनमीटर बायोगैस की प्राप्ति होगी, जिससे 13840000 लोगों का भोजन तैयार किया जा सकेगा। साथ ही साथ प्रतिवर्ष 12 मिलियन टन जैविक खाद की प्राप्ति होगी, जिससे लगभग 9 लाख नाइट्रोजन, 7.5 लाख फास्फोरस, तथा 5.5 लाख टन पोटास के समतुल्य रसायनिक खादों के क्रय पर होने वाले व्यय की बचत प्रति वर्ष होगी।[1] तथा इतनी ही मात्रा में रसायनिक खादों के बनाने में प्रयुक्त पारम्परिक ऊर्जा की भी बचत होगी। यह बचत ऊर्जा के संचयन में पर्याप्त भूमिका निभायेगी, जिस उद्देश्य से इस कल्याण कारी योजना का सूत्रपात किया गया है।

इस योजना के अन्तर्गत उन्हीं लाभार्थियों का चयन किया जाता है जिनके पास पर्याप्त पशु होते हैं और उनके पालन पोषण की क्षमता होती है। बायोगैस निर्माण में जो धन व्यय होता है, उसमें शासन से आर्थिक सहायता (अनुदान) मिलता है। इस प्रकार लाभार्थी को इसके निर्माण में कम खर्च करना पड़ता है, और वह भी कर्ज के रूप में बैक से मिल जाता है। बायोगैस संयंत्रो पर मिलने वाले अनुदान की राशि सारणी 11 में प्रदर्शित है।

सारणी – 11

बायोगैस संयंत्रो पर मिलने वाला अनुदान

| बायोगैस संयत्र की क्षमता (घनमी. में) | प्रदेश के पर्वतीय जनपदों में (रूपयें में) | अनु0 जाति/जनजाति, भूमिहीन कृषक, लघुसीमान्त कृषकों के लिये अनुमन्य अनुदान (रूपये में) | अन्य में |
|---|---|---|---|
| 1 – 6 | 3200 | 2300 | 1800 |

बायोगैस संयत्र को स्वच्छ शौचालय से जोड़ने पर 500 रू0 प्रति संयन्त्र अतिरिक्त सहायता दी जाती है। संस्था का तकनीकि व्यक्ति संयंत्र की स्थापना के लिये निःशुल्क उपलब्ध है। बिक्री के बाद संस्था बिना किसी अतिरिक्त व्यय के तकनीकि सहायता उपलबध कराती है।

बायोगैस संयत्रो के निम्न डिजायन प्रचलित है।

जैसे – के.बी.आई.सी.संयंत्र जनता माडल, दीनबन्धु माडल आदि।

बायोगैस लगाने की लागत संयंत्र के मॉडल और आकर पर निर्भर करती है। संयत्रो की औसत लागत निम्नवत् है।

सारणी – 12

| संयन्त्र की क्षमता | के0बी0आई0सी0 मॉडल | दीनबन्धु मॉडल | प्रगति मॉडल |
|---|---|---|---|
| 1 घनमीटर | 8500 रू0 | 6000 रू0 | 6800 रू0 |
| 2 घनमीटर | 11700 रू0 | 8000 रू0 | 9000 रू0 |
| 3 घनमीटर | 15700 रू0 | 10000 रू0 | 11000 रू0 |
| 4 घनमीटर | 18100 रू0 | 11500 रू0 | 13000 रू0 |

1. राष्ट्रीय बायोगैस कार्यक्रम की सामान्य जानकारी और उपलब्धिया – ग्राम्य विकास विभाग उत्तर प्रदेश, लखनऊ ।

जनपद झाँसी में वर्ष 2002–03 तक 70 बायोगैस संयंत्रो की स्थापना हो चुकी थीं। वर्ष 2002–03 तक जनपद में बायागैस कार्यक्रम की प्रगति का विवरण सारणी–13 में देखा जा सकता है।

सारणी–13

बायोगैस संयंत्रो की प्रगति का विवरण (वर्ष 2002–03 तक)

| स्थापित संयन्त्रो की कुल संख्या | 2 घनमीटर क्षमता वाले संयंत्रो की संख्या | 3 घनमीटर क्षमता वाले संयंत्रो की संख्या | प्रति संयत्र 2300 रूपये प्राप्त लाभार्थियो की संख्या | प्रति संयत्र 1800 रू0 पाने वाले व्यक्तियों की संख्या | प्रति संयत्र 2800 रू0 पाने वाले व्यक्ति |
|---|---|---|---|---|---|
| 70 | 34 | 36 | 34 | 29 | 7 |

वित्तीय वर्ष 2004–05 में जनपद में 80 संयत्रो की स्थापना का लक्ष्य रखा गया था। जिसमें दिसम्बर 2004 तक 31 संयन्त्र स्थापित हो चुके थे और 26 निर्माणाधीन थे।

## राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम –

यह योजना 1983–84 में प्रारम्भ की गयीं इस योजना के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

1. वन सम्पदा एवं जलाऊ लकड़ी की बचत
2. घुंये से बचाव
3. वायु प्रदुषण की रोकथाम
4. महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य में सुधार
5. खाना पकाने के समय में बचत

राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम प्रदेश में ग्राम्य विकास विभाग के माध्यम से विकास खण्डों द्वारा संचालित किया जाता है।

कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के चूल्हों का विवरण किया जाता है। जिसका विवरण निम्नवत् है –

1. चिमनी सहित स्थायीं चूल्हा
2. उठाऊ चूल्हा
3. हाई एल्टीट्यूड चूल्हा

स्थायी चूल्हे पर सभी जाति के लिये रू0 80 एवं उठाऊ चूल्हे पर अनु0 जाति/जनजाति के लिए 50 रू0, हाई एल्टीटयूड चूल्हे पर कुल व्यय का 50 प्रतिशत अथवा 250 रू0 अधिकतम अनुदान अनुमन्य है।

राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम का कार्यान्वयन राज्य सरकारों के नोडल विभागों, संघ शासित प्रदेशों के गैर परम्परागत ऊर्जा कार्यक्रम सम्बन्धी नोडल एजेन्सियो, राज्य कृषि उद्योग नियमों, खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग, राष्ट्रीय डेरी विकास बोड तथा अखिल भारतीय सम्मेलनों द्वारा किया जाता हैं। स्वरोजगार कर्मचारियों, कुम्हारों, उद्यमियों, तकनींशियनों तथा क्षेत्रीय

1. राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम पत्रक – उत्तर प्रदेश सरकार।
2. वार्षिक रिपोर्ट 2003–04 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय ।

कार्यकर्ताओं के लिए तकनीकि सहायता यूनिटों और कार्यान्वयन ऐजेन्सियों के माध्यम से प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। समुचित एवं प्रभावशील कार्यान्वयन के लिए विभिन्न स्तरों पर एजेन्सियों/अधिकारियों के लिए प्रबन्ध/अनुभव के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम भी चलाए जा रहे हैं।[1]

जनपद झांसी में वर्ष 2002–03 में स्थायी चूल्हे निर्माण का लक्ष्य 1230 चूल्हे तथा 408 उठाऊ चूल्हे का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, जिसे शत प्रतिशत प्राप्त किया गया। किन्तु बाद के वर्षो में विभागीय का बजट अप्राप्त होने के कारण कार्यक्रम की प्रगति में बाधा आयी है।

## इन्दिरा आवास योजना –

भारत सरकार द्वारा वर्ष 1985–86 से इन्दिरा आवास योजना प्रारम्भ की गई, जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा मुक्त बंधुआ मजदूरों को सहायता प्रदान करना है, योजना के अन्तर्गत, इन्दिरा आवास योजना के आवंटन में से 40 प्रतिशत उन गैर अनुसूचित जाति/अनु0 जनजाति के ग्रामीण गरीबो को प्रदान किया जा सकता है जो गरीबी रेखा से नीचे रहते हैं, इस योजना का लाभ युद्ध में मारे गये सशस्त्र और अर्द्धसैनिक बलों के जवानों के परिवार को भी प्रदान किया जाता है। 3 प्रतिशत निधियां, अनुसूचित जाति/अनुसूचिज जनजाति और अन्य बी0पी0एल0 परिवारों में रहने वाले शारीरिक तथा मानसिक रूप से पीड़ित व्यक्तियों के लिए आरक्षित किए जाते हैं।

31 मार्च 2004 तक क्षेत्रों के लिये 20000/रू0 और दुर्गभ और पहाड़ी क्षेत्रों के लिये 22500/– रू0 की सहायता प्रति इकाई दी जाती थीं। यह राशि 1 अप्रैल 2004 से बढ़ा दी गई है। मैदानी क्षेत्रों के लिये 25000/रू0 प्रति इकाई और दुर्गम और पहाड़ी क्षेत्रों के लिये 27500/रू0 प्रति ईकाई कर दी गई है। इसी तरह कच्चे मकानों को अर्द्ध पक्के मकानों में बदलने के लिये अधिकतम सीमा 10000/–रू0 से बढ़ाकर 12500/–रू0 कर दी गई है।[2] योजना आयोग द्वारा मंजूर गरीबी के अनुपात और 1991 की जनगणना के आधार पर ग्रामीण आवास की कमी के आधार पर, इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत राज्य/संघ राज्य क्षेत्रों को निधियों का आवंटन किया जाता है। दोनों मापदण्डों पर समान रूप से बल दिया जाता है।

इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत ग्राम सभा को लाभार्थियों का चयन करने का अधिकार है। लाभार्थी परिवार की महिला सदस्य के नाम भी आवंटित किया जा सकता है। वैकल्पिक रूप से वह पति और पत्नी, दोनो के नाम पर भी आवंटित किया जा सकता है। सेनिटरी लैटरीन और धुंआ रहित चूल्हा आई.ए.वाई. आवास का एक अभिन्न अंग है आवास का निर्माण करना लाभार्थी की जिम्मेदारी है। इन्दिरा आवास योजना में आवास का निर्माण किसी भी बाहरी एजेंसी जैसे सरकारी विभागों, गैर सरकारी संगठनों ठेकेदारों आदि द्वारा नहीं किया जा सकता है।

इन्दिरा आवास योजना केन्द्र और राज्यों के बीच 75:25 अनुपात के आधार पर वित्तपोषित की जा रही है।[1] इस योजना के दो घटक है, पहले घटक के अन्तर्गत बेघरों के लिये नये मकान बनाने हेतु बीस हजार रूपये प्रति मकान आवंटित कर योजना की 80 प्रतिशत धनराशि इसी पर खर्च की जा रही है, द्वितीय धटक के अन्तर्गत शेष 20 प्रतिशत धनराशि कच्चे मकानों के स्तरोन्नयन पर व्यय की जा रही है, जिसके लिये प्रति मकान दस हजार रूपये की सहायता दी जा रही है, इस योजना में वित्तीय वर्ष 2002–03 के लिये रू0 294.67 करोड़ का परिव्यय निर्धारित था तथा 176800 आवास निर्माण का लक्ष्य था। मार्च 2003 तक कुल उपलब्ध धनराशि रूपये 335.76 करोड़ के सापेक्ष रू0 312.25 करोड़ की धनराशि व्यय

---

1. आर्थिक समीक्षा 2003–04 भारत सरकार वित्त मंत्रालय 206 ।

करके 177190 आवासों का निर्माण किया गया।[1] वर्ष 2003–04 के दौरान इन्दिरा आवास योजना एवं उधार सह सहायता योजना के अन्तर्गत 1485554 मकानों के निर्माण व मरम्मत के लिए 1780.50 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है।[2]

## प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (ग्रामीण आवास) –

प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (पी.एम.जी.वाई : जी.ए.) 2000–01 से प्रारम्भ की गई थीं, योजना आयोग द्वारा पीएमजीवाई के कार्यान्वयन की समीक्षा की गई है, इस समीक्षा की अनुवर्ती कार्यवाही के रूप में तथा राज्यों से प्राप्त जानकारी के अनुसार योजना आयोग ने 2002–03 से एक बार फिर कार्यक्रम को प्रत्यक्ष रूप से संचालित करने का निर्णय लिया है।

योजना के अन्तर्गत मकानों के लिए लक्ष्य समूह में ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले अनुसूचित जाति/अनुसूचिज जनजाति तथा मुक्त बंधुआ मजदूर वर्ग के लोग और गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के लोग हैं। गैर अनु.जाति/अनुसूचिज जनजाति के गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों के लिए आवासों के निर्माण हेतु वित्त वर्ष के लिये योजना के अन्तर्गत कुल आवंटन के 40 प्रतिशत से ज्यादा का उपयोग नहीं किया जा सकता, जबकि गरीबी रेखा के नीचे विकंलाग लोगों के लिये निधियों का 3 प्रतिशत निर्धारित किया गया है।[3]

योजना के अन्तर्गत मकान सामान्यतः गांव की मुख्य बस्ती में निजी भूखण्डों पर बनाये जाते हैं। इन मकानों को बस्ती में समूहों में भी बनाया जा सकता है। जिससे कि आन्तरिक सड़कों, नालियों, पेयजल की आपूर्ति जैसी अन्य सामान्य सुविधाओं के लिये विकासात्मक ढांचे की सुविधा प्रदान की जाती है। इस बात पर भी ध्यान दिया जाता है कि योजना के अन्तर्गत मकान गांव के नजदीक हो न कि काफी दूर, जिससे सुरक्षा एवं संरक्षा कार्यस्थल से नजदीकि तथा सामाजिक सम्पर्क सुनिश्तिच किया जाता है।

सभी मकानें में धुआंरहित, ईधन बचाने वाले उपयोगी चूल्हे तथा स्वच्छ शैचालयों का निर्माण पी0एम0जी0वाई0 का अभिन्न अंग होगा। साथ ही आवास के आस पास हरे वृक्ष लगाने का लक्ष्य भी रखा गया है। योजना के तहत निर्माण सहायता के लिये अधिकतम सीमा मैदानी क्षेत्रों के लिये 20000 रूपये प्रति मकान तथा पहाड़ी/दुर्गम क्षेत्रों के लिए 22000 रूपये प्रति मकान है, न रहने लायक कच्चे मकान को पक्के/अर्द्ध पक्के मकानों में बदलने के लिये अधिकतम सहायता राशि 10000 रूपये हैं।

योजना के तहत प्रस्ताव राज्य सरकारों द्वारा केन्द्र सरकार को भेजे जाते हैं। गरीबों के लिये आवासों के प्रस्ताव के अतिरिक्त आंतरिक सड़को, जल निकासी, पेयजल, वृक्षारोपण, बसावटो में सुधार लाने तथा मकानों को चक्रवात एवं भूकम्प रोधी बनाने के लिये भी प्रस्ताव भेजे जाते हैं। इन मदों पर खर्च की अधिकतम सीमा प्रस्ताव लागत के 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होती है। प्रस्तावित निधियो के 20 प्रतिशत तक का उपयोग कच्चे न रहने लायक मकानों को पक्के/अर्द्ध पक्के मकानों में परिवर्तित करने के लिये किया जाता है।

राज्य प्राधिकारियों से प्राप्त प्रस्तावों की एक समिति द्वारा जांच/स्वीकृति दी जाती है, जिसके सदस्य निम्नलिखित होते हैं –

1. सचिव (ग्रामीण विकास)..............................................................अध्यक्ष।
2. अतिरिक्त सचिव तथा वित्त सलाहकार (ग्रामीण विकास)...........................सदस्य।

---

1. उत्तर प्रदेश 2004 सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ पृ0 264।
2. भारत 2004 प्रकाशन विभाग – सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार पृ0 624।
3. ग्रामीण आवास योजनायें – राष्ट्रीय ग्रामीण आवास और पर्यावास मिशन – ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार – 2000 पृष्ठ – 21

3. सलाहकार (ग्रामीण विकास) योजना आयोग..........................................सदस्य।
4. संयुक्त सचिव (ग्रामीण विकस)........................................................सदस्य।
5. पी0एम0जी0वाई0 (जी0ए0) का प्रभारी निदेशक......................................संयोजक।

जनपद झाँसी में इन्दिरा आवास योजना और प्रधानमंत्री ग्रामोदय (आवास) योजना की प्रगति सारणी 14 में देखी जा सकती है। सारणी – 14

ग्रामीण आवासीय योजनाए जनपद झाँसी [1]

| योजनाएं वर्ष | नव निर्माण लक्ष्य | | | अपग्रेडेशन लक्ष्य | | | नव निर्माण पूर्ति | | | अपग्रेडेशन पूर्ति | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | अनु.जा. | सामान्य | योग | अनु.जा. | सामान्य | योग | अनु.जा. | सामान्य | योग | अनु.जा. | सामान्य | योग |
| 2001 – 2002 | | | | | | | | | | | | |
| इन्दिरा आवास योजना | 462 | 205 | 667 | 215 | 134 | 349 | 440 | 205 | 645 | 210 | 130 | 340 |
| प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना | 157 | 63 | 220 | 63 | 32 | 95 | 157 | 60 | 217 | 60 | 30 | 90 |
| 2002–2003 | | | | | | | | | | | | |
| इन्दिरा आवास योजना | 304 | 251 | 555 | 158 | 216 | 374 | 300 | 250 | 550 | 158 | 210 | 368 |
| प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना | 76 | 40 | 116 | 46 | 21 | 67 | 76 | 38 | 114 | 46 | 20 | 66 |
| 2003–2004 | | | | | | | | | | | | |
| इन्दिरा आवास योजना | 390 | 320 | 710 | 208 | 158 | 366 | 380 | 314 | 694 | 205 | 155 | 360 |
| प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना | 40 | 30 | 70 | 15 | 16 | 31 | 40 | 28 | 68 | 15 | 12 | 27 |
| 2004–2005 | | | | | | | | | | | | |
| इन्दिरा आवास योजना | 175 | 80 | 255 | 324 | 430 | 754 | 170 | 78 | 248 | 320 | 412 | 732 |
| प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना | 270 | – | 270 | 24 | 30 | 54 | 260 | – | 260 | 24 | 22 | 46 |

इन्दिरा आवास योजना और प्रधानमंत्री ग्रामोदय (आवास) योजना के अतिरिक्त जनपद में निर्बल वर्ग को आवास सुविधाऐं देने के लिए कुछ और भी योजनाओं को संचालित किया जा रहा है। इसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

## निर्बल आवास योजना

## ग्रामीण आवास की ऋण सह सब्सिडी योजना :–

ग्रामीण क्षेत्रों में बड़ी संख्या में ऐसे परिवार है (गरीबी रेखा से नीचे या इसके ऊपर) जिन्हें इन्दिरा आवास योजना के दायरे में नहीं लाया जा सकता है, क्योंकि या तो वे दायरे में आते ही नहीं या फिर उपलब्ध बजट की सीमाऐं आड़े आतीं हैं, दूसरी तरफ ये ग्रामीण परिवार सीमित अदायगी क्षमता के कारण आवास वित्त संस्थाओं की ऋण आधारित योजनाओं का पूरा फायदा

1. जनपद झाँसी के विकासखण्ड कार्यालयों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर।

नहीं उठा पाते हैं इस बड़े बहुसंख्यक वर्ग को एक ऐसी योजना की आवश्यकता थी जो आंशिक रूप से कर्ज और आंशिक रूप से सब्सिडी का मिश्रण हो। आंशिक ऋण आंशिक सब्सिडी वाली योजना की शुरूआत, सरकार की भूमिका हो ''प्रदाता'' की बजाय ''सुविधादाता'' करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था, ग्रामीण आवास सम्बन्धी ऋण सह सब्सिडी योजना 1 अप्रैल 1999 में प्रारम्भ की गई थी।[1]

ऋण सह सब्सिडी योजना के अन्तर्गत लक्षित समूह में ऐसे ग्रामीण परिवार आते हैं जिनकी वार्षिक आमदनी केवल रू0 32000 तक है। लेकिन गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले ग्रामीण परिवारों को वरीयता दी जाती है। इस योजना में प्रत्येक राज्य के लिये सब्सिडी के रूप में आवंटित राशि का कम से कम 60 प्रतिशत अनुसूचित जातियो, अनुसूचिज जनजातियों और मुक्त बंधुआ मजदूरों के मकानों के निर्माण के लिये वित्तपोषण पर खर्च किया जाता है। इस योजना में राज्य स्वतंत्र रूप से निर्णय कर सकते हैं कि क्या इस योजना को पूरे राज्य में लागू करना जरूरी है या कुछ जिला/ब्लाकों में/ऋण सह सब्सिडी योजना के लिये जाने वाले लक्षित क्षेत्रों का पूरी तरह ग्रामीण क्षेत्र होना आवश्यक है और वे महानगरों और बड़े शहरों से कम से कम 20 किमी0 दूर तथा छोटे व मझौले नगरों से 5 किमी0 दूर होना चाहिए।

इस योजना के सब्सिडी हिस्से को केन्द्र और राज्यों के बीच 75:25 अनुपात में बांटा जाता हैं। राज्यों को योजना के अन्तर्गत आवंटित की जाने वाली राशि का आधार योजना आयोग द्वारा निर्धारित निर्धनता अनुपात और जनसंख्या गणना द्वारा तय मकानों की कमी दोनो को माना जाता है। इन दोनो तत्वों का अनुपात 50:50 होता है। राज्य में धन के आवंटन के निर्णय सम्बद्ध राज्य सरकारें करती है। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा राज्य के लक्ष्य की सूचना दिए जाने के बाद विभिन्न जिलों के लक्ष्यों का निर्धारण पूर्णतया राज्यों का अधिकार होता है।

## निर्माण सहायता सब्सिडी/ऋण की अधिकतम सीमा–

इस योजना के तहत दी जाने वाली सब्सिडी की अधिकतम सीमा रू0 10000 प्रति परिवार होती है। योजना के अन्तर्गत प्रति परिवार अधिकतम रू0 40000 का ऋण दिया जा सकता है। राज्य सरकार को ऋणदाता और वितरण एजेन्सी के चयन की स्वतंत्रता होती है। यह एजेन्सी अधिसूचित वाणिज्यिक वैंक, आवास वित्त संस्थान या सीधे राज्य सरकार हो सकती है।

## ग्रामीण आवास और पर्यावास विकास के लिये अभिनव कार्यक्रम :–

1999–2000 के दौरान ग्रामीण आवास और पर्यावास विकास के लिए अभिनव चरण नामक ग्रामीण आवास योजना शुरू की गई, जिसका उद्‌देश्य कृषि जलवायु विविधता और प्राकृतिक विपदा की संभाव्यता के अनुरूप ग्रामीण लोगो के समुचित आवास के लिये किफायती, पर्यावरण के अनुकूल प्रौद्योगिकियों सामग्री, डिजाईनों आदि को प्रोत्साहन देना तथा उनका प्रचार प्रसार करना है। योजना परियोजना आधार पर कार्यान्वित की जा रही है। योजना के अन्तर्गत सहायता के लिये आवेदन करने वालों में मान्यता प्राप्त शैक्षणिक/तकनीकी संस्थान, निगमित निकाय, स्वायत्त सोसाइटियों, राज्य सरकारें, तथा ग्रामीण आवास के क्षेत्र में अच्छे रिकार्ड वाले गैर सरकारी संगठन शामिल हैं। गैर सरकारी संगठन/स्वायत्त सोसाइटी के मामले में अधिकतम

---

1. वार्षिक रिपोर्ट – 2002–03 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय – पृ0 25 ।

अनुमेय सहायता 20 लाख रूपये तथा सरकारी एजेंसियो के लिये 50 लाख रूपये है।

## समग्र आवास योजना :-

ग्रामीण विकास मंत्रालय काफी समय से ग्रामीण आवास पेयजल, स्वच्छता, जल संभरण विकास और ग्रामीण सड़कों आदि के पृथक कार्यक्रमों को क्रियान्वित करता आ रहा है। धीरे धीरे यह अनुभव होता गया कि वर्तमान स्वरूप में स्वतंत्र योजनाऐं ग्रामीण क्षेत्रों में गतिशीलता लाने और वांछित प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम नहीं हो पा रहीं है इस कमी को दूर करने के लिए वित्त मंत्री ने वर्ष 1999 के बजट भाषण में आवास, स्वच्छता और पेयजल की समन्वित व्यवस्था सुनिश्चित करने पर बल दिया तथा एक व्यापक योजना समग्र आवास योजना प्रारम्भ की। समग्र आवास योजना के पीछे धारणा मौजूदा ग्रामीण आवास, स्वच्छता और जलापूर्ति योजनाओं को एक रूप में प्रस्तुत करना, जिसमें प्रौद्योगिकी हस्तारण, मानव संसाधन, विकास और लोगो की भागीदारी से पर्यारण विकास पर विशेष रूप से बल दिया गया है।[1]

समग्र आवास योजना एक व्यापक आवास योजना है, जिसे 1999-2000 में आवास, स्वच्छता तथा पेयजल के समेकित प्रावधान को सुनिश्चित करने के परिप्रेक्ष्य मे शुरू किया गया है। इसके कार्यान्वयन के प्रथम चरण के दौरान समग्र आवास योजना को 24 राज्यों के 25 जिलो के एक खण्ड और एक संघ राज्य क्षेत्रों में, जिसकी पहचान त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम के अन्तर्गत भागीदारी दृष्टिकोण कार्यान्वित करने के लिये की गई है। प्रारम्भ करने का निर्णय किया गया। आवास पेयजल और स्वच्छता सम्बन्धी मौजूदा योजनाओं में सामान्यवित्त पोषण पद्धति का अनुपालन किया जाता है। तथापि समग्र पर्यावरण विकास तथा लोगो से मिलने वाले 10 प्रतिशत सूचना शिक्षा एवं संचार के साथ कार्य करने के लिये सहित प्रत्येक ब्लॉक को 25 लाख रूपये की एक विशेष केन्द्रीय सहायता प्रदान की जाती है।

## राजीव गाँधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन :-

यह योजना वर्ष 1986 में ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गयी थी। जनपद में वित्तीय वर्ष 2004-05 में दिसम्बर 2004 तक योजना के अन्तर्गत स्थापित हैण्डपम्पों की प्रगति विकासखण्ड वार सारणी 15 में दी गयी है।

सारणी - 15

स्वच्छ पेयजल कार्यक्रम की प्रगति (दिसम्बर 2004 तक)

| विकासखण्ड का नाम | कुल स्थापित हैण्डपम्पों की संख्या | खराब हैण्डपम्पों की संख्या | चालू हैण्डपम्पों की संख्या | मरम्मत कराये गये हैण्डपम्पों की संख्या |
|---|---|---|---|---|
| बड़गाँव | 1234 | 184 | 1050 | 205 |
| बवीना | 1322 | 320 | 1002 | 216 |
| चिरगांव | 1431 | 303 | 1128 | 294 |
| मोंठ | 1340 | 263 | 1077 | 240 |
| मऊरानीपुर | 1370 | 381 | 989 | 312 |
| बंगरा | 1228 | 262 | 966 | 304 |
| गुरसरांय | 1165 | 55 | 1110 | 198 |
| बामौर | 1240 | 217 | 1023 | 240 |
| योग | 10330 | 1985 | 8345 | 2009 |

1. ग्रामीण आवास योजनाऐं – राष्ट्रीय ग्रामीण आवास और पर्यावास मिशन ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार 2000 पृ0 43।

## सामुदायिक जलोत्थान सिंचाई योजनाऐं –

यह योजना छोटे और सीमान्त किसानों के लिये वर्ष 1981 से चलाई गयीं। यह योजना कृषको की सोसाइटी बनाकर चलाई जाती है। योजना के अन्तर्गत लधु सिंचाई कार्यक्रमों की प्रगति सारणी 16 में दी गयी है।

सारणी – 16

जनपद में लधु सिंचाई कार्यक्रमों की प्रगति

| कार्यक्रम का नाम | वर्ष 2002 – 03 | वर्ष 2003 – 04 | वर्ष 2004 – 05 |
|---|---|---|---|
| सिंचाई क्षमता (हे.में) | 1938 | 1665 | 1310 |
| सिंचाई कूप | 76 | 91 | 139 |
| भूस्तरीय पम्पसेट | 363 | 273 | 159 |
| बोरिंग लगे पम्पसेट | 161 | 48 | 45 |
| उथले/निजी नलकूप | 94 | 37 | 31 |
| गहरे नलकूप | 6 | 22 | 9 |
| चैक डैम | – | 6 | 7 |

जनपद में कुल 25525 हैक्टेयर भूमि सिंचित है। वर्ष 2002–03 से लघु सिंचाई योजनाओं की प्रगति बताती है कि दिसम्बर 2004 तक जनपद में 4913 हैक्टेयर सिंचित क्षेत्रफल में वृद्धि हुयी जो लघु सिंचाई कार्यक्रमो की ही सफलता है। इसके अतिरिक्त इसी कार्यक्रम के अन्तर्गत 22 चैक डैम निर्माण हेतु प्रस्तावित है। जिनके पूरा होने पर निकट भविष्य में सिंचित क्षेत्रफल में और भी वृद्धि होगी।

ऊपर उल्लेखनीय समस्त योजनाए ग्राम विकास मंत्रालय द्वारा चलाई जा रही है। इन योजनाओं के कुछ अन्य विभाग जैसे ग्राम पंचायत विभाग पी. डब्ल्यू. डी. आदि द्वारा भी ग्राम विकास कार्यो में योगदान दिया जा रहा है। इस समय जनपद में ग्राम पंचायत विभाग द्वारा केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम (पूर्ण स्वच्छता अभियान) चलाया जा रहा है।

## केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम (पूर्ण स्वच्छता अभियान) –

1986 में केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम (सी.आर.एस.सी.) प्रारम्भ किया गया जिसका उद्देश्य था ग्रामीण जनता के स्वच्छता सम्बन्धी स्तर को सुधारना तथा महिलाओं को निजता और आदर प्रदान करना।

1996–97 में भारतीय जन संचार संस्थान ने ग्रामीण जलापूर्ति और स्वच्छता के क्षेत्र में जानकारी सोच तथा आचरण के मामले में एक व्यापक आधारभूत सर्वेक्षण किया गया जिससे पता चला कि जिन 55 प्रतिशत लोगो ने स्वयं के शौचालय बना रखे है, उन्होंने स्वप्रेरित ढंग से ऐसा किया। केवल 2 प्रतिशत लोगो ने कहा कि राजसहायता की बजह से ने इस ओर प्रवृत्त हुए, जबकि 54 प्रतिशत ने कहा कि सुविधा ओर निजता के कारण वे स्वच्छ शौचालयों के निर्माण के लिए प्रेरित हुए, अध्ययन से यह भी पता चला कि 51 प्रतिशत लाभार्थी स्वच्छ शौचालय बनवाने

के लिये 1000 रू0 तक की धनराशि खर्च करने को तैयार थे।

उक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम में सुधार किया गया। इस प्रकार यह कार्यक्रम एक ''मांग आधारित तरीके'' से संचालित होने की तरफ मुड़ा। इस कार्यक्रम जिसका नाम ''पूर्ण स्वच्छता अभियान'' (टी.एस.सी.) रखा गया है में संशोधित रूप में सूचना, शिक्षा, और संचार (आई.ई.सी.) मानव संसाधन विकास, स्वच्छता सुविधाओं के लिये मांग बढ़ाने और जन जागरूकता के लिए क्षमता विकास गतिविधियां करने पर अधिक बल दिया गया है इससे लोग वैकल्पिक परेषण प्रणालियों के माध्यम से उपयुक्त विकल्प का चुनाव बेहतर ढंग से कर सकेंगे और लाभार्थियों की मांग पूरा करने में उनकी स्वयं की भी भागीदारी रहती हैं इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन में समुदाय नीत और जन केन्द्रित गतिविधियों पर अधिक ध्यान दिया जाता हैं बच्चों में नये तौर तरीके सीखने की प्रवृत्ति खासकर अधिक पाई जाती है। अतः इस कार्यक्रम की यह सोच है कि घरों और विद्यालय में स्वच्छता के तौर तरीके सिखाने में विशेषकर बच्चों को प्रतिनिधि बनाया जाए। इस योजना में देश के ग्रामीण इलाकों के सभी स्कूलों में बालकों और बालिकाओं के लिए अलग अलग मूत्रालय/शौचालय बनाए जाते हैं।

उद्देश्य – पूर्ण स्वच्छता अभियान के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं।

- ग्रामीण क्षेत्रों में सामान्य जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार लाना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता को और व्यापक बनाने के लिए त्वरित कार्य।
- जन जागरूकता और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से स्वच्छतागत सुविधाओं के लिए और मांग पैदा करना।
- ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में स्वच्छता सुविधाओं उपलब्ध कराना और विद्यार्थियों के बीच साफ सफाई की आदत डालना।
- स्वच्छता के क्षेत्र में लागतबद्ध और उपयुक्त प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल को बढ़ावा।
- संदूषित जल और स्वच्छता हीनता जनित रोगों को कम करने का प्रयास करना।

कार्यालय में मुख्य कार्यनीति है कार्यक्रम को ''समुदाय नीति और जनकेन्द्रित'' बनाना। एक ''मांग आधारित तरीका'' अपनाया जाता है। जिसमें लोगों में इस बात की जागरूकता लाने और उनमें स्वच्छ संसाधनो के प्रति मांग पैदा करने पर अधिक जोर दिया जाता है कि वे घरो, विद्यालयों में साफ सफाई रखें और अपने पर्यावरण को स्वच्छ बनाएं। सामुदायिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये वैकल्पिक परेषण प्रणालियां अपनायी जाती है। व्यक्तिगत गृह शौचालय इकाइयों के लिये राज सहायता घटा दी गई है। ग्रामीण जनता में स्वच्छता के प्रति स्वीकार भाव जगें, इसके लिये ग्राम के विद्यालय की स्वच्छता व केवल एक प्रवेशद्वार की भांति है बल्कि इस कार्यक्रम का प्रमुख घटक भी है। प्रयोक्ता की इच्छा के अनुसार स्थानीय स्तर पर प्रौद्योगिकीय विकल्प मुहैया कराना और पंचायती राज संस्थानों, सहकारी संस्थानों, महिला समूहों, स्वयं सहायता समूहों गैर सरकारी संगठनों इत्यादि को साथ लेकर स्थानीय तरीके के गहन सूचना शिक्षा संचार अभियान चलाना भी इस कार्यनीति का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

राष्ट्रीय योजना संस्वीकरण समिति :– राष्ट्रीय योजना संस्वीकरण समिति (एन. एस.एस.सी.) का गठन चयनित जिलों के लिये राज्य/संघ राज्य क्षेत्र सरकारो की ओर से भेजे गए परियोजना – प्रस्तावों के संस्वीकरण के लिय किया गया था सचिव पेयजल आपूर्ति विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय इस समिति का अध्यक्ष होता है। इसमें 6 सदस्य होते हैं। भारत सरकार

के अधिकारी दो सदस्यों के रूप में होते हैं अर्थात अतिरिक्त सचिव तथा वित्तीय सलाहकार और संयुक्त सदस्यों के रूप में होते हैं अर्थात अतरिक्त सचिव तथा वित्तीय सलाहकार और संयुक्त सचिव (प्राद्योगिकी मिशन) ग्रामीण स्वच्छता के क्षेत्र के चार विशेषज्ञ इसके गैर सरकारी सदस्य होते हैं।

स्वच्छ शौचालयों के लिये जिलो, ब्लाकों, ग्रामों तथा मांग का चयन करते समय यह ध्यान रखने के लिये कमजोर वर्गो और वंचित वर्गो को पर्याप्त रूप से सम्मिलित रखा जाए, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों को वरीयता दी जानी चाहिए। गृह शौचालयों के निर्माण के लिये कुल निधि में से कम से कम 25 प्रतिशत धनराशि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्ग के व्यक्तियों के लिये वैयक्तिक शौचालय बनाने के लिये दी जाती है। परियोजना के अन्तर्गत बनाए जा रहे कुल शौचालयों की संख्या का 3 प्रतिशत निःशक्त व्यक्तियों के लिए वैयक्तिक शौचालयों के निर्माण के लिए आरक्षित रखा जाए। इस बात को भी ध्यान में रखा जाता है कि विद्यालयों और अन्य संस्थानों में शौचलयों का निर्माण करते समय उन्हें इस तरीके से बनाया जाए कि निःशक्त छात्र छात्राऐं और विकलांग व्यक्ति भी इसका प्रयोग कर सके।

## कार्यान्वयन की एजेंसिया –

राज्य स्तर पर क्षेत्र सुधार परियोजनाओं के लिए गठित राज्य जल एवं स्वच्छता मिशन टी0एस0टी0 परियोजनाओं की भी निगरानी करती है।

कार्यक्रम के लिये जिला स्तर पर जिला पंचायत कार्यान्वयनकारी एजेंसी होती है। जिन राज्यों में जिला पंचायत नहीं है, वहाँ जिला जल एवं स्वच्छता मिशन कार्यक्रम का कार्यान्वयन करते हैं, इस कार्यक्रम के लिये सार्वजनिक क्षेत्र के किसी भी बैंक, प्राथमिकता स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में अलग से एक बैंक खाता खोला जाए।

**पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका –** 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के अनुसार स्वच्छता को 11 वीं अनुसूची में रखा गया है, इसके अनुतः पूर्ण स्वच्छता अभियान में ग्राम पंचायत की एक प्रमुख भूमिका है। पंचायत शौचालयों के निर्माण के लिए सामाजिक कार्यबल जुटाती है, ओर अपशिष्ट का सुरक्षित ढंग से निपटान करके पर्यावरण को स्वच्छ भी बनाए रखती है। टी0एस0सी0 के अन्तर्गत निर्मित महिला कॉम्पलेक्सों की देखरेख पंचायतों/स्वैच्छिक संगठनों/दातव्य न्यासों इत्यादि द्वारा की जाती है। विद्यालय की स्वच्छता के लिए पंचायतें अपने संसाधनों के निर्धारित सीमा से अधिक भी व्यय कर सकती है। वे टी0एस0सी0 के अन्तर्गत आने वाली परिसंपत्तियों तथा महिला काम्पलेक्स, पर्यावरणीय घटकों, निकास व्यवस्था इत्यादि के अभिभावक की भूमिका भी निभाती है। पंचायतों को निर्माण केन्द्र तथा ग्रामीण स्वच्छता मार्ट खोलने तथा उन्हें चलाने का अधिकार भी होगा।

## गैर–सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) की भूमिका –

ग्रामीण क्षेत्रों में टी0एस0सी0 के कार्यान्वयन में गैर सरकारी संगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। उन्हें सूचना शिक्षा संचार गतिविधियों के साथ साथ मैदानी कार्य में भी सक्रिय रूप से जुटना पड़ता है। उनकी सेवाएं केवल इतने के लिए ही नहीं वांछित है कि ग्रामीण स्वच्छता के लिए ग्रामवासियों में जागरूकता पैदा की जाए, बल्कि यह सुनिश्चित करने के लिये भी उन्हें कटिबद्ध रहना पड़ता है कि वे उन स्वच्छ शौचालयों का वाकई इस्तेमाल करें। गैर सरकारी संगठन भी

ग्रामीण स्वच्छता मार्ट और निर्माण केन्द्र खोलने और चला सकने के लिये प्राधिकृत होंगे।

केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के तहत टी0एस0सी0 के कार्यान्वयन पर राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों को आवर्ती मूल्यांकन अध्ययन की व्यवस्था करनी पड़ती है। प्रतिष्ठित संस्थानों एवं संगठनों के जरिए मूल्यांकन अध्ययन की व्यवस्था की जानी चाहिए। राज्यों केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा व्यवस्थित इन मूल्यांकन अध्ययनों की रिपोर्ट की प्रतियां भारत सरकार तक पहुंचाई जाती है। इन मूल्यांकन अध्ययनों और भारत सरकार द्वारा या उसके प्रतिनिधि की ओर से संचालित समवर्ती मूल्याकंन में भी अवलोकन के आधार पर राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा प्रतिविधिक कार्य करना पड़ता है।

राज्यों में टी.एस.सी. परियोजनाओं के एक समूह के लिए भारत सरकार द्वारा वर्ष में दो बार कार्यान्वयन प्रगति की समीक्षा आयोजित की जा सकती है। इस समीक्षा में कम से कम दो अधिकारियों/पेशेवरों की बहु अभिकरण की एक टीम को शामिल कर सकते हैं। किसी परियोजना के लिये मध्यावधि की स्थिति में निधि संशोधन में आवश्यकता की समीक्षा की जाती है। समीक्षा रिपोर्ट परियोजना लागत में संशोधन पर आधारित मानी जाती है।

स्वच्छता के क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान करने वाले शोध संस्थान, संगठन तथा गैर सरकारी संगठन तथा स्वास्थ्य, साफ, सफाई, जल आपूर्ति एवं स्वच्छता के मामलों से जुड़े शोध में संलग्न राष्ट्रीय/राज्य स्तरीय संस्थानों को ग्रामीण क्षेत्रों में मानव मल मूत्र और अपशिष्ट निष्पादन प्रणाली की मौजूदा तकनीकों के अध्ययन में शामिल किया जाता है। अनुसंधान के परिणाम अपशिष्टों के निष्पादन के लिये दीर्घ अवधि के पारिस्थिकी पोषक समाधान हेतु भू जल विज्ञान की विभिन्न स्थितियों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये कम लागत की प्रभावी तकनीक पर आधारित होती है।

किसी जिले में जब एक परियोजना पूरी कर ली जाती है तब जिला स्तर की कार्यान्वयन एजेंसी लेखा प्रमाण पत्र और उपयोगिता प्रमाण पत्र समेत पूर्णता प्रतिवेदन राज्य सरकार के माध यम से भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय में पेयजल आपूर्ति विभाग के सुर्पुद कर देगी। पूर्णता प्रतिवेदन की स्वीकार्यता या इससे सम्बन्धित अन्य जानकारी भारत सरकार द्वारा राज्य सरकार तथा जिला कार्यान्वयन एजेंसी को दी जाती है। जनपद में 2000–01 में 78000 रूपये 2001–02 में 86000 रूपये 2002–03 में 106000 रूपये और 2003–04 में 40000 रूपये धनराशि ग्राम पंचायत द्वारा उपलब्ध करायी गई।

ग्यारहवें वित्त आयोग द्वारा जनपद में ग्राम पंचायत द्वारा वर्ष 2001–2002 में 13882000 और वर्ष 2002–03 में 13881764 रूपये की धनराशि इस योजना के अन्तर्गत उपलब्ध करायी गयीं। यह धनराशि प्रत्येक वित्तीय वर्ष में ग्राम पंचायत विभाग को दो किस्तो में उपलब्ध करायी जाती है। ग्राम पंचायत विभाग ने वर्ष 2001–02 से 2002–2004 तक जनपद के विकासखण्डों को इस योजना के अन्तर्गत जो धनराशि उपलब्ध करायी उसका विवरण सारणी – 17 में उपलब्ध है।

सारणी – 17

ग्यारहवें वित्त आयोग द्वारा उपलब्ध धनराशि

| विकास खण्ड | 2000 – 01 | | 2001 – 02 | | 2002 – 03 | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| का नाम | प्रथम किस्त | द्वितीय किस्त | प्रथम किस्त | द्वितीय किस्त | प्रथम किस्त | द्वितीय किस्त |
| चिरगांव | 612008 | 612008 | 820000 | 820000 | 819986 | 819986 |
| मोंठ | 692372 | 692372 | 928000 | 928000 | 927984 | 927984 |
| गुरसरांय | 605826 | 605826 | 812000 | 812000 | 811986 | 811986 |
| बामौर | 599644 | 599644 | 803000 | 803000 | 803986 | 803986 |
| मऊरानीपुर | 680009 | 680009 | 911000 | 911000 | 909985 | 909985 |
| बंगरा | 649100 | 649100 | 870000 | 870000 | 869985 | 869985 |
| बबीना | 766556 | 766556 | 1027000 | 1027000 | 1026983 | 1026983 |
| बड़ागांव | 574916 | 574916 | 770000 | 770000 | 769987 | 769987 |

## स्वर्णजंयती ग्राम स्वरोजगार योजना (एस.जी.एस.वाई.)–

गरीबों के स्वरोजगार हेतु कार्यक्रम भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी पहल के द्वारा कार्यान्वित किए जाते हैं, जिसमें गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण सहयोग होता है, वर्तमान समय में ग्रामीण गरीबों के स्वरोजगार हेतु स्वणजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना एक प्रमुख योजना है। इस कार्यक्रम को पूर्ववर्ती समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा इससे सम्बन्धित कार्यक्रमों अर्थात समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्र महिला एवं बाल विकास, स्वरोजगार के लिये ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण, ग्रामीण दस्तकारों की उन्नत औजारों की आपूर्ति, गंगा कल्याण योजना तथा दस लाख कुआं योजनाओं समीक्षा तथा पुनगर्ठन करने के बाद 1 अप्रैल 99 को प्रारम्भ किया गया । एस.जी.एस.वाई. के प्रारम्भ होने के साथ इन छः योजनाओं को समाप्त कर दिया गया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य बैंक ऋण और सरकारी सब्सिडी के द्वारा सृजक परिसमपत्तियां उपलब्ध करवाकर गरीब परिवारों (स्वरोजगारियों) को गरीबी से ऊपर लाना है, कार्यक्रम का लक्ष्य गरीबों की क्षमता और संभाव्यता के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में काफी संख्या में छोटे छोटे उद्यम स्थापित करना है। स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना का उद्देश्य ग्रामीण गरीबों को सामर्थ्य प्रदान करने के निमित्त बड़ी संख्या में छोटे उद्यमों की स्थापना करना है, इसके मूल में यह विश्वास है कि भारत के ग्रामीण गरीबों में क्षमतायें हैं, यदि उन्हें उचित सहायता मिल जाये तो वे मूल्यवान वस्तुओं के सफल उत्पादक बन सकते हैं।

## गतिविधि समूह – आयोजना और चयन –

एस0जी0एस0वाई0 के तहत उन गतिविधियों के लिए स्वरोजगारियों के लिये सहायता पर जोर दिया जा रहा है जिसकी क्षेत्र में आर्थिक व्यावहार्यता के सम्बन्ध में प्रमुख गतिविधि के रूप में पहचान की गई है और चयन किया जाता है प्रत्येक ब्लाक लगभग 10 मुख्य गतिविधियों का चयन कर सकते हैं, किन्तु स्थानीय संसाधनों, लोगों की पेशेवर दक्षता तथा बाजारों की उपलब्ध ाता के आधार पर 4–5 गतिविधियों पर ध्यान केन्द्रित होता है, जिससे स्वरोजगारी अपने निवेशों से स्थायी आय प्राप्त कर सकें। एस0जी0एस0वाई0 प्रत्येक गतिविधि के लिए परियोजना

दृष्टिकोण अपनाती हैं बैकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं को इन परियोजना रिपोर्टो को तैयार करने में सक्रिय रूप से शामिल किया जाता है, जिससे ऋण स्वीकृति में विलम्ब न हो तथा पर्याप्त वित्तपोषण सुनिश्चित हो सकें। इन गतिविधियों का चयन ब्लाक स्तर पर पंचायत समितियों तथा जिला स्तर पर जिला ग्रामीण विकास एजेंसी/जिला परिषद के अनुमोदन से किया जाता है। इन मुख्य गतिविधियों को मुख्यतः समूहों में शुरू किया जाता है ताकि पूर्वापर सम्पर्को को प्रभावीं ढंग से स्थापित किया जा सके तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन की अर्थव्यवस्था विकसित हो सके। एस0जी0एस0वाई0 के अन्तर्गत उपलब्ध कराई जाने वाली सहायता का मुख्य हिस्सा गतिविधि कलस्टरों के लिये होना चाहिये।

## लक्ष्य समूह :–

ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे रह रहे परिवार एस.जी.एस.वाई. के तहत लक्ष्य समूह हैं। लक्ष्य समूह में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लिए 50 प्रतिशत महिलाओं के लिए 40 प्रतिशत तथा विकलांग व्यक्तियों के लिये 3 प्रतिशत आरक्षण द्वारा विशेष सुरक्षा उपाय किये जाते हैं।

## वित्तीय सहायता –

वैयक्तिक स्वरोजगारी अथवा स्व सहायता समूहों के लिए एस.जी.एस.वाई. के अन्तर्गत सहायता सरकार द्वारा सब्सिडी तथा बैंक द्वारा ऋण के रूप में दी जाती है। ऋण एस.जी.एस. वाई. का महत्वपूर्ण घटक है। सब्सिडी अपेक्षाकृत छोटा और शक्तिदायक तत्व है। तदनुसार, एस. जी.एस.वाई. में बैकों की व्यापक भागीदारी की परिकल्पना की जाती है। इन्हें परियोजना रिपोर्टो की आयोजना और तैयारी में गतिविधि कलस्टरों के चयन, आधार भूत ढांचा आयोजना के साथ साथ क्षमता निर्माण तथा स्व सहायता समूहों की पंसद की गतिविध में, अलग अलग स्वरोजगारियों के चयन में तथा ऋण की वापस अदायगी सहित ऋण पूर्व गतिविधियों तथा ऋण के बाद की निगरानी के कार्य में सक्रिय रूप से शामिल किया जाना होता है।

एस.जी.एस.वाई. के तहत एक मुश्त ऋण की बजाय बहुआयामी ऋण सुविधा को बढ़ावा दिया जाता है। स्वरोजगारी की ऋण सम्बन्धी जरूरतों को ध्यानपूर्वक मूल्यांकन करने की आवश्यकता है। वस्तुतः पिछले वर्षो में स्वरोजगारियों को ऋण लेने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। व्यक्तियों के लिए एस.जी.एस.वाई. के अन्तर्गत सब्सिडी परियोजना लागत के 30 प्रतिशत तक एक समान है बशर्ते कि अधिकतम सीमा 7500 रू0 हो। अनु0 जातियों/जनजातियों और विकलांग व्यक्तियों के लिये सब्सिडी परियोजना लागत का 50 प्रतिशत हैं, बशर्ते कि अधि ाकतम सीमा 10000 रू0 हो। स्वरोजगारियों के समूहों के लिये सब्सिडी योजना की लागत का 50 प्रतिशत, वशर्ते कि प्रति व्यक्ति सब्सिडी 10000 रू0 या अधिकतम 1.25 लाख या इनमें से जो भी कम हो, है। सिंचाई परियोजनाओं के लिये सब्सिडी की कोई वित्तीय सीमा नहीं होती है। सब्सिडी कार्योत्तर है।

## कार्यान्वयन एजेंसियां –

एस.जी.एस.वाई. को पंचायती राज संस्थाओं, बैंको, सम्बन्धित विभागों तथा गैर सरकारी

1. वार्षिक रिपोर्ट – 2002 – 2003 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय।

संगठनों की सक्रिय भागीदारी से डी.आर.डी.ए. द्वारा कार्यान्वित किया जा रहा है।

## स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत विशेष परियोजनाऐं–

गरीबी उन्मूलन के लिये विभिन्न विभागों के समन्वित प्रयासों के लिए और नई पहल प्रारम्भ करने के लिये ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा स्वर्णजंयती ग्राम स्वरोजगार योजना की 15 प्रतिशत निधियां विशेष परियोजनाओं हेतु इस तरह के प्रयासों के लिये निर्धारित की जाती हैं। परियोजनाऐं एक जिले अथवा एक से अधिक जिलों में हो सकती हैं। प्रत्येक विशेष परियोजना का उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे बसर कर रहे परिवारों की विशिष्ट संख्या के लिये स्वरोजगार कार्यक्रमों के द्वारा एक समयबद्ध कार्यक्रम सुनिश्चित करना है। परियोजनाओं में गरीब ग्रामीणों के संगठन सहायक आधारभूत ढांचा, प्रौद्योगिकी, विपणन, प्रशिक्षण के रूप में अथवा इनके सम्मिलित रूप में सतत् स्वरोजगार के दीर्घकालीन अवसर उपलब्ध कराने के लिये विभिन्न कार्यनीतियां शामिल होती हैं।

01.4.1999 से लेकर अब तक 88 परियोजनाऐं मंजूर की गई हैं, मंत्रालय के लिये परियोजना लागत का अंश 544.39 करोड़ रूपये था, जिसमें से आरम्भ से लेकर अब तक 277. 81 करोड़ रूपये रिलीज किए गए हैं।[1]

वर्ष 2001–2002 के दौरान, असम, गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु, और त्रिपुरा के लिये एक एक मणिपुर और मध्य प्रदेश के लिये दो दो पंजाब के लिये तीन, हिमाचल और उत्तरप्रदेश के लिये चार चार आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश के लिये पांच पांच और राजस्थान के लिये 8 परियोजनाओं सहित अब तक 39 विशेष परियोजनाऐं मंजूर की गई है। इन परियोजनाओं की स्वीकृत लागत में मंत्रालय का अंश 224.16 करोड़ रू0 जिसमें से वर्ष 2002–03 के दौरान 88.97 करोड़ रू0 रिलीज मिल गए हैं।

विशेष परियोजनाओं का क्षेत्र कम नहीं है। अपितु वे ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार सृजन की क्षमता रखने वाले हर क्षेत्र के लिये है। 2003–04 तक ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा 27 राज्यों के 24 क्षेत्रों में 158 परियोजनाओं का वित्तपोषण किया गया है। इन परियोजनाओं में कुल निवेश 1347.55 करोड़ रू0 है। जिसमें केन्द्रीय अंश 808.68 करोड़ रू0 है। इस राशि में से 450.53 करोड़ रू0 रिलीज किए जा चुके हैं। कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों के लिये परियोजनाओं की अधिक संख्या अनुमोदित की गई है। वे हैं – जल संभरण और सिंचाई, डयेरी विकास, विपणन, रेशम उद्योग, हस्तशिल्प और हथकरघा। कुछ क्षेत्रों में निवेश इतना ज्यादा हुआ कि व्यापक रूप से पूरे क्षेत्र में असर देखा जा सकता है। उदा0 के लिये डेयरी विकास और पशु पालन विकास के क्षेत्रों को मिलाकर कुल निवेश 267.34 करोड़ रू0 किया गया, जल संभरण और सिंचाई में 159 करोड़ रू0 ग्रामीण उत्पादों के विपणन के लिए आधारभूत सुविधाओं हेतु 126.4 करोड़ रू0 हस्तशिल्प एवं हथकरघा के लिये 107.59 करोड़ रू0 और रेशम उद्योग के लिये 83.78 करोड़ रू0 क्षेत्रवार निवेश किये गये।

भविष्य के एजेण्डा के रूप में ग्रामीण विकास मंत्रालय विशेष परियोजनाओं पर क्षेत्रवार ध्यान दें रहे हैं। चमड़ा, हस्तशिल्प, हथकरघा इत्यादि जैसे क्षेत्र है जहां भारी संख्या में बी.पी. एल.

परिवार केन्द्रित है, और यदि इन क्षेत्रों में सुनियोचित हस्तक्षेप किया जाए तो इससे अन्य तरीके के मुकाबले अधिक लोगों के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। कभी कभी किसी क्षेत्र के लो बाजार दोषयुक्त होने के कारण तथा उनका नियंत्रण कुछ खास लोगों के पास होने के कारण गरीब होते हैं, अपनी किसी क्षमता में कमी के कारण नहीं। कुछ ऐसे क्षेत्र हैं। जैसे सुगन्धित एवं औषधीय पौधे, बागवानी इत्यादि जहां भारी लाभ एवं आय क्षमताऐं है। क्षेत्र प्रयोग से ग्रामीण निर्धनों के लिये इस क्षमता का सुनियोजित ढंग से उपयोग करने में बहुत मदद मिलती है।

## एस.जी.एस.वाई. कीं धीमीं प्रगति के कारण –

एस.जी.एस.वाई. एक प्रक्रियोन्मुख योजना है। शुरूआती तैयारी कार्यो अर्थात् गरीबों का संगठन, स्व सहायता समूहों का निर्माण, उनका प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण, समूहों का वर्गीकरण करने के कार्य में अधिक समय लगता है। समूह निर्माण के एक साल बाद हीं वे आर्थिक गतिविधियों के लिये वित्तीय सहायता के पात्र हो पाते हैं और कभी कभी उनकी सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि साक्षरता कौशल आदि के आधार पर इसमें और अधिक समय लग जाता है। इसलिये कार्यान्वयन के पूर्व वर्षो के दौरान प्रगति संभावित रूप से धीमीं थी।

कार्यक्रम की धीमी प्रगति का एक महत्वपूर्ण कारण बैकों द्वारा ऋणों की स्वीकृति और वितरण में विलम्ब से सम्बन्धित है। वर्ष 2001–02 के दौरान डी.आर.डी.ए. द्वारा प्रस्तुत किए गए कुल 12.18 लाख रू0 के ऋण आवेदन पत्रों से केवल 6.79 लाख रू0 के ऋण स्वीकृत किए गये थे और 5.69 लाख रू0 के ऋण वितरित किए गए थे। इसी प्रकार 2002–03 वित्त वर्ष के दौरान दिसम्बर 2002 तक बैंकों में प्रस्तुत किए गए कुल 6.09 लाख रू0 के ऋण आवेदनों में से बैंको ने केवल 2.34 लाख रू0 के ऋण मंजूर किए थे, और केवल 1.91 लाख के ऋण वितरित किए गए हैं। बैंक आवर्ती निधि के अन्तर्गत अपना ऋण अंश रिलीज नहीं कर रहे हैं। राज्यों द्वारा आधार भूत सुविधाओं तथा प्रशिक्षण के लिए नियत निधियों के उपयोग की धीमी प्रगति भी एस. जी.एस.वाई. की धीमी प्रगति का कारण हीं है।

जनपद झाँसी में दिनांक 15.12.04 तक 1491 समूह गठित किये जा चुके हैं। इनमें से 431 समूह प्रथम ग्रेडिंग में सफल रहे। 428 रिफण्ड फण्ड जारी किया गया 161 समूहों को सी. सी. एल. स्वीकृत किया गया। इनमें से मात्र 89 समूह द्वितीय ग्रेडिंग में सफल हुये और 36 समूहों को ऋण उपलब्ध हो सका। जनपद में एस.जी.एस.वाई. योजना की विकासखण्ड वार प्रगति को सारणी–18 में देखा जा सकता है।

सारणी – 18

एस.जी.एस.वाई. योजनान्तर्गत प्रगति विवरण (दिनांक 15.12.04 तक)

| विकास खण्ड का नाम | गठित समूह | I ग्रेडिंग सफल समूह | रि. फण्ड जारी | सी.सी.एल. स्वीकृत | II ग्रेडिंग में सफल | ऋण वितरण |
|---|---|---|---|---|---|---|
| बड़ागाँव | 115 | 46 | 46 | 25 | 08 | 07 |
| बबीना | 123 | 31 | 31 | 23 | 05 | 04 |
| चिरगांव | 256 | 103 | 55 | – | 20 | – |
| मोंठ | 217 | 55 | 35 | – | 12 | – |
| बंगरा | 111 | 32 | 30 | 19 | 05 | – |
| मऊरानीपुर | 220 | 72 | 21 | 50 | 16 | 11 |
| बामौर | 220 | 35 | 70 | 20 | 11 | 6 |
| गुरसरांय | 220 | 57 | 140 | 24 | 12 | 8 |
| योग | 1491 | 431 | 428 | 161 | 89 | 36 |

## सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एस.जी.आर.वाई.)–

खाद्य सुरक्षा के साथ साथ रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना भारत में विकास सम्बन्धी आयोजना का एक प्रमुख उद्देश्य रहा है। जनसंख्या तथा मजदूरों की संख्या में अधिक वृद्धि होने से पंचवर्षीय योजनाओं के बावजूद बेरोजगारी और अपूर्ण रोजगार में वृद्धि हुई है, भारत सरकार का उद्देश्य मजदूरी और स्वरोजगार के जरिए बड़े पैमाने पर रोजगार उपलब्ध कराते हुए बेरोजगारी और अपूर्ण रोजगार का न्यूनतम स्तर पर लाना, और भूखा की समस्या से निपटने के लिए खाद्य सुरक्षा मुहैया करना है, ऐसा मानना है कि गरीबी उपशमन, असमानताओं को कम करने, पोषण स्तर को सुधारने और आर्थिक वृद्धि को उच्च स्तर तक कायम रखने के लिए मौजूदा मानव और अन्य संसाधनों का और बड़े पैमाने पर तथा प्रभावी ढंग से उपयोग करना ही सर्वाधिक प्रभावी माध्यम है।

गरीबी, बेरोजगारी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में धीमी प्रगति को दूर करने के लिए और खाद्य सुरक्षा मुहैया कराने के लिए ग्राम स्तर पर मांग आधारित ढांचा मुहैया कराना आवश्यक है ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक वृद्धि तीव्र गति से हो सके और बाजारोन्मुख अर्थव्यवस्था तक पहुंच, के जरिए रोजगार के अवसरों में वृद्धि की जा सकती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में, अतिरिक्त मजदूरी रोजगार, ढांचागत विकास और खाद्य सुरक्षा पर और अधिक बल देने के लिये माननीय प्रधानमंत्री जी ने 15 अगस्त 2001 को 10000 करोड़ रुपये के वार्षिक परिव्यय वाली एक नई महत्वाकांक्षी योजना प्रारम्भ की। तदनुसार ग्रामीण विकास मंत्रालय ने सुनिश्चित रोजगार योजना (ई.ए.एस.) (ग्रामीण क्षेत्रों के लिए एक मात्र अतिरिक्त मजदूरी

रोजगार योजना) जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (जे.जी.एस.वाई.) की अब तक चालू योजनाओं की समीक्षा की और इन्हें एक ही योजना में मिलाते हुए, 25 सितम्बर 2001 से सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एस.जी.आर.वाई.) नामक एक नई योजना प्रारम्भ हुई।

यह कार्यक्रम केन्द्र प्रायोजित योजना के रूप में कार्यान्वित किया जाता है तथा केन्द्र और राज्य 75:25 के अनुपात में कार्यक्रम के नकद घटक का खर्च वहन करते हैं। संघ राज्य क्षेत्र के मामले में योजना के अन्तर्गत समस्त निधियां (100प्रतिशत) केन्द्र द्वारा उपलबध कराई जाती है। राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को खाद्यान्न मुफ्त उपलब्ध कराया जाता है।

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना उन सभी ग्रामीण गरीबों के लिये है ज़िन्हें मजदूरी रोजगार की जरूररत है और जो अपने गांव/बस्ती के आस पास शारीरिक एवं बिना कौशल वाले कार्य करना चाहते हैं, यह कार्यक्रम स्वलक्षित है।

मजदूरी रोजगार उपलब्ध कराते समय, कृषि मजदूरों गैर कृषि अकुशल मजदूरों सीमान्त किसानों, महिलाओं, अनु0 जाति/अनु0 जनजाति के सदस्यों और जोखिम भरे पेशों से निकाले गए बाल मजदूर के माता पिता अपंग बच्चों के माता पिता या अपंग माता पिता के व्यस्क बच्चे जो मजदूरी रोजगार के लिए काम करने को इच्छुक है को वरीयता दी जाती है।

## विशेषताऐं –

- सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना एक केन्द्र प्रायोजित योजना है और इसका कार्यान्वयन 10000 करोड़ रूपये के कुल परिव्यय से किया जा रहा है।
- इस योजना के अन्तर्गत 5000 करोड़ रूपये मूल्य (सस्ते मूल्य पर) का 50 लाख टन खाद्यान्न हर वर्ष मुफ्त राज्य सरकारों एवं संघ राज्य क्षेत्रों को मुहैया कराये जाने का लक्ष्य है।
- 5000 करोड़ रूपये का उपयोग सामग्री लागत और मजदूरी के नगद घटक को पूरा करने में किया जाता है।
- कार्यक्रम के सामग्री लागत का व्यय केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा 75:25 के अनुपात में बहन किय जाता है।
- खाद्यान्न का भुगतान ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा सीधे भारतीय खाद्य निगम को किया जाता है।
- सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के माध्यम से मजदूरी रोजगार के हर वर्ष लगभग 100 करोड़ श्रमदिनों का सृजन होने का अनुमान है।
- एस.जी.एस.वाई. के अन्तर्गत प्रत्येक श्रमिक को न्यूनतम 5 किलोग्राम खाद्यान्न प्रतिश्रमदिन के लिए (वस्तु के रूप में) मजदूरी के हिस्से के रूप में प्रदान किया जाता है।
- शेष मजदूरी का नगद भुगतान किया जाता है ताकि उनके लिये अधिसूचित न्यूनतम मजदूरी सुनिश्चित हो जाए।
- राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्रों को छूट होती है कि वे खाद्यान्न की लागत (जिसे मजदूरी के एक हिस्से के रूप में दिय जाता है) की गणना बी.पी.एल. दर पर फिर ए.पी.एल. दर पर या फिर इन दोनों दरों के बीच किसी भी दर पर कर सके।

- क्षेत्र की आवश्यकताओं के अनुरूप पंचायती राज संस्थाए (पी.आर.आई.) कार्य करवा सकती है।

## कार्यनीति–

कार्यक्रम का कार्यान्वयन दो चरणों में किया जा रहा है।

(1) कार्यक्रम का पहला चरण जिला और मध्य स्तरीय पंचायातों में कार्यान्वित किया जा रहा है। एस.जी.आर.वाई. के अन्तर्गत उपलब्ध समस्त निधियों में से 50 प्रतिशत निधियों निर्धारित की जाती है और उसे जिला परिषद और मध्य स्तरीय पंचायतों या पंचायत समितियों में 40:60 के अनुपात में बांटा जाता है।

(2) कार्यक्रम का दूसरा चरण ग्राम पंचायत स्तर पर कार्यान्वित किया जा रहा है, इस चरण हेतु एस.जी.आर.वाई. की 50 प्रतिशत निधियां निर्धारित की गयी है। ग्राम पंचायतों को समस्त निधियां डी.आर.डी.ए./जिला परिषदों द्वारा रिजीज की जाती है।[1]

## विशेष घटक –

आपदा प्रभावित ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त मजदूरी रोजगार के जरिए खाद्यान्न सुरक्षा बढ़ाने हेतु एस0जी0आर0वाई0 के अन्तर्गत एक विशेष घटक का प्रावधान है। इस विशेष घटक की मुख्य विशेषताऐं निम्नानुसार है।

- एस.जी.आर.वाई. का विशेष घटक 1 अप्रैल 2002 से लागू है।
- इस विशेष घटक के लिए एस.जी.आर.वाई. के अन्तर्गत आंवटित खाद्यान्न का विशिष्ट प्रतिशत निर्धारित किया गया है।
- यह मांग आधारित है और आपदाओं जैसे सूखा, भूकम्प, चक्रवात, बाढ़ आदि से निपटने की आवश्यकता के आधार पर इसे राज्यों को आवंटित किया जाता है।
- राज्यों को केवल खाद्यान्न मुफ्त प्रदान किया जाता है, ताकि वे रोजगार उन्मुख कार्यो को शुरू कर सके। योजना का नगद घटक राज्य सरकारो द्वारा या तो राज्य क्षेत्र योजना या फिर केन्द्र प्रायोजित योजना से प्रदान किया जाता है।[2]

## मजदूरी भुगतान –

योजना के अन्तर्गत, प्रतिश्रम दिन 5 किलोग्राम खाद्यान्न (वस्तु के रूप में) उपलबध कराया जाता है। अगर राज्य सरकार प्रति श्रम दिन के लिए 5 किग्रा0 से अधिक खाद्यान्न देना चाहे तो वह मौजूदा राज्य आवंटन में से ऐसा कर सकती है, राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्रों को छूट है कि वे खाद्यान्न लागत, जिसे मजदूरी के एक हिस्से के रूप में दिया जाता है कि गणना बी.पी. एल.या ए.पी.एल. दर पर या इन दोनो दरों के बीच की किसी दर पर कर सकते हैं मजदूरो को मजदूरी का शेष हिस्सा नकद रूप में दे दिया जाता है। ताकि उन्हें अधिसूचित न्यूनतम मजदूरी सुनिश्चित हो सके।

**कार्यान्वयन प्राधिकारी :–** कार्यक्रम का समस्त पर्यवेक्षण जिला परिषद के पास है, जिला सतर की कार्यान्वयन एजेंसी जिला परिषद, ब्लाक स्तर पर पंचायत समिति और ग्राम स्तर

---

1. वार्षिक रिपोर्ट – 2002 – 2003 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय।
2. वार्षिक रिपोर्ट – 2003 – 2004 भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय।

पर ग्राम पंचायत है। जिला परिषद अन्य बातों के साथ साथ कार्यो की देख रेख और निगरानी और राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों की अपेक्षित रिपोर्ट को भारत सरकार को भेजने के लिए भी जिम्मेदार हैं।

## वार्षिक कार्यनीति :-

वार्षिक कार्यनीति प्रतयेक वर्ष स्वतंत्र रूप से पंचायती राज संस्थाओं के स्तर पर बनायी जाती है। जिला स्तर पर किये जाने वाले कार्यो हेतु वार्षिक कार्यनीति बनाने का जिम्मा जिला पंचायत का है जहां समिति स्तर पर कार्यो को करने के लिए पंचायत समिति अपनी योजना बनाने और उसे स्वीकृत करने के लिए जिम्मेदार है वहीं ग्राम पंचायत अपनी योजना बनाने के लिए तो जिम्मेदार है परन्तु इसे ग्राम सभा द्वारा अनुमोदित करना होगा। गांव पंचायत अपनी ग्राम सभाओं के अनुमोदन से किसी भी कार्य को कर सकती है। कोई वित्तीय सीमा प्रस्तावित नहीं है, क्योंकि बहुत से राज्यों ने पहले से ग्राम पंचायतों को शक्तियां दे दी हैं। और इस परिप्रेक्ष्य में वित्तीय सीमा, राज्य सरकारो द्वारा निर्धारित की जाती है। ग्राम सभा द्वारा स्वीकृत कार्यो को अनुमोदित कर वार्षिक कार्यनीति में शामिल करना होगा।

## किये जाने वाले कार्य -

इस योजना के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्य मजदूरी प्रधान होते हैं। और इससे मजदूरी रोजगार स्थायी परिसम्पत्तियों और आधारभूत संरचना का सृजन होता है। विशेषकर वह जो सूखा रोकने में मददगार हो जैसे मृदा एवं नमी संरक्षण कार्य, वाटर शेड, विकास, परम्परागत जल स्रोत, वन रोपण और ग्राम संरचना के निर्माण को प्रोत्साहन और सम्पर्क सड़को, प्राथमिक विद्यालय भवनों, अस्पताल, पशुचिकित्सालयों विपणन संरचना और पंचायत घरों का निर्माण/प्रारम्भ किए गए कार्य इस तरह के होते हैं कि वे अतिरिक्त रोजगार के अवसर सृजित करने के साथ साथ ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने में भी सक्षम होते हैं।

## प्रतिबन्धित कार्य :-

- धार्मिक प्रयोजनो आदि के लिये भवन और ऐसे ही कार्य ।
- स्मारक, स्मृति स्थल, प्रतिमा, मूर्ति, मेहराव द्वार/स्वागत द्वार और इस प्रकार के कार्य।
- बड़े भवन और पुल।
- सरकारी कार्यालय भवन और परिसर दीवारें
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय/कालेजों के लिये भवन

जनपद झांसी में जिला ग्राम विकास प्राधिकरण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर दिसम्बर 2004 तक सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना की प्रगति को आगे दी गयी तालिकाओं में देखा जा सकता है।

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत वित्तीय वर्ष 2004-05 के दिसम्बर माह में जनपद झाँसी में केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा व्यय की गयी धनराशि का विवरण सारणी - 19 में देखा जा सकता है।

# MONITORING FORMATS FOR MONTHLY PROGRESS REPORT UNDER SGRY
## FINANCIAL PERFORMANCE DURING THE YEAR *2004-05* UPTO THE MONTH OF DECEMBER, *2004*

DISTRICT - JHANSI

सारणी - 19

(Rs. In Lakh)

| District | Actual O.B. as on 1st April of the year | Central realese of last year but received during the current year | Release as on date | | | Misc. Receipt | Total Availability (2+3+6+7) | Cumulative Expenduture | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | Centre | State | Total (4+5) | | | General Works | SC/ST | | Maintan ance | Training | Others | Total (9 to 14) |
| | | | | | | | | | Individual Beneficiaries | Habitation (50%) | | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 | 14 | 15 |
| Jhansi | 486.120 | 50.360 | 436.370 | 161.970 | 598.340 | 0.000 | 1134.820 | 476.360 | 91.800 | 303.150 | 94.500 | 0.000 | 0.000 | 965.81 |

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत 2004–05 के माह दिसम्बर का जनपद झाँसी में आरक्षण के माध्यम से रोजगार की स्थिति सारणी – 20 में प्रदर्शित है।

सारणी - 20

MONITORING FORMATS FOR MONTHLY PROGRESS REPORT UNDER SGRY
FINANCIAL PERFORMANCE DURING THE YEAR *2004-05* UPTO THE MONTH OF DECEMBER, *2004*

| District | Employment Generated (In Lakh Mandays) | | | | | | | Physical assets created under SGRY (Works in Numbers) | | | | | | | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | (Out of Column 5) | | | No. of works undertaken | | | | | | No. of works completed | | | | | | No. of works in completed | | | | | |
| | SC | ST | Other | Total (2+3+4) | Women | Landless | Other | General Works | SC/ST Under 22.5% | SC/ST Under 50% Provision | Disabled | Maintanance | Total | General Works | SC/ST Under 22.5% | SC/ST Under 50% Provision | Disabled | Maintanance | Total | General Works | SC/ST Under 22.5% | SC/ST Under 50% Provision | Disabled | Maintanance | Total |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 | 17 | 18 | 19 | 20 | 21 | 22 | 23 | 24 | 25 | 26 |
| Jhansi | 7.29 | 0 | 3.96 | 11.25 | 3.95 | 6.76 | 0 | 2022 | 158 | 510 | 0 | 312 | 3002 | 320 | 59 | 201 | 0 | 65 | 645 | 1702 | 99 | 309 | 0 | 247 | 2357 |

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत वित्तीय वर्ष 2004–05 के दिसम्बर माह में खाद्यान्न की स्थिति इस प्रकार थी।

सारणी – 21

MONITORING FORMATES FOR MONTHLY PROGRESS REPORT UNDER SGRY
ON FOODGRAIN COMPONENT DURING THE YEAR *2004-05* UPTO THE MONTH OF DECEMBER, *2004*

DISTRICT - JHANSI

(Foodgrains in Metric Tonners)

| S. No. | Name of the District | Opening Balance as on 1st April (Unlifted quantity) (Authorisation Minus lifting | | | Foodgrains Authorized (During the Current Year) | | | Total Authorisation of foodgrains (Unlifted Quantity of the Previous Year Plus Current Years's Authorization) | | | Unutilized Balance of last year's Lifted (last year's lifting minus last year's Utilization) | | | Foodgrains lifted during the current year (Out of column 5) | | | Total lifted (column 6 plus column 7) | | | Foodgrains Actually Utilised during the Current year (Out of Columns 8) | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total |
| 1 | 2 | 3 | | | 4 | | | 5 | | | 6 | | | 7 | | | 8 | | | 9 | | |
| 1 | Jhansi | 3939 | - | 3939 | 6608 | - | 6608 | 10547 | - | 10547 | 592 | - | 592 | 5091 | - | 5091 | 5683 | - | 5683 | 5647 | - | 5647 |

A The rates at which foodgrains are distributed to the beneficiaries.
(a) Rice @ Rs.......................................Per Kg.
(b) Wheat @ Rs 5/- Per kg.

B Average foddgrains provided per mandays
(a) Rice @ Rs........................................Per Kg
(b) Wheat @ Rs. 5.01/- Per kg.

C Notified minumum Wages in Rupees.
Rs. 58/- Per mandays

# सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के वित्तीय वर्ष 2004–05 के दिसम्बर माह में SPECIAL COMPONENT के अन्तर्गत खाद्यान्न की स्थिति

## सारणी – 22

MONITORING FORMATES FOR MONTHLY PROGRESS REPORT UNDE SGRY
SPECIAL COMPONENT DURING THE YEAR 2004-05 UPTO THE MONTH OF DECEMBER 2004

DISTRICT - JHANSI

(Foodgrains in Metric Tonners)

| S. No. | Name of the District | Opening Balance as on 1st April (Unlifted quantity) | | | Foodgrains authorized | | | Total Authorisation of foodgrains | | | Foodgrains lifted during the current year | | | %of Lifting against authorisation | | | Unutilized Balance of last year's Lifted | | | Total Lifted | | | Foodgrain Actually Utilised during the Current Year | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | Wheat | Rice | Total | |
| 1 | 2 | 3 | | | 4 | | | 5 (3+4) | | | 6 | | | 7 (6/5) | | | 8 | | | 9 (6+8) | | | 10 | | | |
| 1 | Jhansi | 357 | - | 357 | - | - | - | 357 | - | 357 | 0 | - | 0 | 0 | - | o | 357 | - | 357 | 357 | - | 357 | 94.19 | - | 94.19 | |

| %of Utilized/distributers Total Avaliblity of foodgrains | | | No. of works | | | Source of cash componnent and corressponding amount involved | | | Employment generaed | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| Wheat | Rice | Total | Taken up | Completed | Uncompleted works in progress | Central Schemes | State Schemes | State sponsored schemes | (in lakh mandays) | |
| 11 (10/9) | | | 12 | | | 13 | | | 14 | |
| 26.38 | - | 26.38 | 32 | 18 | 14 | 5.21 | - | 0 | 0.18 | |

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना विशिष्ट लक्षणों सहित एक अच्छा कार्यक्रम है। 73वां संविधान संशोधन अधिनियम के तालमेल में पंचायती राज संस्थाओं द्वारा पूर्ण योजनावद्ध और कार्यान्वित किया जाने वाला इस ऊँचाई का यह पहला कार्यक्रम है। इसे ग्रामीण क्षेत्रों में विशाल मानव संसाधन के क्षमता के निर्माण में बड़े निवेश के रूप में देखा जाता है। जिसमें समग्र रूप से अर्थव्यवस्था के स्वरूप को बदलने की क्षमता है। सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना को शुरू करते समय, पूर्व गलतियों से प्राप्त अनुभवों को ध्यान में रखा गया तथा पूर्व गलतियों की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए समस्त सम्भव उपाय सुनिश्चित किए गए। इस ऊँचाई के किसी कार्यक्रम की सफलता पूर्णतः सुपुर्दगी तंत्र की गुणवत्ता पर निर्भर होती है जो अन्ततः कार्यान्वयन एजेंसियों तथा पंचायती राज संस्थाओं पर आश्रित होती है। इसके अतिरिक्त मजदूरी रोजगार कार्यक्रमों से सम्बद्ध समस्त कमियों के विचार और प्रवृत्ति को बदलने की तत्काल आवश्यकता हैं अब तक इन कार्यक्रमों को सामाजिक क्षेत्र के कार्यक्रमों या सामाजिक सुरक्षा नेटवर्क कार्यक्रमों के रूप में लिया गया। इस सोच को बदला जाना चाहिए। इन कार्यक्रमों को मात्र सामाजिक क्षेत्र के कार्यक्रमों या लक्ष्य समूह को सामाजिक सुरक्षा नेट प्रदान करने के लिए मात्र एक हस्तक्षेप के रूप में ही नहीं समझा जाना चाहिए। सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना का एक आर्थिक पहलू भी है हमारा लक्ष्य मात्र अतिरिक्त श्रम दिनों का सृजन करना तथा ग्रामीण निर्धन को खाद्य सुरक्षा प्रदान करना ही नही है वरनृ इसके साथ साथ आर्थिक ढांचा एवं मानव संसाधन के विकास के माध्यम से राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में इसकी व्यापक क्षमता को श्रेणीवद्ध करना भी है जो ग्रामीण परिदृश्य को बदल सके और राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को गति प्रदान कर सकें। अतः सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना को कल्याण अर्थव्यवस्था पर आधारित एक आर्थिक कार्यक्रम के रूप में लिया जाना चाहिए। जिससे गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के उद्देश्यों की प्राप्ति को गति हासिल होगी।

# अध्याय - पंचम

# पंचायती राज और ग्राम्य विकास

- पंचायत और पंचायती राज : अवधारणा एवं पृष्ठभूमि
- पंचायती राज : संवैधानिक स्वरूप
- नवीन पंचायती राज प्रणाली की विशेषताऐं
- सफल पंचायती राज की कसौटियां
- उत्तर प्रदेश में पंचायती राज और ग्राम्य विकास
- उत्तर प्रदेश में पंचायती राज और ग्राम्य विकास की समीक्षा

# ''पंचायत और पंचायती राज'' अवधारणा एवं पृष्ठभूमि:-

''पंचायत'' शब्द भारत में सर्वाधिक जाना पहचाना सर्वव्याप्त शब्द है। इस शब्द के अभिप्रेय सामाजिक और राजनीतिक दायरों में अपने कत्तर्व्यों और दायित्वों के सापेक्ष महत्वपूर्ण है। यदि ''पंचायती राज'' राजनीतिक शासन प्रणाली की धुरी है तो सामाजिक सरोकारों के सन्दर्भ में ''पंचायतें'' सामाजिक व्यवस्था की नियामक है। 'पंचायत' शब्द की अवधारणा और पृष्ठभूमि के क्षिप्र विवेचन द्वारा ''पंचायत'' की ऐतिहासिक तथा वर्तमान भूमिका को समझा और परखा जा सकता है।

भारतीय ग्रामीण समाज और लोक जीवन में प्राचीन परम्परा से ही ''पंचायत'' मान्य और प्रतिष्ठित सामाजिक संस्था रही है। वर्तमान ग्राम पंचायतों की शुरूआत तो देश की आजादी के वाद हुई लेकिन भारतीय समाज में अलग अलग समुदायों में अपनी पंचायतें बहुत पहले से चली आ रही है। सभी तरह के सामाजिक फैसले इन्हीं पंचायतों में लिये जाते थे। समुदायों के छोटे मोटे झगड़ों और विवादों का निपटारा भी उन्हीं पंचायतों में किया जाता था और लोग इनके फैसलों को खुशी खुशी मानते थे।[1]

हिन्दी के जाने माने कथाकार प्रेमचन्द्र की एक प्रसिद्ध कहानी है ''पंचपरमेश्वर''। यह कहानी बतलाती है कि ''किसी व्यक्ति को जब दो व्यक्तियों के बीच विवाद का फैसला देने के लिए चुना जाता है तो उसमें परमेश्वर अर्थात् ईश्वर उतर आता है। पंच के आसन पर बैठकर न उसे दोस्ती याद रहती है न दुश्मनी याद रहती है। सिर्फ यह याद रहता है कि उसे न्याय का पक्ष लेना है।'' इस कहानी के अन्त में प्रेमचन्द्र जी लिखते हैं :-

अपने उत्तर दायित्व का ज्ञान बहुधा हमारे संकुचित व्यवहारों का सुधारक होता है। जब हम राह भूल कर भटकने लगते हैं तब यही ज्ञान हमारा विश्वसनीय पथ प्रदर्शक बन जाता है।[2]

यह टिप्पणी ''पंचायत'' की अवधारणा को बहुत कम शब्दों में व्यक्त कर देती है। पंच के मुंह से परमेश्वर बोलता है, पाँच पंच मिलिकीजै काजा, पंच कहें सौ न्याय जैसी लोकोक्तियाँ पंच और पंचायत प्रणाली के महत्व और विश्वनीयता का ही बखान करती हैं। पंचायत शब्द की सन्धि विच्छेद करने पर पंच और आयात शब्द प्राप्त होते हैं। पंच का अर्थ पाँच और आयात से आशय है बैठने के स्थान से। इस प्रकार पंचायत का सामान्य अर्थ ''पांच व्यक्तियों की बैठक से लगाया जा सकता है। जहां तक पाँच की संख्या का प्रश्न है इसके सम्बन्ध में बहुत प्रमाणिक रूप से कुछ कह पाना मुश्किल है पर यह उल्लेखनीय है कि भारतीय दर्शन में मानव शरीर की रचना पांच तत्वों से हुई मानी गयी है। भारतीय परम्परा पाँच सात नौ आदि विषम संख्याओं को शुभ मानती है। इसी अवधारणा से पंच शब्द आम जन समुदाय को सहज स्वीकार हो गया होगा।[3] पंचायत शब्द सम्भवतः यह सूचित करता है कि साधारणतयः उन व्यक्तियों की संख्या जिनसे समिति बनती थी पाँच थी किन्तु ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि यह संख्या नियमित रूप से पांच ही रखी जाती रही हो। संख्यात्मक बिन्दु पर यदि अधिक जोर न दे तब भी यह निश्चित है कि प्रशासनिक और न्यायिक कार्य करने वाली एक इकाई पंचायत मानी जाती थी[4]

भारत में पंचायतों का अस्तित्व काफी पुराना है। ये कब से थीं इसका सही सही समय

---

1. पंच पंचायत और पंचायती राज, यशचन्द्र पृष्ठ 5
2. ''पंच परमेश्वर'' कहानी प्रेमचन्द्र
3. भारत में पंचायती राज : डॉ0 एन के श्रीवास्तव पृष्ठ 6 निधि प्रकाशन ग्वालियर।
4. एबोल्यूशन आफ पंचायती राज : इन इण्डिया 1964 आर. बी. जाथर पृष्ठ 18।

ज्ञात नहीं है। आठवीं से बारहवी शताब्दी तक पांड्यों और पल्लवों के समय के दौरान ग्राम सभाओं का उल्लेख मिलता है। यद्यपि वे देश के विभिन्न भागों में अलग अलग नामो से जाने जाते थे। कई ग्रामों में सभा या परिषद थी। इनका पर्यवेक्षण मुखिया द्वारा किया जाता था। जो गावों की समस्याओं और कल्याण कार्यो पर चर्चा करते थे।[1]

पंचायतों की ऐतिहासिक विरासत को परखने के लिए भारतीय इतिहास के विस्तार में न जाकर गुप्तकाल की शासन व्यवस्था पर एक नजर डाली जा सकती है।

गुप्तकाल भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग माना जाता है। गुप्त कालीन स्थानीय स्वाशासन के अन्तर्गत साम्राज्य को ''मुक्तियों'' में तथा मुक्तियों को विषयों अथवा जिलो मे बांटा गया था। प्रत्येक मुक्ति में दो या तीन जिले होते थे जैसे मगध मुक्ति में गया और पटना दो जिले थे। मुक्ति के अध्यक्ष को ''उपरिक'' कहते थे। विषय या जिले का अध्यक्ष विषयापति कहलाता था। जिले गांवो में विभक्त थे। गांव प्रशासन और स्वशासन की सबसे छोटी इकाई थी। गांव के मुखिया को ग्राम सेवयक या ग्रामाध्यक्ष कहते थे। उसके अधीन एक लेखक होता था ज़ो गांव के सब ऑकड़े रखता था गांव की परिषदों का कार्य ग्राम सुरक्षा व्यवस्था, झगड़ों का निपटारा करना, ग्राम के कल्याणकारी कार्य के साथ साथ सरकारी कर वसूल करके कोषालय में जमा करना आदि कार्य थे। गुप्त काल में राज्य मुख्यतः ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर ही आधारित थे। स्थानीय विभिन्नताओं के आधार पर जिलें और गांवो की संस्थाओं को प्रशासनिक शक्तियां प्राप्त थी। इन संस्थाओं का कार्य स्थानीय संसाधनों का विकास करते हुए अपने अधिकार क्षेत्र में शान्ति एवं सुव्यवस्था बनाए रखता था।[2]

अभी हाल में ही सामाजिक युवा संगठन कर्त्ता श्री चन्द्रशेखर प्राण की पंचायत और गांव समाज नाम को महत्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक में लेखक ने चीनी यात्री फाहयान, प्रसिद्ध पर्यटक ट्रैवनियर तथा भारत के एक ब्रिटिश गवर्नर चार्ल्स मेटकाफ की अनेक टिप्पणियों को उद्धत कर भारत के प्राचीन पंचायती स्वरूप के महत्व को रेखांकित किया है।

17वीं सदी में भारत यात्रा पर आये प्रसिद्ध पर्यटक ट्रैवनियर के यात्रा विवरण के ये शब्द यहां विशेष उल्लेखनीय है :-

''प्रत्येक गांव में मैंदा, मक्खन, दूध, साग सब्जियां खांड और मिठाइयां प्रचुर मात्रा में मिल जाती है जो गांव की सुख और समृद्धि की परिचायक है। गांव में एकता तथा सहयोग की भावना प्रशंसनीय है। प्रत्येक अपने में एक छोटा सा संसार है बाहर की घटनाओं का ग्राम्य जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। गांव निवासी अपने बल और भगवान पर विश्वास रखते हुए अपने कार्यो में जुटे रहते हैं। भारत के गांव एक बड़े परिवार के समान है जिनका हर एक सदस्य अपने कर्तव्यों से भली प्रकार परिचित हैं।''[3]

भारत के एक गवर्नर चार्ल्स मेटकाफ ने भारत के पंचायती स्वरूप की भूरी भूरी प्रशंसा करते हुए कहा था :-

---

1. ग्राम विकास आर.डी. – डी. 01 (3) पंचायत राज 1991 – पृ0 61 इंदिरा गांधी राष्ट्रीय युक्त विश्वविद्यालय नई दिल्ली।
2. प्राचीन भारत का इतिहास : ओमप्रकाश : पृ0 264 ।
3. पंचायत और गाँव समाज (पुर्नजागरण की राह) चन्द्रशेखर प्राण पृ0 36, पंचपरमेश्वर, प्रकाशन, लखनऊ।

"भारत का ग्रामीण समाज छोटे छोटे गणराज्यों के सदृश है। अपनी आवश्यकता की प्रायः सभी वस्तुओं के उत्पादन एवं विदेशी सम्बन्धों से प्रायः स्वतंत्रा राजवंशो के बाद राजवंशो का पतन होता रहा, क्रान्तियों के बाद क्रान्तियां होतीं रहीं। लेकिन भारत का ग्राम समाज वैसा ही बना रहा। मेरी धारणा है कि अपने छोटे से पृथक राज्य के सदृश्य ग्रामीण समाज की पंचायत ने भारत में होने वाले समस्त परिवर्तनों एवं क्रान्तियों के मध्य भी भारतीय जनता के परिरक्षण में अन्य किसी भी तत्व की तुलना में अधिक योगदान दिया। पंचायत उनके सुखसाधन, स्वतंत्रता एवं आत्म निर्भरता के उपभोग में बहुत अधिक सहायक रहीं।"[1]

इतिहास की यह वाणी यह विश्वास दृढ़ करती है कि शताब्दियों से भारत का ग्रमीण समाज भारत की असली ताकत रहा है। भारत में गांव केवल भूगोल का शब्द न होकर एक सांस्कृति, सामाजिक तथा आर्थिक क्रियाशीलता की इकाई रहे। परिवार और पड़ोस की समरसता के साथ सह जीवन और सह अस्तित्व की भावना यहां प्रबल रही है। जब कभी भी परिवार में विघटन या पड़ोस के साथ विवाद के रूप में कोई संकट आया तब आपस में बैठकर "संवाद, सहमति, सहयोग, सहभाग और सहकार" के आधार पर ग्रामीण समाज को संगठित बनाये रखा गया। सामाजिक सांस्कृति तथा आर्थिक सरोकारों के सभी क्रिया कलापों को व्यवस्थित रूप से संचालित करने वाली संस्था को "पंचायत" की संज्ञा से जाना जाता रहा। इन पंचायतों ने ग्रामीण समाज को स्वावलम्बी और स्वायत्र इकाई के रूप में प्रतिष्ठित किया। इसी को इतिहास में ग्राम गणराज्य के नाम से भी सम्बोधित किया गया।

ब्रिटिश सरकार ने अपने राजनीतिक नियंत्रण को बनाये रखने और उसे स्थायी बनाने की दृष्टि से कई उपाय किए तथा ग्राम पंचायतों का पुर्नगठन किया स्थानीय स्वशासन पर 1909 में एक विशेष आयुक्त नियुक्त किया गया जिसने स्थानीय कार्यो को निबटाने के लिए ग्रम पंचायतों को सक्रिय बनाने की आवश्यकता का सुझाव दिया। बाद में कई अधिनियम पारित किए गए जैसे 1919 का बंगाल ग्राम स्वशासन अधिनियम 1920 के मद्रास, बम्बई और संयुक्त प्रान्त ग्राम पंचायत अधिनियम, बिहार और उड़ीसा ग्राम प्रशासन अधिनियम 1926 का असम ग्रामीण स्वशासन अधिनियम, 1935 का पंजाब ग्राम पंचायत अधिनियम आदि" बनाये गये।[2]

ये अधिनियम गांवो के कार्यों और उनके विकास संबंधी कतिमय मामलों को देखने के लिए बनाए गये थे। उन्हें छोटे छोटे मामलों में विचारण शक्ति भी दी गई थे। परन्तु इन अधिनियमों के अधीन बनाई गई पंचायतें लोकतांत्रिक विकास नहीं थे। क्योंकि उनके अधिकांशं सदस्य सरकार द्वारा मनोनीत किये जाते थे। उन्हें बहुत ही कम शक्तियां दी गई थीं और उनके वित्तीय श्रोत भी सीमित थे।[3]

ब्रिटिश शासन काल में भारत से अधिक से अधिक धन लूटने और भारत के संसाधनो का बेरहमी से दोहन करने लिए इन पंचायतों की जड़ों में मठ्ठा डाला गया। गांव की काश्तकारी पद्धति के स्थान पर रैयतवारी पद्धति जानबूझकर लागू की गयी ताकि पंचायतों की स्वयत्ता पर

1. रिपोर्ट सिलेक्ट कमेटी ऑफ हाउस ऑफ कामन्स 1832, तृतीय खण्ड : सर चार्ल्स मेटकाफ के संदर्भ वही पुस्तक : पंचायत और गांव समाज : चन्द्रशेखर प्राण।
2. रिपोर्ट आफ दि रायल कमीशन ऑन डिसेन्टलाइजेशन इन इण्डिया बाल्यूम–1 पृ0 236 I19909
3. एग्री कल्चर प्राब्लमस ऑफ इण्डिया :सी.वी. ममोरिया पृ0 888 अक्स फोर्ड कलरन्डन प्रेस इंगल आफसेट प्रिण्टर्स, इलाहाबाद।

अंकुश लगे। ब्रिटिश नौकरशाही द्वारा समस्त न्यायिक एवं प्रशासनिक अधिकारों को केन्द्रीकरण किया गया। परिणाम स्वरूप युग युगान्तर से चली आ रही भारत की ग्राम पंचायत प्रणाली अपने अधिकार, कर्तव्य एवं प्रभाव से वंचित कर दी गयी। ब्रिटिश सरकार की कर की मार और आर्थिक शोषण की नाना विधियों से भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था चकनाचूर हो गयी।

नाना प्रकार के बिचौलियों ने भारत के गांवो को विवश लाचार बना दिया और जनता को दरिद्र। पंचायते निरीह संस्था मात्र रह गयी।[1]

भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण मोड़ उस समय आया जब 1915 में महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह आन्दोलन का सफल प्रयोग कर भारत लौटे। गांधी जी ने स्पष्ट राय प्रकट की कि ''भारत की दुर्दशा और दरिद्रता को दूर करने के लिये भारतीय गांवों का पुनरोद्वार भारतीय ढंग से करना होगा। भारतीय गांवो को आत्मनिर्भर, स्वाशासित एवं स्वावलम्बी गणतंत्र के रूप में पुनः विकसित करना होगा। ऐसी व्यवस्था लागू करनी होगी ताकि गांव की आवश्यकता की सब वस्तुओं का उत्पादन व ग्राम के सर्वांग्रीण विकास के लिए समुचित तथा उनके मनोरंजन की सुविधाओं से लेकर दैनिक जीवन में सम्बद्ध सभी समस्याओं का समाधान गांव में ही सुलम हो, यही सच्चे अर्थो में ''स्वराज्य होगा।''[2]

महात्मागांधी अपनी विकेन्द्रित शासन व्यवस्था रामराज्य, स्वराज्य और पंचायती राज्य को लगभग समानार्थी रूप में मानते थे। उनकी मान्यता थी कि आजादी से तात्पर्य एक ऐसा राज्य सेवा से है जो सामाजिक न्याय, राजनीतिक और आर्थिक समानता उपलब्ध करा सके, जिससे ग्राम जीवन के विवाद पंच फैसले द्वारा निपटाये जा सके। गांव से सम्बद्ध विषय जैसे कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, सफाई आदि कार्यो का संचालन ग्राम संगठन अर्थात ग्राम पंचायत द्वारा हो। पंचायत एक सहयोत्मक लोकतांत्रिक व्यवस्था है जहां प्रत्येक ''सबके लिए'' और सब ''प्रत्येक के लिए'' की जीवन पद्धति पर कार्य संचालित करते हैं।[3]

महत्मागांधी जी ने सन् 1936–37 में ही कहना शुरू कर दिया था कि –

''यदि आदर्श गांव का मेरा स्वप्न पूरा हो जाय तो भारत में सात लाख गांवो में से हर एक गांव समृद्ध प्रजातंत्र बन जायगा। उस प्रजातंत्र का कोई व्यक्ति अनपढ़ न रहेगा। काम के अभाव में कोई बेकार न रहेगा, बल्कि किसी न किसी कमाउ धंधो में लगा होगा। हर आदमी को पौष्टिक चीजे खाने को, रहने को अच्छे हवादार मकान और तन ढकने को काफी खादी मिलेगी। इसी प्रकार हरके देहाती को सफाई और आरोग्य के नियम मालूम होंगे और वह उनका पालन किया करेगा। ऐसे गांवो की विभिन्न प्रकार की और उत्तरोत्तर बढ़ती हुई आवश्यकताऐं होनी चाहिए जिन्हें वह स्वयं पूरा करेगा, अन्यथा उसकी गति रूक जाएगी।..........आजादी का अर्थ हिन्दुस्तान के आम लोगों की आजादी होना चाहिए। आजादी नीचे से होनी चाहिए। हरेक गांव में पंचायत राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। इसका मतलब यह है कि हरेक गांव को अपने

1. भारत शासन : (रिपोर्ट ऑफ दि कांग्रेस विलेज पंचायती कमेटी) हर्षदेव मालवीय 1959 पृ011
2. महात्मागांधी का समाजदर्शन : डॉ0 महादेव प्रसाद 1946 ।
3. महात्मागांधी का समाजवाद : डॉ0 पटटामिसीता रमैया पृ0 62। अनुवाद : जगतपति नन्दन चतुर्वेदी।

पांव पर खड़ा होना होगा।...........अपनी जरूरतें खुद पूरी कर लेनी होंगी ताकि वह अपना सारा कारोबार खुद चला सके।[1]

इस प्रकार आजादी के पूर्व ही 'पंचायती राज'' के महत्व की उद्घोषणा महात्मा गांधी ने सार्वजनिक रूप से कर दी थी। आजादी प्राप्त होने पर भावी सरकारों के लिए यह एक प्रकार से नीति निर्देश ही माना गया था। उस युग में गांव और गरीब जनता के लिए गांधी जी एक मात्र सर्वमान्य और सर्वप्रिय ''राजपुरूष'' थे। स्वतंत्र भारत में ''पंचायती राज'' को जीवंत करने के जब जब प्रयास किये गये तब तब गांधी जी के ''ग्रामस्वराज'' की चर्चा अवश्य हुई। क्योंकि उनके ''ग्रामस्वराज'' का सीधा अर्थ है कि ''ग्राम समुदाय को मजबूत, स्वावलम्बी एवं सहभागी बनाना।'' भारत के नवनिर्माताओं ने सर्वमान्य विचार के रूप में यह निष्कर्ष स्वीकार कर लिया था कि भारत के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए – ''पंचायती राज'' प्रणाली के मार्फत ही सीधा और सुगम मार्ग – निकाला जा सकता था।[2]

---

1. ''बापूकथा'' – भाग – 1 हरिभाऊ उपाध्याय पृ0 151 ।
2. पंचायती राज : संकल्पना और वर्तमान स्वरूप : विजय रंजन दत्तः पृ0 1।

# पंचायती राज : संवैधानिक स्वरूप -

पंचायतों की संकल्पना "पूर्ण स्वराज" "ग्राम स्वराज" के दर्शन का ही एक अंग था। महात्मा गांधी तथा पं0 जवाहर लाल नेहरू भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौर में इन संकल्पनाओं में सच्ची देशभक्ति और देश के विकास की बात सोचते थे। स्पष्ट है कि संविधान के बीजारोपण के समय ग्राम पंचायतों की संकल्पना कोई केवल प्राचीन ऐतिहासिक संकल्पना को नया रूप देना मात्र नहीं था। यह तो स्वतंत्रता के लिए भारत के संग्राम की विरासत और इसकी अपनी परम्पराओं तथा संकल्पों को स्वरूप प्रदान करने की निष्ठा थी।

भारत का संविधान, प्रजातांत्रिक स्वशासन और विधिनियम के एक सुव्यवस्थित दस्तावेज के रूप में भारत की जनता के नाम से बनाया, अपनाया तथा घोषित किया गया था। इसमें "स्वराज" के दर्शन में निष्ठा रखने वाली पुनर्जाग्रत भारतीय जनता की प्रजातांत्रिक आस्था और संकल्प को न केवल विदेशी साम्राज्य वादी सत्ता की उपनिवेशी दासता से मुक्ति दिलाने के अर्थ में बल्कि एक जीवनचर्या तथा सामाजिक आचरण के रूप में स्वशासन और व्यक्ति के बुनियादी अधिकारों तथा सम्मान की रक्षा के अर्थ में बनाए रखा गया है। हमारे संविधान का ढांचा प्रजातंत्र और नियमों के ताने बाने में बुना गया है।

भारत के संविधान में द्विसदनीय सांसद के रूप में और मंत्री परिषद को संयुक्त रूप में लोक सभा के प्रति उत्तरदायी बनाकर राष्ट्रीय स्तर पर गणतांत्रिक प्रजातंत्र की व्यवस्था की गई है। संसदीय संस्थाओं का वही मूल सिद्धान्त राज्यों के स्तर पर भी दोहराया गया जो कि भारत संघ के अंग हैं। भारत के संसदीय प्रजातंत्र के अर्धसंघीय ढांचे में पंचायती राज संस्थाओं और उनके गठन को संविधान के अनुच्छेद 40 में सामान्य निर्देश के रूप में निम्नलिखित अंकित किया गया है।

"सरकार ग्राम पंचायतों को संगठित करने के लिए कदम उठाएगी और उन्हें जो भी आवश्यक हो, ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार देगी जिससे वे स्वशासन की इकाइयों के रूप में काम कर सके।" [1]

## श्री बलबन्त राय मेहता समिति :-

देश के ग्रामीण क्षेत्रों की विकास गति में तीव्रता लाने एवं सामुदायिक विकास कार्यक्रम व राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं को आशानुकूल सफलता न मिलने के कारणों की जांच पड़ताल करने के बाद, आवश्यक मार्ग दर्शन करने की दिशा में योजना आयोग द्वारा योजना कार्यक्रम पर एक समिति गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री बलवन्तराय मेहता की अध्यक्षता में गठित की गई, जिसे बाद में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण "पंचायती राज" का नाम दिया गया। मेहता अध्ययन दल द्वारा सन 1957 को अपना प्रतिवेदन प्रकाशित किया गया। जनवरी 12,1958 को राष्ट्रीय विकास समिति, जिसके अध्यक्ष तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व0 पं0 जवाहर लाल नेहरू थे के द्वारा मेहता अध्ययन दल के द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन एवं उसकी अनुशंसाये स्वीकार कर ली गई।[2]

मेहता समिति की अनुशंसाये को राजस्थान आन्ध्रप्रदेश के साथ अन्य राज्यों में सन् 1959 से 1962 के बीच लागू किया गया। फलस्वरूप देश के ग्रामीण स्थानीय स्वशासन के तीन रूप सामने आए, प्रथम, महाराष्ट्र और गुजरात जहां कि जिला इकाई को शक्ति प्रदान की गई। द्वितीय राजस्थान और आंध्रप्रदेश, उत्तरप्रदेश,

---

1. पंचायती राज्य व्यवस्था : देवेन्द्र उपाध्याय पृ0 47 – 48 ।
2. पंचायती राज इन इंडिया : राजेश्वरदयाल पृ0 61 । मेटोपोलेटिन बुकडिपो लकीप्रेस, दिल्ली।

विहार, मध्यप्रदेश आदि जहां शक्ति का केन्द्र खण्ड अथवा तालुक स्तर पर रखा गया। तृतीय – मद्रास और मैसूर जहां पंचायतराज संरचना कुछ भिन्न रहीं। यहाँ यद्यपि शक्ति सौंपी जाने वाली संस्था विकास खण्ड स्तरीय रही – इसकी पर्यवेक्षणकर्ता इकाई, ''डवलयमेन्ट बोर्ड'' को आकार में राजस्व जिले के लगभग आधा है, मुख्य रूप से सरकारी नियंत्रण में रहा।[1]

मेहता समिति की संस्तुतियों ने पंचायती राज व्यवस्था को अधिक सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व0 जवाहरलाल नेहरू ने 2 अक्टूबर 1959 को नागौर (राजस्थान) में एक रैली को संबोधित कर पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन करते हुए कहा था।

हम लोग अपने देश में लोकतंत्र अथवा पंचायती राज की आधारशिला रखने जा रहे हैं। यदि महात्मा गांधी आज अपने बीच होते तो कितने प्रफुल्लित होते। यह एक ऐतिहासिक कार्य है और इससे उनको बड़ी प्रफलता होती कि यह ऐतिहासिक कदम उनके जन्म दिवस पर उठाया गया।[2]

## अशोक मेहता समिति –

भारत सरकार ने दिसम्बर 12, 1977 में प्रस्ताव पारित कर देश में पंचायती राज से सम्बद्ध संस्थाओं के कार्यो का अध्ययन परीक्षण कर इन्हें देश के विकास और नागरिकों की अभिव्यक्ति का एक शक्तिशाली माध्यम बनाने की दृष्टि से सुप्रसिद्ध समाजवादी विचारक श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति गठित की। समिति का विचारणीय संदर्भित क्षेत्र काफी व्यापक था। जिसमें विकास प्रशासन और विकेन्द्रीकरण आयोजना मुख्य रूप से सम्मिलित किये गये थे। अशोक मेहता समिति द्वारा अगस्त 21, 1978 को प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया। समिति प्रतिवेदन 301 पृष्ठों में है और 135 महत्वपूर्ण अनुशंसाए हैं। अशोक मेहता समिति की सिफारिशों में विशेष उल्लेखनीय विन्दु है – प्रथम सर्व प्रचलित पंचायती राज के त्रिस्तरीय ढॉचे के स्थान पर द्वि स्तरीय ढांचा (जिला पंचायत और मंडल पंचायत) प्रस्तावित किया गया। दूसरे राजनैतिक दलों द्वारा पंचायतीराज संस्थाओं के निर्वाचन एवं कार्य प्रणाली में सक्रिय भाग लेने की अनुमति दी जाना प्रस्तावित किया गया।[3]

लेकिन राज्यों के मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन में अधिकांश राज्यों द्वारा अशोक मेहता समिति की अनुशंसाओं को लागू किये जाने के लिए सहमति नहीं दी।

इसके बाद योजना आयोग के भूतपूर्व सदस्य डॉ0 जी0वी0 के. राव की अध्यक्षता में 25 मार्च 1985 को 12 सदस्यीय समिति गठित हुई। इस समिति ने ''नीति नियोजन एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन'' हेतु जिले को प्राथमिक इकाई माने जाने की संस्तुति की। पंचायतों के नियमित चुनाव कराये जाने की भी समिति ने संस्तुति की। पंचायती राव संस्थाओं की व्यापक समीक्षा हेतु एक राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें डॉ0 एल0 एम0 सिंघनी की अध्यक्षता में जून 1986 में एक आठ सदस्यीय समिति गठित की गई। इस समिति ने गावों को पुनर्गठन करने का सुझाव दिया।

---

1. भारतीय राजनीति व्यवस्था : एस0पुरी पृ0 301 न्यू एकेडेमिक पब्लिकिंग कम्पनी हिन्दी प्रेस जालधंर।
2. पंचायत राज : संकल्पना और वर्तमान स्वरूप विजय रंजन दत्त : पृ0 2 ।
3. पंचायती राज इंस्टीट्यूटन्स एण्ड एनालाइसिस आफ अशोक मेहता कमेटी रिपोर्ट पृ0 17 वी0एस0 भार्गव।

वर्षों के अनुभवों और समीक्षा से यही निष्कर्ष निकला कि अधिकांश राज्यों में पंचायती राज व्यवस्था कमजोर और निष्प्रभावी हो गयी है। समय पर पंचायतों के चुनाव न कराने, मनमाने ढंग से पंचायतों को भंग करने कमजोर वर्गो को पर्याप्त प्रतिनिधित्व न मिलने वित्तीय संसाधनों का अपर्याप्त आवंटन जैसी अनेक समस्याओं के कारण ''पंचायतीराज'' प्रणाली अपनी स्वाभाविक और प्रभावी भूमिका नहीं निभा पा रही है।[1]

''पंचायती राज'' को तमाम समस्याओं से मुक्त कराने के लिए तथा जनता को अधिक से अधिक अधिकार दिलाने के लिए 15 मई, 1989 को संविधान (चौसठवां संशोधन) विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत करते हुए तत्काली प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने लोक सभा में कहाः–

''हमारे विधेयक का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि पंचायतों को सौंपी गई शक्तियां पंचायतों के पास ही रहें और इस व्यवस्था के बाहर न जायें। इसी प्रकार हमारे विधेयक का उद्देश्य सभी विकास एजेंसियों को पंचायती राज संस्थाओं के ढांचे के अंतर्गत लाने को सुनिश्चित करना और निर्वाचित प्रतिनिधियों के प्रति जबाव देह बनाना है। ऐसे दो बुनियादी कारण है जिनसे जिला तथा उपजिला स्तरों पर प्रशासन लोगो की आवश्यकताओं के प्रति उदासीन बन गया। पहला है जिला प्रशासन का अनेक एजेंसियों में बंट जाना तथा जिला स्तर पर बिना किसी एकल केन्द्र बिन्दु पर पर्याप्त तालमेल के इनका राज्य सरकारों के प्रति जाबव देह होना। दूसरा कारण है केन्द्रबिन्दु पर कार्यरत एक निर्वाचित सत्ता का अभाव। यह पंचायतों के चुनाव का एक घोषणा पत्र है। हम सबको इसके बारे में स्पष्ट होना चाहिए। यह घोषणापत्र भारत के लोगों के लिए है। जो प्रस्ताव हमने सदन के समक्ष रखे हैं वे वास्तव में हमारे प्रस्ताव नहीं हैं वे प्रस्ताव भारत की जनता के प्रस्ताव हैं। हमने पंचायती राज के बारे में पूरे देश में प्राप्त अबतक के अनुभव को अपना आधार बनाया है। [2]

तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व0 राजीव गांधी के कार्यकाल में 64वां संविधान संशोधन लोकसभा न 10 अगस्त 1989 को पारित कर दिया लेकिन राज्य सभा में अनुमोदन न हो सकने के कारण यह विधेयक लागू नहीं हो सका।

लोकसभा ने 20 दिसम्बर 1991 को पारित अपने प्रस्ताव के अनुसार विधेयक संसदीय समिति को भेज दिया। समिति ने 14 जुलाई 1992को लोकसभा में अपना प्रतिवेदन पेश किया। इसके वाद लोकसभा ने 22 दिसम्बर 1992 और राज्यसभा में 23 दिसम्बर 1992 को एकमत से संविधान (73वां संशोधन) विधेयक पारित कर दिया। समय की कमी के बावजूद 17 राज्यों ने इस विधेयक का समर्थन किया जिसके बाद विधेयक को राष्ट्रपति जी की सहमति के लिए भेजा गया। राष्ट्रपति जी ने 20 अप्रैल 1993 को विधेयक को अपनी सहमति प्रदान कर दी। इस प्रकार 24 अप्रैल 1993 से संविधान (73 वां संशोधन) अधिनियम 1992 लागू हो गया।

वास्तव में इस अधिनियम के लागू होने से संविधान के अनुच्छेद 40 की मूल भावना को कार्यरूप दिया गया। पंचायतीराज प्रणाली की सुदृढ़ नींव के रूप में ग्राम सभा की कल्पना की गयी है। ग्राम सभाऐं अपने अपने राज्य की विधानसभा द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए कार्यो का निष्पादन करेंगी।[3]

---

1. पंचायती राज व्यवस्था : देवेन्द्र उपाध्याय पृ0 8 ।
2. मई 1989 लोकसभा में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के भाषण का अंश.........।
3. पंचायती राज व्यवस्था : देवेन्द्र उपाध्याय पृ0 – 156।

# संविधान (तिहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम
# 1992

भारत गणराज्य के तैतालीसवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियम हो:

## संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ –

1. (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम संविधान (तिहत्तरवां संशोधन) अधिनियम 1992 है।

(2) यह उस तारीख को प्रस्तुत होगा जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियम करे।

नये भाग 9 का अतः स्थापना ।

2. संविधान के भाग 8 के पश्चात् निम्नलिखित भाग अंतः स्थापित किया जाएगा, अर्थात–

### भाग 9

### पंचायतें

243, परिभाषाऐं : इस भाग में जब तक कि संन्दर्भ में उपेक्षित न हो –

(क) 'जिला' से किसी राज्य का जिला अभिप्रेत है :

(ख) 'ग्रामसभा' से ग्राम स्तर पर पंचायत के क्षेत्र के भीतर समाविष्ट किसी ग्राम से सम्बन्धित मतदाता सूची में रजिस्ट्रीकृत व्यक्तियों से मिलकर बना निकाय अभिप्रेत है:

(ग) 'मध्यवर्ती स्तर' से ग्राम और जिला स्तरों के बीच का ऐसा स्तर अभिप्रेत है जो किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए लोक अधिसूचना द्वारा मध्यवर्ती स्तर विनिर्दिष्ट किया जाय।

(घ) 'पंचायत' से ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अनुच्छेद 243 ख के अधीन गठित स्वायत्त शासन की कोई संस्था (चाहे वह किसी भी नाम से ज्ञात हो) अभिप्रेत है:

(ङ) 'पंचायत क्षेत्र पंचायत का प्रदेशिक क्षेत्र अभिप्रेत है:

(च) 'जनसंख्या' से ऐसी अन्तिम पूर्ववर्ती जनगणना में अभिनिश्चत की गयी जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गये है:

(छ) 'ग्राम' से राज्यपाल द्वारा इस भाग के प्रयोजनों के लिए लोक अधिसूचना द्वारा ग्राम के रूप में विनिर्दिष्ट ग्राम अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत इस प्रकार विनिर्दिष्ट ग्रामों का समूह भी है।

ग्रामसभा :–

243क ग्रामसभा ग्राम स्तर पर ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कृत्यों का निर्वहन कर सकेगी जो राज्य के विधान मण्डल द्वारा, विधि द्वारा उपबन्धित किया जाय।

## पंचायतों का गठन –

243ख. (i) प्रत्येक राज्य में ग्राम, मध्यवर्ती और जिला स्तर पर इस भाग के उपबन्धों के अनुसार पंचायतों को गठन किया जायेगा।

(2) खण्ड (i) में किसी बात के होते हुए भी, मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत को उस राज्य में गठन नहीं किया जायेगा जिसकी जनसंख्या बीस लाख से अधिक है।

## पंचायतों की संरचना –

243ग. (i) इस भाग के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा पंचायतों की संरचना की बाबत उपबन्ध कर सकेगा।

परन्तु किसी भी स्तर पर पंचायत के प्रादेशिक क्षेत्र की जनसंख्या और ऐसी पंचायत में निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की संख्या के बीच अनुपात समस्त राज्य में, यथासाध्य, एक ही होगा।

(2) ग्राम स्तर पर, मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत के सभी स्थान पंचायत क्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने गये व्यक्तियों से भरे जायेंगे और इस प्रयोजन के लिए प्रत्येक पंचायत क्षेत्र ऐसी रीति से प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित किया जाएगा कि प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या और उसको आवंटित स्थानों की संख्या के बीच अनुपात समस्त पंचायत क्षेत्र में यथासाध्य एक ही हो।

(3) जिला स्तर पर पंचायतों के स्थान ऐसी रीति से निर्वाचन द्वारा भरे जायेंगे जो राज्य विधान मण्डल, विधि द्वारा उपबन्धित करे।

(4) राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा –

(क) ग्राम स्तर पर पंचायतों के अध्यक्षों का मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतों में या ऐसे राज्य की दशा में जहां मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतें नहीं है, जिला स्तर पर पंचायतों में

(ख) मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतों के अध्यक्षों का जिला स्तर पर पंचायतों में

(ग) लोकसभा के सदस्यों और राज्य की विधान सभा के सदस्यों के जो ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनमें ग्राम स्तर से भिन्न स्तर पर कोई पंचायत क्षेत्र पूर्णतः या भागतः समाविष्ट है, ऐसी पंचायत में:

(घ) राज्य सभा के सदस्यों और राज्य की विधान परिषद् के सदस्यों के जहां वे–

(i) मध्यवर्ती स्तर पर किसी पंचायत क्षेत्र के भीतर निर्वाचकों के रूप में रजिस्ट्रीकृत है मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत में,

(ii) जिला स्तर पर किसी पंचायत क्षेत्र के भीतर निर्वाचकों के रूप में रजिस्ट्रीकृत है, जिला स्तर पर पंचायत में,

प्रतिनिधित्व करने के लिए उपबन्ध कर सकेगा।

(5) किसी पंचायत के अध्यक्ष और पंचायत के ऐसे अन्य सदस्यों को पंचायतों के अधिवेशनों में मत देने का अधिकार होगा, जो पंचायत क्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से, चाहे प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा या अन्यथा चुने गये हैं।

(6) (क) ग्राम स्तर पर किसी पंचायत के अध्यक्ष का निर्वाचन ऐसी रीति से जो राज्य के विधान मण्डल द्वारा उपबन्धित की जाय किया जायगा, और

(7) मध्यवर्ती स्तर या जिला स्तर पर किसी पंचायत का अध्यक्ष, उसके निर्वाचित सदस्यों द्वारा अपने में से चुना जायेगा।

## स्थानों का आरक्षण

243 घ. (1) प्रत्येक पंचायत में –

(क) अनुसूचित जातियों, और

(ख) अनुसूचित जनजातियों

के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे और इस प्रकार आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस पंचायत से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे गये स्थानों की कुल संख्या से यथाशक्य वही होगा जो उस पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जातियों का अथवा उस पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या का अनुपात उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या से है और ऐसे स्थान किसी पंचायत में भिन्न भिन्न निर्वाचन क्षेत्रों को चक्रानुक्रम से आवंटित किये जा सकेंगे।

(2) खण्ड (1) के अधीन आरक्षित स्थानों की कुल संख्या के एक तिहाई से अन्यून स्थान, यथास्थिति, अनुसूचित जातियों का अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे।

(3) प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के एक तिहाई से अन्यून स्थान (जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या भी है) स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे और ऐसे स्थान किसी पंचायत में भिन्न भिन्न निर्वाचन क्षेत्रों को चक्रानुक्रम से आवंटित किये जा सकेंगे।

(4) ग्राम या किसी अन्य स्तर पर पंचायतों में अध्यक्षों का पद अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और स्त्रियों के लिए ऐसी रीति से आरक्षित रहेगा, जैसी राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा उपबन्धित करे–

परन्तु किसी राज्य में प्रत्येक स्तर पर पंचायतों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित अध्यक्षों के पदों की संख्या का अनुपात, प्रत्येक स्तर पर उन पंचायतों में ऐसे पदों की कुल संख्या से यथाशक्य वही होगा, जो उस राज्य की अनुसूचित जातियों की अथवा राज्य की अनुसूचिज जनजातियों की जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की कुल जनसंख्या से है:

परन्तु यह और कि प्रत्येक स्तर पर पंचायतों में अध्यक्षों के पदों की कुल संख्या के एक एक तिहाई से अन्यून पद स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे।

परन्तु यह भी कि इस खण्ड के अधीन आरक्षित पदों की संख्या प्रत्येक स्तर पर भिन्न भिन्न पंचायतों का चक्रानुक्रम से आवंटित की जायेगी।

(5) खण्ड (1) और खण्ड (2) के अधीन स्थानों का आरक्षण और खण्ड (4) के अधीन अध्यक्षों के पद के लिए आरक्षण (जो स्त्रियों के लिए आरक्षण से भिन्न है) अनुच्छेद 334 में विनिर्दिष्ट अवधि की समाप्ति पर प्रभावी नहीं रहेगा।

(6) इस भाग की कोई बात किसी राज्य के विधान मण्डल को किसी स्तर पर किसी पंचायत में पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में स्थानों के या पंचायतों में अध्यक्षों के पद के आरक्षण के लिए कोई उपबन्ध करने से निवारित नहीं करेगी।

## पंचायतों का कार्यकाल, आदि

243 ड. (1) प्रत्येक पंचायत, यदि तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन उसे पहले ही विघटित नहीं कर दिया जाता है तो, अपने प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक, न कि उससे अधिक बनी रहेगी।

(2) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि का कोई संशोधन किसी स्तर पर ऐसी पंचायत का, जो ऐसे संशोधन के ठीक पूर्व कार्य कर रही है, तब तक विघटन नहीं करेगा, जब तक खण्ड (1) में विनिर्दिष्ट उसके कार्यकाल का अवसान नहीं हो पाता।

(3) किसी पंचायत का गठन करने के लिए निर्वाचन :

(क) खण्ड (1) में विनिर्दिष्ट उसके कार्यकाल के अवसान के पूर्व:

(ख) उसके विघटन की तारीख से छः मास की अवधि के अवसान के पूर्व पूरा किया जायेगा।

परन्तु जहाँ यह शेष अवधि के लिए कोई विघटित पंचायत बनी रहती छः मास से कम है, वहाँ ऐसी अवधि के लिए उस पंचायत का गठन करने के लिए इस खण्ड के अधीन कोई निर्वाचन कराना आवश्यक नहीं होगा।

(4) पंचायत के कार्यकाल के अवसान के पूर्व किसी पंचायत के विघटन पर गठित की गयी पंचायत उस अवधि के केवल शेष भाग के लिए बनी रहेगी, जिस अवधि तक विघटित पंचायत खण्ड (1) के अधीन बनी रहती, यदि वह इस प्रकार विघटित नहीं की जाती।

## सदस्यता के लिए निरर्हताएँ

243च. (1) कोई व्यक्ति किसी पंचायत का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य बनने के लिए निरर्हित होगा :

(क) यदि वह सम्बन्धित राज्य के विधान मण्डल के निर्वाचनों के प्रयोजनों के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निरर्हित कर दिया जाता है:

परन्तु कोई व्यक्ति इस आधार पर निरर्हित नहीं होगा कि उसकी आयु पचीस वर्ष से कम है, यदि उसने इक्कीस वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है:

(ख) यदि वह राज्य के विधान मण्डल द्वारा बनायी गयी किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निर्हित कर दिया जाता है।

(2) यदि यह प्रश्न उठता है कि किसी पंचायत का कोई सदस्य खण्ड (1) में वर्णित किन्हीं निरर्हिताओं से ग्रस्त हो गया है या नहीं, तो यह प्रश्न ऐसे प्राधिकारी को, और ऐसी रीति से जैसा राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा उपबन्धित करे विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जायेगा।

## पंचायत की शक्तियाँ, प्राधिकार और उत्तरदायित्व

243 छ. इस संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा पंचायतों को ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान कर सकेगा जो वह उन्हें स्वायत्त शासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक समझे और ऐसी विधि में पंचायतों को उपयुक्त स्तर पर ऐसी शर्तो के अधीन रहते हुए जैसी उसमें विनिर्दिष्ट की जाय, निम्नलिखित के सम्बन्ध में शक्तियों और उत्तरदायित्व न्यागत करने के लिए उपबन्ध किये जा सकेंगे:

(क) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाऐं तैयार करना

(ख) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की स्कीमों को, जो उन्हें सौंपी जायें जिसके अन्तर्गत व स्कीमें भी हैं जो ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के सम्बन्ध में हैं, क्रियान्वित करना।

## पंचायतों द्वारा कर अधिरोपित करने की शक्ति और पंचायतों की निधियाँ

243 ज. राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा :

(क) ऐसी प्रक्रिया के अनुसार और ऐसी सीमाओं के अधीन रहते हुए, ऐसे कर, शुल्क,

पथकर और फीसें उद्गृहीत, संगृहीत और विनियोजित करने के लिए किसी पंचायत को प्राधिकृत कर सकेगा।

(ख) ऐसे प्रयोजनों के लिए और ऐसी शर्तो तथा सीमाओं के अधीन रहते हुए, राज्य सरकार द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत ऐसे कर, शुल्क, पथकर और फीसें किसी पंचायत को समनुदेशित कर सकेगा

(ग) पंचायतों के लिए राज्य की संचित निधि में से ऐसे सहायता-अनुदान देने के लिए उपवन्ध कर सकेगा और

(घ) पंचायतों द्वारा या उनकी ओर से प्राप्त सभी धनों के जमा करने के लिए ऐसी निधियों का गठन तथा ऐसी निधियों में से धन का प्रत्याहरण करने के लिए भी उपबन्ध कर सकेगा, जो विधि में विनिर्दिष्ट किये जायें या की जायें।

## वित्तीय स्थिति के पुनर्विलोकन के लिए वित्त आयोग का गठन –

243 झ. (1) राज्य का राज्यपाल, संविधान (तिहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रारम्भ से एक वर्ष के भीतर यथाशक्य शीघ्र, और उसके पश्चात् प्रत्येक पाचवें वर्ष के अवसान पर पंचायतों की वित्तीय स्थिति का पुनर्विलोकन करने के लिय और,

(क) उन सिद्धान्तों की बाबत जो निम्नलिखित को शासित करेंगे अर्थात् –

(i) राज्य द्वारा उद्ग्रहणीय ऐसे करों, शुल्कों, पथकरों और फीसों के शुद्ध आगमों का राज्य और पंचायतों के बीच वितरण जो इस भाग के अधीन उनके बीच वितरित किये जा सकेंगे तथा पंचायतों के बीच सभी स्तरों पर ऐसे आगमों के अपने अपने अंश का आवंटन –

(ii) ऐसे करों, शुल्कें, पथकरों और फीसों का अवधारण जो पंचायतों को समनुदेशित किये जा सकेंगे या उसके द्वारा विनियोजित किये जा सकेंगे।

(iii) राज्य की संचित निधि में से पंचायतों को सहायता अनुदान :

(ख) पंचायतों की वित्तीय स्थिति को सुधारने के लिए आवश्यक अध्युपाय :

(ग) कोई अन्य विषय, जो राज्यपाल द्वारा पंचायतों के ठोस वित्तपोषण के हित में वित्त आयोग का निर्दिष्ट किया जाय।

राज्यपाल की सिफारिशें करने के लिए एक वित्त आयोग का गठन करेगा।

(2) राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा, आयोग की संरचना, अर्हता, जो आयोग के सदस्यों के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित होगी, और रीति, जिससे उनका चयन किया जायगा, का उपबन्ध कर सकेगा।

(3) आयोग अपनी प्रक्रिया अवधारित करेगा और उसे अपने कृत्यों के पालन के लिए ऐसी शक्तियाँ होंगी जो राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा उसे प्रदान करे।

(4) राज्यपाल इस अनुच्छेद के अधीन आयोग द्वारा की गयी प्रत्येक सिफारिश और उसके वारे में की गयी कार्रवाई का स्पष्टीकारक ज्ञापन राज्य के विधान मण्डल के समक्ष रखवायेगा।

## पंचायतों के लेखाओं की संपरीक्षा

243ञ. राज्य का विधान मण्डल, पंचायतों द्वारा लेखे बनाये रखने और ऐसे लेखाओ की संपरीक्षा करने की बाबत, विधि द्वारा, उपबन्ध कर सकेगा।

## पंचायतों के लिए निर्वाचन

243ट. (1) पंचायतों के लिए कराये जाने वाले सभी निर्वाचनों के लिए निर्वाचक नामावली तैयार कराने का और उन सभी निर्वाचकों के संचालन का अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण एक राज्य निर्वाचन आयोग में निहित होगा जिसमें राज्यपाल द्वारा नियुक्त किया गया एक राज्य निर्वाचन आयुक्त होगा।

(2) राज्य के विधान मण्डल द्वारा बनायी गयी किसी विधि के अधीन रहते हुए राज्य निर्वाचन आयुक्त की सेवा की शर्ते और पदावधि ऐसी होगी जो राज्यपाल नियमों द्वारा अवधारित करें :

परन्तु राज्य निर्वाचन आयुक्त को उसके पद से उसी रीति से और उन्हीं आधारों पर ही हटाया जायगा उस रीति से और जिन आधारों पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाया जाता है, अन्यथा नहीं, और राज्य निर्वाचन आयुक्त की सेवा की शर्तो में उसकी नियुक्ति के पश्चात उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जायेगा।

(3) जब राज्य निर्वाचन आयोग ऐसा अनुरोध करे तब किसी राज्य का राज्यपाल राज्य निर्वाचन आयोग को उतने कर्मचारीवृन्द उपलब्ध करायगा जितने खण्ड (1) द्वारा राज्य निर्वाचन आयोग को उसे सौंपे गये कृत्य के निर्वहन के लिए आवश्यक हों।

(4) इस संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, राज्य का विधान मण्डल, विधि द्वारा पंचायतों के निर्वाचनों से सम्बन्धित या सम्पृक्त सभी विषयों के बाबत उपबन्ध बना सकेगा।

## संघ राज्य क्षेत्रों को लागू होना

342ठ. इस भाग के उपबन्ध संघ राज्य क्षेत्रों को लागू होंगे और किसी संघ राज्य क्षेत्र के उनके लागू होने में उनका यह प्रभाव होगा मानो राज्य के राज्यपाल के प्रतिनिर्दिश अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त किये गये संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक के प्रतिनिर्देश हैं और राज्य के विधान मण्डल या विधान सभा के प्रतिनिर्देश, उन संघ राज्यक्षेत्र के सम्बन्ध में, जिनमें विधान सभा है, उस विधान सभा के प्रतिनिर्देश हैं,

परन्तु राष्ट्रपति, लोक अधिसूचना द्वारा यह निर्देश दे सकेगा कि इस भाग के उपबन्ध किसी संघ राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों और उपान्तरणों के अधीन रहते हुए लागू होंगे जो वह अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे।

## भाग का कतिपय क्षेत्रों को लागू न होना

442ड. (1) इस भाग की कोई बात अनुच्छेद 244 के खण्ड (1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों और खण्ड (2) में निर्दिष्ट जनजाति क्षेत्रों को लागू नहीं होगी।

(3) इस भाग की बात निम्नलिखित को लागू नहीं होगी :

(क) नागालैण्ड, मेघालय और मिजोरम के राज्य :

(ख) मणिपुर राज्य में ऐसे पर्वतीय क्षेत्र जिनके लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन जिला परिषद् विद्यमान है।

(3) इस भाग की :

(क) कोई बात, जिला स्तर पर पंचायतों के सम्बन्ध में, पश्चिम बंगाल राज्य के दार्जिलिंग जिले के ऐसे पर्वतीय क्षेत्रों को लागू नहीं होगी जिनके लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन दार्जिलिंग गोरखा पर्वतीय परिषद् विद्यमान है।

(ख) किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जायगा कि वह ऐसी विधि के अधीन गठित दार्जिलिंग गोरखा परिषद् के कृत्यों और शक्तियों पर प्रभाव डालती है।

(4) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी :

(क) खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में निर्दिष्ट किसी राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा इस भाग का विस्तार, खण्ड (1) में निर्दिष्ट क्षेत्रों, यदि कोई है, के सिवाय, उस राज्य पर कर सकेगा। यदि उस राज्य की विधान सभा इस आशय का एक संकल्प उस सदन की कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उस सदन के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर देती है:

(ख) संसद, विधि द्वारा इस भाग के उपबन्धों का विस्तार खण्ड (1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों और जनजाति क्षेत्रों पर ऐसे अपवादों और उपान्तरणों के अधीन रहते हुए कर सकेगीं, जो ऐसी विधि में विनिर्निष्ट किये जायें और ऐसी कोई विधि अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जायेगी।

## विद्यमान विधियों और पंचायतों का बना रहना

243ढ. इस भाग में किसी बात के होते हुए भी, संविधान (तिहत्तरवां संशोधन) अधिनियम 1992 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व राज्य में प्रवृत्त पंचायतों से सम्बन्धित किसी विधि का कोई उपबन्ध, जो इस भाग के उपबन्धों से असंगत है, तब तक जब तक कि सक्षम विधान मण्डल द्वारा या अन्य सक्षम प्राधिकारों द्वारा उसे संशोधित या निरसित नहीं कर दिया जाता या जब तक ऐसे प्रारम्भ से एक वर्ष का अवसान नहीं हो जाता इसमें से जो भी पूर्वतर हो, प्रवृत्त बना रहेगा।

परन्तु ऐसे प्रारम्भ के ठीक पूर्व विद्यमान सभी पंचायते अपने कार्यकाल की समाप्ति तक बनी रहेगी, यदि उन्हें उस राज्य की विधान सभा द्वारा या ऐसे राज्य की दष्शा में जिसमें विधान परिषद है, उस राज्य के विधान मण्डल के प्रत्येक सदन द्वारा पारित इस आशय के संकल्प द्वारा पहले ही विघटित नहीं कर दिया जाता।

## निर्वाचन सम्बन्धी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन

243 ण. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी :

(क) अनुच्छेद 233 ट. के अधीन बनायी गयी या बनाये जाने के लिए तात्पर्यित किसी ऐसी विधि की, जो निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन या ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों को स्थानों के आवंटन से सम्बन्धित है, विधिमान्यता किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं की जायेगी।

(ख) किसी पंचायत के लिए कोई भी निर्वाचन, ऐसी निर्वाचन अर्जी पर ही प्रश्नगत किया जायेगा जो ऐसे प्राधिकारी को और ऐसी रीति से प्रस्तुत की गयी है जिसका राज्य के विधान मण्डल द्वारा बनायी गयी किसी विधि द्वारा या उसके अधीन उपबन्ध है, अन्यथा नहीं

## अनुच्छेद 280 का संशोधन

2क. संविधान के अनुच्छेद 280 के खण्ड (3) के उपखण्ड (ख) के पश्चात निम्नलिखित उपखण्ड अन्तः स्थापित किया जायेगा, अर्थात्:

(ख) ''राज्य के वित्त आयोग द्वारा की गयी सिफारिशों के आधार पर राज्य में पंचायतों के साधनों की अनुपूर्ति के लिए किसी राज्य की संचित निधि के संवर्धन के लिय आवश्यक अध्युपाय।''

## ग्यारहवीं अनुसूची का जोड़ा जाना

3. संविधान की दसवीं अनुसूची के पश्चात् निम्नलिखित अनुसूची जोड़ी जायेंगी, अर्थात्:

### 'ग्यारहवीं अनुसूची'

(अनुच्छेद 243छ)

1. कृषि, जिसके अन्तर्गत कृषि – विस्तार भी है।
2. भूमि–विकास, भूमि–सुधार का कार्यान्वयन, चकबन्दी और भूमि संरक्षण।
3. लघु सिंचाई, जल प्रबन्ध और अल आच्छादन विकास।
4. पशुपालन, दुग्ध–उद्योग और कुक्कुट पालन।
5. मात्सियिकी।
6. सामाजिक वनोद्योग और फार्म वनोद्योग।
7. लघु वन उत्पाद।
8. लघु उद्योग, जिनके अन्तर्गत खाद्य प्रसंस्करण उद्योग भी है।
9. खादी, ग्राम और कुटीर उद्योग।
10. ग्रामीण आवासन।
11. पेय जल।
12. ईधर और चारा।
13. सड़कें, पुलिया, पुल फेरी, जलमार्ग तथा संचार के अन्य साधन।
14. ग्रामीण विद्युतीकरण, जिसके अन्तर्गत विद्युत का वितरण भी है।
15. गैर–पारम्परिक ऊर्जा स्रोत।
16. गरीबी उपशमन कार्यक्रम।
17. शिक्षा, जिसके अन्तर्गत प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय भी हैं।
18. तकनीकि प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा।
19. प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा।
20. पुस्तकालय।
21. सांस्कृतिक क्रियाकलाप।
22. बाजार और मेले।
23. स्वास्थ्य और स्वच्छता, जिसके अन्तर्गत अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और औषधालय भी है।
24. परिवार कल्याण।
25. स्त्री और बाल विकास।
26. समाज कल्याण, जिसके अन्तर्गत विकलांगों और मानसिक रूप से मन्द व्यक्तियों का कल्याण भी है।
27. दुर्बल वर्गो का और विशिष्टतया अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनाजातियों का कल्याण।
28. सार्वजनिक वितरण प्रणाली।
29. सामुदायिक आस्तियों का अनुरक्षण। [1]

---

1. पंचायती राज : संकल्पना और वर्तमान स्वरूप : विजय रंजनदत्त पृ0 121 –

# नवीन पंचायती-राज प्रणाली की विशेषताऐं

यह विवेचना की जा चुकी है कि पंचायते लिखित इतिहास की शुरूआत से ही 'भारतीय गांवो की अत्यंत महत्वपूर्ण संस्था रही हैं। ग्रामीण पुनर्निर्माण में लोगो की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए तीनस्तरीय पंचायतीराज प्रणाली की विशेष भूमिका प्रारंभ हो गयी है। संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम 1992 के पारित होने से देश के संघीय लोकतांत्रिक ढांचे में एक नये युग का सूत्रपात हुआ है और पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ है।

इस अधिनियम के लागू होने के परिणाम स्वरूप जम्मू कश्मीर, राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली और उत्तराचंल को छोड़कर लगभग सभी राज्यों संघ राज्य क्षेत्रों ने अपने कानून बना लिए हैं। अरूणाचल प्रदेश, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली और पांडिचेरी को छोड़कर अन्य राज्यों/संघराज्य क्षेत्रों ने चुनाव कराना प्रारंभ हो गया है। परिणाम स्वरूप देश में ग्राम स्तर पर 2,32,278 पंचायतें, मध्यस्तर पर 6022 पंचायतें और जिलास्तर पर 535 पंचायतें गठित हो गई हैं। ये पंचायतें सभी स्तरों पर लगभग 29.2 लाख चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा संचालित की जा रही है। यह माना जा रहा है कि यह विश्व के किसी भी अन्य विकसित अथवा विकासशील देश की तुलना में सबसे बड़ा प्रतिनिधि आधार है। इस अधिनियम की मुख्य विशेषताओं को इन विन्दुओं में समझा जा सकता है।

(1) 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी राज्यों के लिए पंचायती राज की त्रिस्तरीय प्रणाली है।

(2) प्रत्येक 5 वर्ष में पंचायतों के नियमित चुनाव कराना अनिवार्य है।

(3) अनुसूचित जाति, अनुसूचिज जनजातियों के लिए आरक्षण करना है। महिलाओं के लिए आरक्षण जो एक तिहाई से कम न हो, करना निश्चित है।

(4) पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय शक्तियों के संबंध में सिफारिशें करने के लिए वित्त आयोग की स्थापना का प्राविधान है।

(5) पूरे जिले के लिए विकास योजना का मसौदा बनाने के लिए जिला आयोजना समिति का गठन करना है।

इसके अतिरिक्त 73वें संशोधन अधिनियम के अनुसार पंचायतीराज संस्थाओं को ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान किए गए हैं जो स्वशासन की संस्था के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक हैं। इनमें विशेष उल्लेखनीय हैं

(क) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनायें तैयार करना।

(ख) आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिये ऐसी योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए समुचित स्तर पर पंचायतों को शक्तियां और उत्तर दायित्व सौंपने का प्राविधान है।

## पंचायतीराज संस्थाओं की वित्तीय शक्तियाँ

संवधिान के अनुच्छेद 243 (ज) के आधार पर राज्य विधानमंडलों को निम्नलिखित विषयों पर कानून बनाने की शक्तियां दी गई हैं –

1. कुछ करों, महसूलों, मार्ग करों, शुल्क को लगाने वसूल करने और उपयोग करने लिये पंचायतों को प्राधिकृत करना।
2. राज्य सरकारों द्वारा लगाए और वसूल किए गए कुछ करों शुल्कों तथा मार्ग करों को पंचायतों को सौपना।
3. राज्य की संचित निधि से पंचायतों को सहायता अनुदान देने का प्रावधान करना।
4. पंचायतों द्वारा अथवा पंचायतों की ओर से प्राप्त की गई राशि जमा करने और उसमें से कुछ राशि निकालने के लिए कोष गठित करने का प्रावधान करना।

## राज्य वित्त आयोगों का गठन –

संविधान के अनुच्छेद 243 (झ) में पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा करने और अनुच्छेद 243 (ज) में उल्लखित प्रमुख मामलों को विनियमित करने के सिद्धान्तो के संबंध में राज्यपाल को सिफारिशें करने के लिए ''राज्य वित्त आयोग'' के गठन का प्रावधान किया गया है। अरूणाचल को छोड़कर बाकी सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों ने राज्य वित्त आयोगों का गठन कर लिया है। प्रायः सभी राज्य वित्त आयोगों ने अपनी अपनी राज्य सरकारों को रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है।

असम, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, त्रिपुरा और पश्चिमी बंगाल ने राज्यवित्त आयोगों की अधिकतर सिफारिशों को स्वीकर कर लिया है। अंडमान और निकाबार द्वीपसमूह, दादर और नवलहवेली, तथा दमन और दीव और लक्षद्वीप को राज्य वित्त आयोगों की अंतरीय रिपोटें मिल गई हैं। आन्ध्र प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, सिक्किम, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तरप्रदेश, असम, पंजाब, उड़ीसा और पश्चिमी बंगाल राज्यों ने राज्य वित्त आयोगों के दूसरे दौर का गठन कर लिया है। केन्द्र सरकार द्वारा चार संघ राज्य क्षेत्रों के लिए भी वित्त आयोग का गठन किया गया है।

## ग्यारहवां वित्त आयोग –

ग्यारहवें वित्त आयोग ने ग्रामीण स्थानीय निकायों के लिए 1600 करोड़ रूपए प्रति वर्ष की सिफारिश की थीं कुल अनुदान में से 197.06 करोड़ रूपए पंचायतों के वित्तपोषण पर डाटाबेस के विकास के लिए और 98.61 करोड़ रूपय की राशि पंचायतों के लेखों के रखरखाव के लिए निर्धारित किए थे।

आयोग ने यह भी सिफारिश की थी कि जहां पर निर्वाचित स्थानीय निकाय अस्तित्व में नहीं है, वहां केन्द्र सरकार वर्ष 2000–05 की अविध के दौरान असामाग्य आधार पर ट्रस्ट के रूप में स्थानीय निकायों की निधियों को अपने पास रखेगी। इसके अलावा आयोग ने यह भी सिफारिश की थी कि स्थानीय निकायों के लेखों की ऑडिट का कार्य नियंत्रण महालेखा परीक्षण (सी.एण्ड ए.जी.) को सौंपा जाए। इस प्रयोजनार्थ स्थानीय निकायों द्वारा कुल खर्च की जाने वाली राशि का 1/2 सी0एण्ड एजी के पास रख लिया जाएगा। पंचायतों के लेखों की आडिट से संबंधित सी एण्ड एजी की रिपोर्ट को लोक लेखासमिति की भांति गठित की गई राज्य विधान मण्डल की समिति को रखा जाना चाहिए।

वित्त मंत्रालय राज्यों को ग्यारवें वित्त आयोग (ई एफ सी) द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर निधियां रिलीज करता है। 2000–01 के लिये राज्यों को ''ऑन एकाउट'' आधार पर

आवंटित अनुदान का 50 प्रतिशत तक अर्थात 57,186 लाख रूप का तदर्थ अनुदान रिलीज किया गया था। 2002–2003 के दौरान (4 दिसम्बर 2002 तक) 3,36,822 लाख रूपय की राशि रिलीज की गई है।[1]

---

1. वार्षिक रिपोर्ट – 2002 – 2003
   भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय।
   अध्याय 1 पृ0 2 ।

# सफल पंचायती राज की कसौटियाँ

संविधान के 73 वें संशोधन के अनुरूप राज्यों के पंचायत अधिनियम सभी जगह बन गए या संशोधित हो गये हैं। पंचायती राज का ढांचा अब तैयार है। कार्य भी शुरू हो गए हैं कहीं कुछ अधिक, कहीं कम कहीं अपेक्षाकृत संतोषजनक कहीं कुछ शीथिल है। मगर गांवो के पुनर्निर्माण की यात्रा प्रारंभ हो चुकी है।

अब तो प्रश्न यही रह गया है कि हम पंचायतों को किस तरह चलाऐ ताकि वे विकास और प्रशासन के वाहक बन सकें। वे अपने लक्ष्य तक पहुंच सकें और अपने को स्वशासन की इकाइयों के रूप में प्रतिस्थापित कर सके जिससे गांव में समृद्धि आए, लोग शिक्षित हों, आधुनिक तकनीकें वहां पहुंचे, लोग एकता के सूत्र में बंधे। उनमें आत्मनिर्भरता आए और वे आत्म सम्मान के साथ जीवन बिता सकें पंचायती राज व्यवस्था का यही मर्म है।

संविधान के 73वें संशोधन से तथा तदनुरूप बनाये गये राज्य सरकारों के अधिनियमों द्वारा यह निश्चित हो चुका है कि पंचायतों को इसमें अपनी भूमिका निभानी है। पंचायते ऐसा तभी कर सकतीं हैं जब वे सचेत हों, गतिशील हों, सशक्त हों।

इसके क्रियान्वयन के लिए पांच तत्वों पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करना है।

1. सहभागिता
2. सामाजिक सकता
3. आर्थिक विकास
4. पारदर्शिता
5. उचित शिक्षण – प्रशिक्षण

## 1. सहभागिता –

सहभागिता पंचायत प्रणाली की मूल संचालन शक्ति है। पंचायत किसी खास व्यक्ति, समूह, जाति या वर्ग के लिए नहीं बनायी जाती है। वह सम्पूर्ण गांव की संस्था होती है और उसके कार्यकलाप सबके हित में सबके द्वारा होने हैं। अब तक गांव का प्रशासन सरकार के माध्यम से चलता रहा है। गांव के कुछ गिने चुने हुए व्यक्ति प्रशासन में थोड़ा बहुत भाग लेते रहे हैं। 73वें संविधान संशोधन ने प्रशासन के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा कि गांव के सभी प्रशासनिक क्रियाकलापों में सबकी भागीदारी होगी।

इसीलिए पंचायत के जो संचालक चुने जाते हैं उनके लिए आवश्यक है कि वे समाज के सभी लोगों धनी और गरीब, काश्तकार और मजदूर, स्त्री और पुरूष, सभी धर्मो और जातियों के लोगों का समान रूप से सहयोग प्राप्त करने में अपनी कुशलता प्रदर्शित करें।

संविधान के अनुच्छेद 243 (घ) में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, स्त्रियों और राज्यों के इच्छानुसार अन्य पिछड़े वर्गो के लिए पंचायतों के पदों में जो आरक्षण के प्रावधान हैं, उनके पीछे यही दर्शन है कि समाज के सभी लोगों को विशेषतः जो अनेक सांस्कृतिक ऐतिहासिक कारणों से उपेक्षित रह गए हैं उन्हें समाज के विकास में अपनी भागीदारी निभाने का पूरा अवसर मिल सके। जरूरत अब यह है कि यह काम केवल एक औपचारिकता पूरी करने जैसा न हो बल्कि इसे प्रतिबद्धता के साथ मूलरूप दिया जाए। गांव के सभी लोग बैठकर अपनी समस्याओं पर विचार करें और उनका हल ढूंढे। यही सबकी सहभागिता है।

## 2. सामाजिक एकता

सहभागिता और सामाजिक एकता आपस में जुड़ी हुई हैं। सहभागिता को मूर्तरूप तभी दिया जा सकता जब सामाजिक एकता की मानसिकता विकसित हो। यदि बैठकों में निर्णय पुरूष लें और स्त्रियां एक कौने में बैठी रहे, यदि ऊँचे नीचे की छाया बनी रहे और सभी बिरादरी के लोग एक ही आसन पर नहीं बैठे यदि बड़े किसानों के समक्ष मजदूर अपना मुंह ही नहीं खोले तो सहभागिता कैसे बढ़ेगी ? सामाजिक समता नहीं रहने पर लोग वर्गों में बंटे रहेंगे और पंचायत के संचालन में सबका सहयोग मिलना असम्भव हो जाएगा। एक बटा टूटा गांव कभी उन्नत नहीं हो सकता। गांव का एक रहना, सबके लिए बीच अपनत्व होना, विकास की अनिवार्य शर्त है। चुंकि सदियों से व्याप्त तमाम विसंगतियों विषमताओं तथा रूढ़ियों के कारण समाज असमान्य के परिवेश में रहता रहा है, इसलिए सामाजिक समता लाने के लिए भरपूर प्रयास करना है। इसका दायित्व सरकार प्रबुद्धवर्ग, सामाजिक कार्यकर्ताओं, स्वयं सेवी संस्थाओं के साथ साथ मीडिया पर समान रूप से हैं।

## 3. आर्थिक विकास

पंचायती राज के नये अस्तित्व का विशेष महत्वपूर्ण पक्ष ग्राम विकास का है। विकास के वातावरण में ही सहभागिता और समानता पनप सकती है। यदि गांव आर्थिक दृष्टि से विपन्न रह गए तो सहभागिता और समता के लिए ऊर्जा कहां से आएगी?

बेरोजगारी, गरीबी, असहाय स्थिति आदमी के अंदर सुलगती हुई वह आग है जो सभी मर्यादाओं को भस्म कर देती है ?

गांव में बहुत सारे लोग बेकार हैं, न तो पढ़े लिखे लोगों के लिए उनकी योग्यता के अनुसार काम है और न मजदूरों को पर्याप्त काम है। छोटे किसान परेशान हैं। घरेलू उद्योग धंधो तो लगभग चौपट ही हो गए हैं। पहले शहरीकरण और अब वैश्वीकरण की चपेट में गांव के लघु उद्योग धंधे खप नहीं पा रहे हैं।

पंचायतों के समक्ष यही सबसे बड़ी चुनौती है क्योंकि आर्थिक विकास पर ही भौतिक जीवन का सबकुछ निर्भर रहता है। इसलिए पंचायतों के कार्यों में कृषि उत्पादन में वृद्धि, पानी के व्यवहार के वैज्ञानिक प्रबंधन द्वारा सिंचाई साधन की उपलब्धता, अच्छे बीज और खाद की व्यवस्था, स्थानीय साधनों और परिस्थितियों के अनुरूप, ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन पुशपालन, वागवानी, आदि को उन्नत करना, गांव के तालाबों और कुंओं को अपेक्षित रूप से गहरा कराना बांधो की बरसात के पूर्व मरम्मत कराना, सिंचाई की आधुनिक पद्धतियों का प्रयोग कराना (ताकि उपलब्ध पानी बर्वाद न हो) सम्मलित है।

इसके साथ–साथ गांव की जनता में यह जागरूकता उत्पन्न करना भी पंचायतों के दायित्व में आ जाता है कि

मुफ्त पानी, मुफ्त बिजली, मुफ्त अनाज, मुफ्त बीज यह सब वोट की राजनीति के लिए लाभकारी हो सकता है, मगर यह देश के आम लोगो के हित में नहीं होता है। गांव की जनता को दीर्घकालिक हित और क्षणिक हित के औचित्य को सहजता से समझता है।

समुचित आर्थिक विकास के लिए कुछ लोगों को नियंत्रित करना होगा। हर काम योजनाबद्ध तरीके से करना होगा।

सरकारी स्कीमों को लागू करने में जितना हो हल्ला होता है उतनी ही उदासीनता इस दिशा में रहती है कि काम कैसा हुआ, काम की गुणवत्ता कैसी रही, काम से लाभार्थियों के जीवनस्तर में कितनी उन्नति हुई। इस मानसिकता के कारण ही ग्रामीण विकास के मद में प्रतिवर्ष अरबों रूपये खर्च होने के बावजूद भी गांवो की विपन्नता तेजी से घट नहीं पा रही है ।

पंचायतों को इस स्थिति को बदलने की भूमिका निभानी है। स्थानीय संसाधनों को ध्यान में रखते हुए गांव के विकास की दीर्घकालीन और अल्पकालीन योजना पंचायतों को बनानी चाहिए ताकि गांव के अपने और सरकार की ओर मिलने वाले साधनों का सदुपयोग हो सके, आधारभूत संरचानाएं बन सकें। कृषि, पशुपालन, बागवानी, कुटीर और लघु उद्योग बढ़ सकें। ग्रामीण सेवाओं जैसे बाजा बजाना, बाल काटना कमड़े धोना, दुकाने चलाना, मनोरंजन के कार्यक्रम चलाना आदि का आधुनिक ढंग से विकास हो और रोजगार के अवसर मिल सकें।

## 4. पारदर्शिता

पंचायतों की भूमिका प्रभावी तभी हो सकती है जब उसकी कार्य प्रणाली में पारदर्शिता हो समाज में एक आम धारणा पर्याप्त होती हैं ''गलत सही को रामजनै''। ''सब गुपचुप होता है।'' पंचायतें समाज के सामने विश्वनीय रहें, इसलिए आवश्यक है कि हर काम में पारदर्शिता रहे। सवकुछ सबके सामने और यथा सम्भव सहमति से हो। विभिन्न स्कीमों के अंतर्गत लाभार्थियों का चुनाव स्कीमों के लिए स्थलों का चयन, अभिकर्ता की नियुक्ति सबके सामने ग्रामसभा की बैठक में उसकी स्वीकृति से हो। सरकार से स्कीमों के लिए अथवा जो भी अनुदान मिलें, उसकी सूचना पंचायत के सूचनापट्ट पर लगी रहना चाहिए कि किस तारीख को किस काम के लिए कितने रूपये आए। काम की समाप्ति के बाद भी खर्चों का मोटा ब्यौरा कि कितने रूपये आए कितने खर्च हुए, कितने शेष रहे सार्वजनिक सूचना के लिए अंकित होना चाहिए।

इससे पंचायतों की विश्वसनीयता में वृद्धि होगी और पंचायतें सबल होंगी। एक ओर जहां आन्तरिक कार्य में पंचायतों को स्वायत्ता की आवश्यकता है वहीं दूसरी तरफ जनता के प्रति उसका पूर्ण उत्तरदायित्व भी है। स्वायत्त संस्था की इकाई बनने के लिए दोनों तत्व कामकाज में स्वायत्तता और अपने कामों के प्रति लोगों में उत्तरदायित्व एक समान आवश्यक है। यह तभी सम्भव है जब कामकाज में पारदर्शिता रहे।

## 5. प्रशिक्षण

इन सभी कार्यो के लिए उचित प्रशिक्षण भी आवश्यक है। पंचायत कर्मियों के साथ ही आम लोगों को भी आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण देना अपेक्षित है। हमें यह सत्य स्वीकार करना चाहिए कि जनमानस को तैयार किए बिना आर्थिक विकास संभव नहीं है। प्रशिक्षण का क्षेत्र कसौटी पर बहुत व्यापक हो जाता है। उचित प्रशिक्षण होने पर हमारी स्वस्थ्य परम्पराऐं विकसित होंगी सहिष्णुता, सदभाव, सम्बेदना के साथ गांव के रिश्ते नाते गांव को एक सूत्र में बांधे रहे हैं। इसीकारण असमानता गरीबी और लाचारी के बीच भी गांव प्राणधारा सूखी नहीं है। नये ज्ञान और प्रशिक्षण द्वारा इस प्राण ऊर्जा को सामाजिक और आर्थिक विकास में नये उत्साह से प्रतिबद्ध करना है। प्रशिक्षण की व्यवस्था भी स्थान विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान रखकर करनी होगी।

कुछ बातें तो सब जगह समान रहेंगी जैसे पंचायत कानूनी आधार उसके कार्य अधिकार और कर्तव्य इन सबका सामान्य ज्ञान होना चाहिए। लेकिन आर्थिक विकास के मुद्दों पर स्थानीय

आवश्यकताओं को ध्यान में रखना होगा। प्रशिक्षण के विषयों का चयन गांव की प्राथमिकताओं के अनुरूप करना होगा। ताकि पंचायत से सम्बद्ध लोगों को प्रशिक्षण प्रासंगिक और उपयोगी रहे। प्रशिक्षण की विधि ऐसी होनी चाहिए कि लोगों में नई जानकारियों को सीखने की ललक और लालसा बढ़ें। इस के लिए चार्ट–ग्राफ का प्रयोग, गीत नाट्य शैलियों का प्रयोग, मुख्य विषयों पर लघु फिल्मों आदि का प्रयोग अपनाए जाना चाहिये। नई विधि से खाद बनाना, सिंचाई करना, मकान बनाना, शौचालय का निर्माण करना आदि को भी प्रशिक्षण का अंग बनाने की जरूरत है।

प्रशिक्षण स्वभावतः खर्चीला काम होता है। एतद् उपयुक्त कोटि का मानव संसाधन का संयोजन करना होगा। प्रशिक्षण के लिए ऐसे व्यक्तियों का चयन करना होगा जिनमें प्रशिक्षक बनने की क्षमता हो। आर्थिक और मानवीय संसाधनों को उपलब्ध कराने में सरकार की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। स्वयंसेवी संस्थाऐं भी इस क्षेत्र में बड़ी सकारात्मक भूमिका अदा कर सकती हैं।[1]

नई पंचायतों को आए अभी एक दशक ही हुआ है। यह प्रारंभिक अवस्था है। यही समय है जब स्वस्थ्य दिशा में बढ़ना है और दृढ़संकल्प के साथ लक्ष्य तक पहुंचने का अभ्यास डालना है।

---

1. कुरूक्षेत्र : मार्च 2002 लेखक श्री बल्लभशरण पृ0 18 । पंचायत के पांच तत्व :

# उत्तर प्रदेश में पंचायती राज और ग्राम विकास -

## ग्राम पंचायत : ग्राम विकास को केन्द्र बिन्दु

पंचायतें उत्तर प्रदेश में पहले भी थीं। 1949 में गांव सभाएं बनीं और 1961 में क्षेत्र समितियां (ब्लाक पर) जिला परिषदें (जिले पर) बनीं, किन्तु ये सभी आम आदमी की अपेक्षित तरक्की का कारण नहीं बन पायीं। फिर आया संविधान का तिहत्तरवां संशोधन. 1992 और शुरू हुआ पंचायत का एक नया समय-एक नयी ताकत, एक नई आशा के साथ।

## उ0प्र0 पंचायती राज व्यवस्था एक नजर में

1. तीन स्तर पर व्यवस्था हैं :-
   - (क) ग्राम स्तर पर : ग्राम पंचायत
   - (ख) ब्लांक स्तर पर : क्षेत्र पंचायत
   - (ग) जिला स्तर पर : जिला पंचायत
2. पंचायतों का कार्यकाल 5 बर्ष।
3. कार्यकाल से छः माह पहले भंग होने पर छः माह के अन्दर चुनाव दुबारा होना जरूरी।
4. पांच साल समाप्त होने से पूर्व चुनाव प्रदेश के राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा।
5. अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए आबादी के अनुसार पदों का आरक्षण।
6. पिछड़ों के लिये भी पदों का आरक्षण, जिसमें 100 पदों में 27 से अधिक नहीं।
7. सभी वर्गों की महिलाओं के लिए कुल पदों के एक तिहाई पद पर आरक्षित।
8. आरक्षण-प्रधानों एवं सदस्यों दोनों के पद के लिए होगा।
9. चुनाव लड़ने की उम्र कम से कम 21 वर्ष।
10. पंचायतें अपनी योजनाएं खुद बनायेंगी।
11. आबकारी कानून और नशीलों दवाओं के कानून का अपराधी चुनाव नहीं लड़ सकेगा।
12. पंचायतों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने के उपाय सुझाने के लिये राज्य वित्त आयोग का गठन।

## विकेन्द्रीकरण - सौंपी गयीं जिम्मेदारियाँ

विकास कार्यो में लोगों की भागीदारी बढ़ाने, नियोजन को नीचे से ऊपर की ओर ले जाने, कार्यो में खुलापन लाने एवं ग्रामीण क्षेत्र के चौमुखी विकास के लिए पंचायतों को विकास की इकाई बनाते हुए विकेन्द्रीकरण की शुरूआत की गई है।

- प्रत्येक ग्राम पंचायत के लिए बहुउद्देशीय कर्मी (ग्राम पंचायत विकास अधिकारी) की तैनाती, जो ग्राम पंचायत के सचिव होंगे।
- छः विभागों के कर्मचारी पंचायतों के अधीन, जो ग्राम पंचायत विकास अधिकारी (बहुउद्देशीय कर्मी) बनाये गये :-

  1. ग्राम्य विकास अधिकारी/ग्राम्य विकास अधिकारी (महिला)

2. ग्राम पंचायत अधिकारी

3. किसान सहायक

4. नलकूप चालक

5. ग्राम विकास अधिकारी (समाज कल्याण)

6. गन्ना पर्यवेक्षक

इसके अतिरिक्त चार विभागों के कर्मी पंचायतों के अधीन, किन्तु वे बहुउद्देशीय कर्मी नहीं।

1. बेसिक शिक्षा विभाग

2. चिकित्सा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग

3. महिला कल्याण विभाग

4. पशुधन विभाग

कर्मी

| 1. प्राथमिक विघालय तथा उच्च प्राथमिक विद्यालय के अन्तर्गत कार्यरत प्रधानाध्यापक शिक्षक/अनुदेशक | 2. ए.एन.एम./ दाई आदि | 3. आंगनबाड़ी कार्यकत्री/ सहायिका | 4. पशुधन प्रसार अधिकारी |
|---|---|---|---|

# ग्राम पंचायत को सौंपे गए कार्य और उनके लिए वित्तीय संसाधन की व्यवस्था

| विभाग का नाम | ग्राम पंचयात को हस्तान्तरति किये गये कार्य/वित्तीय संसाधन |
|---|---|
| 1. प्राथमिक विद्यालय, अपर प्राथमिक विद्यालय | 1. विद्यालयों के रख–रखाव हेतु नियत धनराशि<br>2. पठन–पाठन सामग्री<br>3. नये विद्यालय अथवा विद्यमान निर्माण हेतु धनराशि<br>4. अतिरिक्त कक्ष निर्माण हेतु धनराशि |
| 2. सिंचाई विभाग | राजकीय नलकूपों की मरम्मत की धनराशि। यह धनराशि सिंचाई विभाग को ही वार्षिक रख–रखाव अनुबन्ध के अन्तर्गत अन्तरित की गयी है। राजकीय नलकूपों के विद्युत देयकों का भुगतान सिंचाई विभाग की संस्तुति पर सीधे राज्य विद्युत परिषद् को शासन द्वारा किया जा रहा है। |
| 3. जल निगम | 1. हैण्डपम्पों के लिए निर्धारित धनराशि।<br>2. नये हैण्डपम्प जल निगम/अन्य एजेन्सी द्वारा स्थापित किये जायेंगे, उसके बाद उन्हें ग्राम पंचायत को हन्तान्तरित कर दिया जायेगा। उनके रख–रखाव की धनराशि सीधे ग्राम पंचायतों को दी जाएगी। |
| 4. युवा कल्याण विभाग | ग्राम स्तरीय समस्त गतिविधियों के लिए नियत धनराशि। |
| 5. खाद्य विभाग | राशन की दुकान को सुचारू रूप से संचालित कराना। |
| 6. चिकित्सा एवं स्वास्थ्य | स्वास्थ्य उप केन्द्र के रख–रखाव हेतु नियत धनराशि। |
| 7. महिला एवं बाल विकास | आंगनबाड़ी कार्यक्रम के समस्त ग्राम स्तरीय कार्य। |
| 8. पशुधन विभाग | पशुधन चिकित्सा/सेवा केन्द्र के रख–रखाव तथा चिकित्सा सामग्री हेतु धनराशि। |
| 9. कृषि विभाग | ग्राम स्तरीय समस्त कार्य तथा उनके लिए आवंटित धनराशि। |
| 10. ग्राम्य विकास अधिकारी | ग्राम स्तरीय समस्त कार्य तथा उनके लिए आवंटित धनराशि। |
| 11. पंचायती राज विभाग | ग्राम स्तरीय समस्त कार्य तथा उनके लिए आवंटित धनराशि। |
| 12. समाज कल्याण विभाग | सभी प्रकार की पेंशन तथा छात्रवृत्तियां वितरित करने का अधिकारी ग्राम पंचायतों को। |

## उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम व नियमावली के मुख्य बिन्दु

## ग्राम पंचायत

### स्थापना :

※ जहाँ तक सम्भव हो एक हजार की आबादी पर किसी ग्राम या ग्राम के समूह के क्षेत्र को राज्य सरकार पंचायत क्षेत्र घोषित कर सकती है (धारा 11च), किन्तु किसी राजस्व ग्राम को या उसके मजरे को तोड़ा नहीं जायेगा।

※ उस पंचायत क्षेत्र के नाम पर एक ग्राम पंचायत की स्थापना की जाएगी (धारा 12(1) क)। प्रधान तथा 2/3 सदस्यों के चुनाव होने पर ही पंचायत का संगठन घोषित किया जायेगा।

### सदस्य (धारा 12 (1)क)

※ ग्राम पंचायत का एक प्रधान होगा और 1000 की आबादी तक 9 सदस्य होंगे। 2000 की आबादी तक 11 सदस्य होंगे, 3000 की आबादी तक 13 सदस्य होंगे। 3000 से अधिक की आबादी पर 15 सदस्य होंगे।

### कार्यकाल :

※ पहली बैठक के लिए तय तारीख से 5 साल तक पंचायत बनी रहेगी। यदि 5 साल से कम से कम 6 माह पहले उसे भंग किया जाता है, (धारा 12 (3)) तो दुबारा चुनाव कराना होगा। दुबारा चुनी गयी पंचायत का कार्यकाल सामान्य समय (5वर्ष) से बचे हुये समय के लिए होगा।

### बैठक :

※ माह में एक बैठक जरूरी है। साधारणतया बैठक उस ग्राम में बुलाई जाएगी जहां ग्राम पंचायत का कार्यालय स्थित हो। यह बैठक ग्राम पंचायत कार्यालय अथवा किसी अन्य सार्वजनिक स्थल पर आयोजित की जाएगी। (धारा 12 (ख)(1))। ग्राम पंचायत के निर्वाचन के पश्चात संगठन के 30 दिन के भीतर किसी ग्राम पंचायत की प्रथम बैठक की तिथि नियत की जायेगी।

### बैठक की सूचना :

※ कम से कम 5 दिन पहले सभी सदस्यों को लिखित रूप से दी जायेगी।

※ इसका प्रकाशन ग्राम पंचायत की अधिकार सीमा के अंदर खास–खास स्थानों पर सूचना चिपकवा कर किया जायेगा। (नियम 32 व 37)

### कौन बैठक बुलायेगा ? (नियम 33) :

※ प्रधान, उसके मौजूद न रहने पर उपप्रधान, किसी भी समय पंचायत की बैठक बुला सकता है।

※ यदि पंचायत के 1/3 सदस्य किसी भी समय हस्ताक्षर कर लिखित रूप से बैठक बुलाने को कहें तो प्रधान को पत्र मिलने के 15 दिन के अन्दर बैठक बुलानी होगी।

※ यदि प्रधान बैठक नहीं बुलाते हैं, तो निर्धारित अधिकारी (ए.डी.ओ. पंचायत) बैठक बुला सकता है।

### कोरम (नियम 35 ) :

※ प्रधान व उप प्रधान को शामिल करते हुये पंचायत सदस्यों के एक तिहाई सदस्यों की

उपस्थिति बैठक का कोरम मानी जायेगी।

- यदि कोरम के पूरा न होने पर बैठक नहीं होती है तो दुबारा सूचना देकर बैठक बुलायीं जा सकती है। इसमें कोरम की जरूरत नहीं होगी।

## अध्यक्षता (नियम 46) :

- प्रधान के मौजूद न रहने पर उपप्रधान बैठक की अध्यक्षता करेगा।
- इन दोनों के मौजूद न रहने पर प्रधान द्वारा लिखित रूप से मनोनीत सदस्य अध्यक्षता करेगा।
- यदि प्रधान ने कोई सदस्य मनोनीत न किया हो तो ए.डी.ओ. (पंचायत) मनोनीत करेगा।
- यदि प्रधान और ए.डी.ओ. दोनों ही किसी सदस्य को मनोनीत न कर पायें हों तो ग्राम पंचायत की बैठक में उपस्थित सदस्य बैठक की अध्यक्षता करने के लिए ग्राम पंचायत के किसी सदस्य को चुन सकते हैं।

## बैठक की कार्यवाही (नियम – 35 क) :

- बैठक में पिछली बैठक की कार्यवाही पढ़कर सुनाई जायेगी और उसकी पुष्टि के बाद प्रधान उस पर हस्ताक्षर करेगा।
- पिछले महीने का हिसाब–किताब बैठक में रखा जायेगा और उस पर विचार किया जायेगा।
- जो सूचना, निर्देश व आदेश मिले हों उन्हें पढ़कर सुनाया जायेगा।
- चल रहे विकास कार्यो की जानकारी दी जायेगी।
- पंचायत की समितियों की कारगुजारी पढ़कर सुनायी जायेगी और उस पर विचार किया जायेगा।
- सदस्य ऐसे ही सवाल पूछ सकते हैं, जो पंचायत से जुड़े हों किन्तु वे कोई अनावश्यक विवाद पैदा करने की सम्भावना वाला, काल्पनिक, किसी जाति या व्यक्ति के लिए अपमानजनक प्रश्न नहीं पूछेंगे।
- कार्यवाही की लिखा पढ़ी हिन्दी में एक रजिस्टर में की जायेगी और कार्यवाही की नकल ए.डी.ओ. (पंचायत) को बैठक के सात दिन के अन्दर दी जायेगी (नियम 36)।
- लिये गये फैसले पर तब तक तीन महीने के भीतर दुबारा विचार नहीं किया जायेगा, जब तक कि 2/3 सदस्य लिखित रूप से दस्तखत कर इसके लिये प्रार्थना–पत्र न दें (नियम 40)।

## ग्राम सभा :

## स्थापना (धारा 3)

- किसी ग्राम या ग्राम समूह के लिये राज्य सरकार द्वारा ग्राम सभा स्थापित की जाती है।
- ग्राम सभा में पंचायत क्षेत्र की वोटर लिस्ट में दर्ज सभी लोग सदस्य होते हैं।
- जहां एक से अधिक ग्राम इसमें शामिल हैं, वहां सबसे अधिक आबादी वाले ग्राम के नाम पर ग्राम सभा का नाम रखा जायेगा।

## बैठक (धारा 11(1))

- एक साल में दो बैठकें जरूरी, जिसमें से एक बैठक खरीफ की फसल काटने के तुरन्त बाद

तथा दूसरी रबी की फसल काटने के तुरन्त बाद सम्पन्न होगी।

## बैठक की सूचना (नियम 37):

- कम से कम 15 दिन पहले बैठक की सूचना दी जायेगी।
- सूचना ग्राम सभा के खास–खास स्थानों पर चिपकवाकर दी जायेगी और उसमें बैठक की तारीख, समय तथा स्थान भी बताया जायेगा।
- ग्राम सभा में डुग्गी पिटवाकर भी सूचना दी जायेगी।

## बैठक कौन बुलायेगा ?

- प्रधान, उसके उपस्थित न होने पर प्रधान ग्राम सभा की बैठक बुलायेगा।
- प्रधान किसी भी समय असाधारण बैठक बुला सकता है।
- जिला पंचायत राज अधिकारी या क्षेत्र पंचायत द्वारा लिखित रूप से मांग करने पर या ग्राम सभा के सदस्यों की कम से कम 1/5 की माँग पर प्रधान 30 दिन के भीतर बैठक बुलायेगा।
- यदि प्रधान बैठक न बुलाये तो जिला पंचायत राज अधिकारी ग्राम सभा की बैठक बुला सकता है। यह बैठक उस तारीख के 60 दिन के भीतर होगी जिस तारीख को प्रधान से बैठक बुलाने की मांग की गयी है।

## कोरम (धारा 11(2))

- कुल सदस्यों की संख्या के पांचवे भाग की उपस्थिति बैठक के लिये जरूरी है।
- यदि कोरम की कमी के कारण बैठक न हो सके तो दुबारा बैठक के लिये पांचवें भाग की उपस्थिति जरूरी नहीं है।

## अध्यक्षता (नियम 46)

- प्रधान, उसके मौजूद न होने पर उप प्रधान बैठक की अध्यक्षता करेगा।
- दोनों की अनुपस्थिति में ग्राम पंचायत के किसी सदस्य को प्रधान द्वारा मनोनीत किया जा सकता है।
- प्रधान द्वारा मनोनीत न करने की दशा में ए.डी.ओ. पंचायत द्वारा ग्राम पंचायत का कोई मनोनीत सदस्य अध्यक्षता करेगा।
- प्रधान या ए.डी.ओ. (पंचायत) द्वारा मनोनीत न किये जाने की दशा में उपस्थित सदस्यों द्वारा ग्राम पंचायत का कोई सदस्य मनोनीत किया जायेगा।

## बैठक की कार्यवाही (नियम 36)

- कार्यवाही का सार हिन्दी में एक रजिस्टर में लिखा जायेगा तथा इसकी नकल ए.डी.ओ. (पंचायत) को सात दिन के अन्दर भेजी जायेगी।

## प्रस्ताव या प्रश्न की सूचना (नियम 39):

- यदि ग्राम पंचायत का कोई सदस्य किसी बैठक में कोई प्रस्ताव लाना चाहे अथवा कोई प्रश्न पूछना चाहे तो वह इसके लिए एक लिखित सूचना पूर्व बैठक में या होने वाली बैठक से कम से कम 10 दिन पूर्व प्रधान या उसके न होने पर उप प्रधान या पंचायत सचिव को देगा।
- ऐसे किसी प्रस्ताव पर जिस पर फौरन विचार किया जाना जरूरी हो, बैठक का प्रधान

स्वेच्छा से विचार करने की आज्ञा दे सकता है।

## कार्य :

ग्राम सभा अपनी बैठक में नीचे लिखे विषयों पर विचार करेगी और उन पर ग्राम पंचायत को सिफारिश और सुझाव दें सकती है (धारा 11(3))

- ग्राम पंचायत के खातों का वार्षिक विवरण, पिछले वित्तीय वर्ष की प्रशासन रिपोर्ट, पिछले आडिट की टिप्पणी तथा उसका परिपालन।
- पिछले वित्तीय वर्ष में किये गये विकास कार्यो तथा चालू वित्तीय वर्ष में जो कार्य किये जाने हैं, उनकी रिपोर्ट।
- समाज की सभी वर्गो में मेज–जोल व एकता बढ़ाना।
- प्रौढ़ शिक्षा का कार्यक्रम।
- अन्य मामले जो पहले से तय हों (जैसे परिवार कल्याण, पर्यावरण, टीकाकारण)।
- ग्राम पंचायत उक्त सिफारिशों और सुझावों पर पूरा विचार करेगी। (धारा 11(4))।

## ग्राम सभा नीचे लिखे कार्य करेगी (धारा 11(5))

- सबके भले के लिए चलाये जाने वाले कार्यक्रमों के लिए लोगों की भागीदारी श्रम के रूप में अन्य अंशदान जुटाना।
- विकास कार्यो के लिए लाभार्थी की पहचान।
- विकास कार्यो में सहायता करना।

## ग्राम पंचायत के प्रधान, उप प्रधान और सदस्य :

- ग्राम पंचायत का एक प्रधान व एक उप प्रधान होगा जो ग्राम सभा के अध्यक्ष और उपाध यक्ष भी होंगे (धारा 11 क (1))।
- पंचायत में प्रधान के अलावा आबादी के हिसाब से 9 से 15 सदस्य होंगे।
- प्रधान भी ग्राम पंचायत का सदस्य होगा (धारा 12 (6))।
- प्रधान, उपप्रधान व सदस्यों का कार्यकाल ग्राम पंचायत के कार्यकाल के साथ समाप्त हो जायेगा।
- ग्राम पंचायत के अथवा उसकी किसी समिति के सदस्य या सेवक, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 21 के अन्तर्गत लोक सेवक (पब्लिक सर्वेन्ट) माने जायेंगे (धारा 28)।
- ग्राम पंचायत का सदस्य किसी बैठक में कोई संकल्प प्रस्तुत कर सकता है और ग्राम पंचायत के प्रशासन से संबंधित विषयों पर प्रधान या उपप्रधान से प्रश्न पूछ सकता है। (धारा 26)।

## आरक्षण :

- प्रधान व सदस्यों के पदों में आरक्षण होगा।
- उत्तर प्रदेश की कुल आबादी में अनुसूचित जाति की आबादी का जो भाग है उसी के हिसाब से प्रधान के पद अनुसूचित जाति के लिये आरक्षित किये जायेंगे।
- उत्तर प्रदेश की कुल आबादी में अनुसूचित जनजाति की आबादी का जो हिस्सा है, उसी के हिसाब से प्रधान के पद जनजाति के लिये आरक्षित किये जायेंगे।
- उत्तर प्रदेश की कुल आबादी में पिछड़ी जाति की आबादी का जो हिस्सा है, उसी के

हिसाब से प्रधान के पद पिछड़ी जाति के लिये आरक्षित किये जायेंगे, किन्तु ये पद 100 से 27 से ज्यादा नहीं होंगे।

- प्रधान के कुल पदों की संख्या में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व पिछड़े वर्ग के लिये आरक्षित किये गये पदों में एक–तिहाई पद उसी वर्ग की महिलाओं के लिए आरक्षित किये जायेंगे।
- अनारक्षित प्रधान पदों में से भी एक – तिहाई पद महिलाओं के लिये आरक्षित किये जायेंगे।
- महिलायें अनारक्षित पदों पर भी चुनाव लड़ सकती हैं।
- ग्राम पंचायत के सदस्यों के लिए भी आरक्षण ऊपर की तरह ही होगा, किन्तु कुल आबादी में अनुसूचित जाति, जनजाति व पिछड़े वर्ग का हिस्सा पंचायत की कुल आबादी में देखा जायेगा, पूरे प्रदेश की आबादी में नहीं।

## चुनाव : राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा पंचायतों के चुनाव कराये जायेंगे

### प्रधान का चुनाव (धारा 11 ख(1))

ग्राम सभा के सारे सदस्यों द्वारा अपने में से प्रधान का चुनाव किया जायेगा।

### उपप्रधान का चुनाव :

ग्राम पंचायत के सदस्यों द्वारा अपने में से एक उप प्रधान चुना जायेगा।

### चुनाव लड़ने की योग्यता (धारा 5 क):

1. कम से कम उम्र 21 वर्ष होनी चाहिये।
2. ग्राम पंचायत या न्याय पंचायत से वेतन प्राप्त न करता हो।
3. राज्य सरकार, केन्द्र सरकार या किसी अन्य स्थानीय निकास (नगरपालिका, निगम बोर्ड आदि) में किसी कार्य के पद पर न हो।
4. राज्य सरकार, केन्द्र सरकार या किसी अन्य स्थानीय निकाय या न्याय पंचायत की सेवा से दुराचरण के कारण निकाला न गया हो।
5. ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत या जिला पंचायत का कोई बकाया न हो।
6. दिवालिया न हो।
7. नैतिक अधमता के किसी अपराध के लिये दोषी न हो।
8. आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 व आबकारी एक्ट के अन्तर्गत दोष सिद्ध होने पर 3 माह से अधिक समय जेल में न रहा हो।
9. नशीली दवाओं के एक्ट के अन्तर्गत दोषी न हो।
10. पंचायत संबंधी किसी अपराध के लिए दोषी न हो।
11. पंचायत एक्ट की किसी धारा के कारण पद से न हटाया गया हो।
12. ऊपर लिखे बिन्दु 4,6,7,8,10 की अयोग्यता दोष सिद्ध होने/सजा काटने के 5 वर्ष बाद समाप्त हो जायेगी और तब चुनाव लड़ा जा सकता है।

## प्रधान के कर्तव्य (नियम 47) :

- ग्राम सभा तथा ग्राम पंचायत की बैठकों को बुलायें तथा उनकी अध्यक्षता करें।
- बैठक की कार्यवाही पर नियंत्रण रखें और व्यवस्था बनाये रखें।
- पंचायत की आर्थिक व्यवस्था और प्रशासन की देखभाल करें और यदि उसमें कोई कमी नजर आये तो उसकी सूचना गांव वालों को दें।
- ग्राम पंचायत के प्रस्तावों को क्रियान्वित करें।
- पंचायत राज नियमों के अन्तर्गत जो विभिन्न रजिस्टर रखे जाते हैं, उनको ठीक से रखने का प्रबंध करें और ग्राम पंचायत और ग्राम सभा की ओर से समस्त पत्र व्यवहार करें।
- ग्राम पंचायत की सम्पत्ति की सुरक्षा की कार्यवाही करें, और पंचायत द्वारा लगाये गये कर, शुल्क आदि की वसूली की व्यवस्था करें।
- ग्राम पंचायत की ओर से दीवानी, नालिशें तथा फौजदारी के इस्तेगासे दायर करें।

## प्रधान का विशेषाधिकारी :-

- विशेष आवश्यकता पड़ने पर जिला पंचायत राज अधिकारी को सूचना देकर, बिना ग्राम पंचायत की स्वीकृति प्राप्त किये, ग्राम प्रधान को कोई भी ऐसा काम करने का अधिकार होगा जिसको करने का अधिकार ग्राम पंचायत को है।
- ग्राम पंचायत की अगली बैठक में इस विषय को रखकर अनुमोदन प्राप्त किया जायेगा।

## ग्राम पंचायत की समितियाँ

ग्राम पंचायत अपने कार्यो में सहायता करने के लिए 6 समितियों का गठन करेगी। इन समितियों को ग्राम पंचायत आवश्यकतानुसार अपने सभी कार्यो या किन्हीं कार्यो को करने के लिए सौंप सकती है।[1]

---

1. विकेन्द्रीकरण : एक नई दिशा : (पंचायती प्रशिक्षण साहित्य) पंचायती राज विभाग – उत्तर प्रदेश लखनऊ वर्ष 1994 ।

| क्र.सं. | समिति का नाम | समिति के कार्य | समिति का गठन |
|---|---|---|---|
| 1. | नियोजन एवं विकास समिति | 1. ग्राम पंचायत की योजना तैयार करना<br>2. कृषि, पशुपालन गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का संचालन। | 1. प्रधान – सभापति<br>2. 6 अन्य सदस्य (अनुसूचित जाति/जनजाति, महिला और पिछड़े वर्ग का एक सदस्य अवश्य होगा।)<br>3. विशेष आमंत्री |
| 2. | शिक्षा समिति | प्राथमिक शिक्षा, उच्च प्राथमिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, साक्षरता आदि से संबंधित कार्य | 1. उप प्रधान – सभापति<br>2. 6 अन्य सदस्य (अनुसूचित जाति/जनजाति, महिला और पिछड़े वर्ग का एक सदस्य अवश्य होगा।)<br>3. विशेष आमंत्री |
| 3. | निर्माण कार्य समिति | सभी निर्माण कार्य कराना और गुणवत्ता सुनिश्चित करना। | 1. ग्राम पंचायत द्वारा नामित सदस्य–सभापति<br>2. 6 अन्य सदस्य (अनुसूचित जाति/जनजाति, महिला और पिछड़े वर्ग का एक सदस्य अवश्य होगा।)<br>3. विशेष आमंत्री |
| 4. | स्वास्थ्य एवं कल्याण समिति | चिकित्सा, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, संबंधी कार्य और समाज कल्याण विशेष रूप से महिला एवं बाल कल्याण की योजनाओं का संचालन | 1. ग्राम पंचायत द्वारा नामित सदस्य–सभापति<br>2. 6 अन्य सदस्य (अनुसूचित जाति/जनजाति, महिला और पिछड़े वर्ग का एक सदस्य अवश्य होगा।)<br>3. विशेष आमंत्री |
| 5. | प्रशासनिक समिति | 1. कर्मियों संबंधी समस्त विषय<br>2. राशन की दुकान संबंधी कार्य | 1. प्रधान – सभापति<br>2. 6 अन्य सदस्य (अनुसूचित जाति/जनजाति, महिला और पिछड़े वर्ग का एक सदस्य अवश्य होगा।)<br>3. विशेष आमंत्री |
| 6. | जल प्रबन्धन समिति | 1. राजकीय नलकूपों का संचालन<br>2. पेयजल संबंधी कार्य | 1. ग्राम पंचायत द्वारा नामित सदस्य–सभापति<br>2. 6 अन्य सदस्य (अनुसूचित जाति/जनजाति, महिला और पिछड़े वर्ग का एक सदस्य अवश्य होगा।)<br>3. विशेष आमंत्री |

# उत्तर प्रदेश में पंचायती राज और ग्राम विकास की समीक्षा -

उत्तर प्रदेश का प्राण तत्व यहां के 97134 गांवो में निहित है। राज्य की कुल आबादी का 70 प्रतिशत हिस्सा उत्तरप्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। उत्तरप्रदेश की सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए जो रास्ता चुना है वह ग्राम पंचायतों से होकर जाता है।

उत्तरप्रदेश में कुल 17 मण्डल, 70 जनपद, 298 तहसीलें 809 विकासखण्ड तथा 51826 ग्राम सभाऐं हैं। उत्तरप्रदेश की ग्राम पंचायतों को ग्राम विकास तथा निर्माण कार्य के लिए 400 करोड़ रूपये की धनराशि (2001-2002) दी गई है। ग्राम सभाओं की भागीदारी ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में अधिक बढ़ाने के उद्देश्य से कई महत्वपूर्ण नियम उत्तरप्रदेश सरकार ने बनाए हैं। पहले ग्रामप्रधानों के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव लाने का अधिकार ग्राम पंचायतों के सदस्यों के पास होता था। नये नियमों के तहत अब ऐसा जनता द्वारा ही किया जा सकेगा। इस नियम के पीछे यह मंशा है ताकि गावों में आपसी गुटबंदी और वैमनस्य को समाप्त किया जा सके। ग्राम सभाओं को राशन की दुकानों के चयन करने तथा गरीबी की रेखा से नीचे की सूची बनाने का अधिकार दिया गया है।

यह सच है कि सबल, सक्षम, सफल और समर्थ कृषकगण ही ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ आधार प्रदान कर सकते हैं। इसलिए ग्रामीणों कृषकों के सामूहिक हितों को दृष्टिगत रखते हुए उत्तरप्रदेश सरकार ने कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। इनकी प्रमुख बातें इस प्रकार हैं:-

1. फसली ऋण के लिए किसान की जमीन बंधक रखे जाने की प्रक्रिया में लगने वाले स्टाम्प शुल्क मे छूट की सीमा बढ़ाने का निर्णय ।
2. किसानों को क्रेडिट कार्ड वितरित करने का फैसला।
3. गेहूं खरीद के प्रभावी संचालन हेतु कैबिनेट मंत्रियों की 6 सदस्यीय समिति का गठन।
4. ग्रामीणों की शिकायतों के निराकरण के लिए राजस्व अधिकारियों को गावों में समय समय पर प्रवास कर शिकायतों के निराकरण के निदेश।
5. दुग्ध उपार्जन में 40 प्रतिशत की रिकार्ड वृद्धि अर्जित कराना।
6. सभी प्रकार के बीज व्यापार कर से मुक्त।
7. ग्रामीणों की आवश्यकताओं के मद्देनजर उत्तर प्रदेश ग्रामीण एवं पर्वतीय वृक्ष संरक्षण अधिनियम को व्यापक स्तर पर लचीला बनाने की पहल।
8. ग्रामीण अंचलों में चिकित्सकों की उपस्थिति सुनिश्चित कराने के लिए प्रांतीय चिकित्सी सेवा संवर्ग का पुनर्गठन। अब डाक्टरों के लिए सेवावधि के पहले 18 साल गांवो में बिताना अनिवार्य है।

## पंचायत में महिलाओं की भागीदारी -

* ग्राम सभा की आधी सदस्य महिलायें हैं। अतः उनका श्रम, विचार एवं निर्णय गांव के विकास के लिए आवश्यक है।

❋ बहुत से कार्य केवल महिलाओं द्वारा ही किये जाते हैं। अतः उनसे जुड़ी समस्याओं का निवारण महिलायें बेहतर तरीके से कर सकती हैं।

❋ घर खेती के कार्यो में महिला–पुरूष दोनो का सक्रिय योगदान रहता है। इसके लिये यह जरूरी है कि निर्णय करने में दोनो की भागीदारी हो।

❋ परिवार की भांति ग्राम सभा में भी महिला पुरूष बैलगाड़ी के दो पहिये के समान है। अतः दोनो की समान सहभागिता से ही ग्राम सभा तेजी से आगे बढ़ सकती है।

## सरकार द्वारा किये गये प्रयास –

❋ पंचायतों में एक तिहाई सीट महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।

❋ प्रत्येक पंचायत में कम से कम एक तिहाई पंच महिलायें होगी। दलित वर्ग की महिलाओं की भागीदारी भी सुनिश्चित की गई हैं।

❋ प्रत्येक समिति में कम से कम एक महिला सदस्य अवश्य होनी चाहिये।

## महिलाओं की पंचायतों में भागीदारी के परिणाम –

❋ अब महिलायें भी ग्राम सभा, ग्राम पंचायत की बैठकों में भाग लेती हैं।

❋ वे सरकारी अधिकारियों के साथ अच्छे तालमेल के साथ कार्य कर रही है।

❋ महिला पंचायत सदस्यों ने पुरूषों की अपेक्षा अपने को अधिक जबावदेह ढंग से प्रस्तुत क्रिया है।

❋ महिलाओं के कार्यो में ज्यादा ईमानदारी पायी गयी है।

❋ गांव स्तर की समस्याओं के समाधान की समझ महिलाओं से अच्छी देखी गयी है।

❋ महिला सदस्यों के कार्य को देखते हुए गांव की अन्य महिला प्रोत्साहित हुई है एवं उन्होंने आपस में मिलकर अपनी आवश्यकताओं के अनुसार समाधान निकाला है।

## कैसे बढ़ायी जा सकती है महिलाओं की भागीदारी ? –

❋ बैठको का आयोजन महिलाओं की सुविधानुसार किया जाये जैसे समय व स्थान महिलाओं के अनुरूप हों।

❋ महिलाओं को पंचायत में उनकी भागीदारी की आवश्यकता को बताया जाये।

❋ पंचायत के कार्यो में महिलाओं को भाग लेने के लिए प्रोत्साहन व सहयोग दिया जाये।

❋ अकेली महिला के स्थान पर दो तीन महिलाओं के समूह में बातचीत की जाय जिससे उनमें भय या संकोच न हो।

❋ महिला पदाधिकारियों का कार्य उनके सगे संबंधी करें बल्कि उनके कार्यो में सहयोग प्रदान करें।

❋ महिला पदाधिकारियों को उनकी जिम्मेदारी व अधिकारो की जानकारी मिले तथा उनका आदर व सम्मान हो।

❋ ग्राम सभा की बैठको, आम बैठको में महिलाओं को अपनी बात कहने निर्णय लेने में अवसर प्राप्त हो।

❋ महिलाओं के समूह गठित हो तथा समूहों को पंचायत कार्यो से जोड़ा जाये।

❋ निर्वाचित पदाधिकारियों के कार्यालय में उनके सम्बन्धी सगे कदापि प्रवेश नहीं करेंगे और वह

अपने विवेक से कार्य करेंगी। यदि आवश्यक कारण से उन्हें आना भी पड़े तो रजिटर में नाम व कारण अंकित किया जाये।[1]

## ग्रामीण –वित्त

प्राथमिक कृषि ऋण सहकारी समितियों व्यावसायिक बैकों की ग्रामीण शाखाऐं तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक मिलकर ग्रामीण क्षेत्रों में लघु ऋण उपलब्ध कराने का कार्य उत्तरप्रदेश में कर रहे हैं। इसकी खास बात यह है कि राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण बैंक नाबार्ड के निर्देशानुसार निर्बलवर्ग के सदस्यो, महिलाओं तथा ग्रामीण कारीगरों आदि को समूह बनाकर स्वंय सहायता के लिए प्रेरित किए जाने पर बल दिया जा रहा है। इससे मेहनत करों को महत्ता मिल रही है। उत्तर प्रदेश में गांवो में हो रहे उत्पादन को उद्योगों से जोड़ने पर विशेष बल दिया गया है। जिस क्षेत्र में जिस चीज की बहुलता है, वहां उसी से संबंधित ग्रामोद्योगों की स्थापना से एक नया वातावरण बनने लगा है। उदाहरण के तौर पर उत्तर प्रदेश में गन्ने की खेती बहुत बड़े पैमाने पर की जाती है। देश के कुल गन्ना क्षेत्रफल का करीब आधा हिस्सा अकेल उत्तर प्रदेश में हैं।

ग्राम पंचायतों के माध्यम से अब गांव के गरीबो को विकास योजनाओं की प्रमुख घुरी वनाया जा रहा है। ग्राम पंचायतों के सचिव को बहुउद्देशीय कर्मी का दर्जा देने से अब ग्रामवासियों को कल्याण कार्यक्रमों का लाभ उन्हें ग्राम स्तर के ही एक कर्मचारी द्वारा सुलभ कराया जाता है।

## ग्रामीण रोजगार –

उत्तरप्रदेश में ग्रामीण बेरोजगारी दूर करने के लिए जिन उपायों पर विशेष बल दिया गया है उनमें पशुपालन और दुग्ध उत्पादन सर्वोपरी हैं। सहकारिता के माध्यम से डेयरी व्यवसाय से ग्रामीण युवाओं और महिलाओं को बहुत लाभ मिला है। ग्रामीण क्षेत्रों में 15,130 सहकारी समितियां हैं। इनके माध्यम से दूध बेचने पर दुग्ध उत्पादकों का शोषण रूकता है। डेयरी उद्योगी की उत्तर प्रदेश में ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका है।

उत्तर प्रदेश में मंडी नियमन और मंडी विकास के कारण कृषि उपज का विपणन अधिक बेहतर हुआ है। गेहूं, धान ओर गन्ने के अतिरिक्त आलू आदि की नई खरीद व्यवस्था में फसल का लाभ किसानों को दिलाने में ध्यान दिया जा रहा है।

शिक्षा, स्वास्थ्य सड़क और संचार की सुविधाएं गांव में उपलब्ध हो जाने से ग्रामीण जीवन अव कस्टों का पर्याय नहीं रहा है। वर्ष 2000 में डेढ़ हजार गांवो को सम्पर्क भागों से जोड़ा गया है।

उत्तर प्रदेश की धरती पर 80 लाख हैक्टेयर में सिंचाई की सुविधाऐं बढ़ जाने से हरियाली की चादर बढ़ रही है। प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना में 62.76 करोड़ की व्यवस्था धनराशि वर्ष 2001–2002 के लिए की गई है। डेढ़ लाख ग्रामीण आवासों का लक्ष्य रखा गया है। ताकि गरीब ग्रामीण के सिर पर छत उपलब्ध करायी जा सके। जवाहर ग्राम समृद्धि के लिये 2001–2002 के लिये 10200 लाख रूपये से 422 लाख मानव दिवस सृजन की व्यवस्था की गई है। स्वर्ण जंयती रोजगार योजना में 66 करोड़ रूपया से 6.36 लाख लोगों को लाभ पहुंचाया गया है।

---

1. पंचायत सशक्तिकरण : मार्गदर्शिका – लोककार्यक्रम और ग्रामीण प्रौद्योगिक विकास परिषद क्षेत्रीय समिति लखनऊ ।

कृषि पशुपालन, मत्स्य विकास एवं हस्तशिल्प जैसे उपायों से समृद्धि की रोशनी ग्रामीण क्षेत्रों में फैलती जा रही है। ग्रामीण विकास योजनाऐं अपने मकसद को आगे बढ़ा रही है ताकि उत्तरप्रदेश के गांवो से गरीबी हटे और सभी ग्रामवासियों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जा सके।

इसका कारण यही है कि उत्तर प्रदेश के देहाती इलाकों में लोगों की सोच बदल रही है जिससे उनके काम करने का तथा रहन सहन के ढंग से परिवर्तन प्रतीत हुआ है। पहले की तुलना में आज ग्रामीणों का दृष्टिकोण अधिक वैज्ञानिक हुआ है। अतः प्रौद्योगिकी अपने प्रभाव ग्राम विकास में दिखलाने लगी है।[1]

उत्तर प्रदेश ग्राम विकास की यह चेतना जगाने तथा विकास की गति को तेज करने में निश्चित ही पंचायती राज व्यवस्था ने महत्वपूर्ण एवं प्रभावी भूमिका निभायी है।

---

1. कुरूक्षेत्र : मार्च 2002 लेख उत्तरप्रदेश नए युग की ओर ग्राम पंचायते पृ0 21 ममता भारती।

# अध्याय - षष्ठम

# ग्राम्य विकास योजनाऐं और रोजगार

- श्रम प्रधान तकनीकी
- पूंजी प्रधान तकनीकी
- भारत में बेरोजगारी की स्थिति
- बेरोजगारी और ग्राम्य विकास योजनाऐं

आज से लगभग 200 वर्ष पूर्व प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री का मानना था कि मांग और पूर्ति का सन्तुलन स्थापित हो जाने से सभी इच्छुक व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हो जाता है।[1] अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की स्थिति अस्थायी होती है। जो कुछ समय पश्चात् स्वतः ही दूर हो जाती है। बेरोजगारी को दूर करने के लिये सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं रहती। परन्तु वर्तमान में यह धारणा पूर्णरूप से अमान्य सिद्ध हो गयी है। बेरोजगारी मनुष्य को ही नहीं वरन् सम्पूर्ण देश के सामाजिक और आर्थिक जीवन को नष्ट कर देती है। बेरोजगारी एक बड़ी आर्थिक क्षति है। प्रो0 जे0के0 मेहता ने इसे निम्न शब्दों में परिभाषित किया है :– ''एक श्रमिक उस समय रोजगार में लगा हुआ कहा जा सकता है, जब वह प्रचलित मजदूरी की दर पर कार्य प्राप्त करने योग्य होता है। तथा जब वह श्रम बाजार में प्रचलित मजदूरी की दर पर कार्य प्राप्त नहीं कर पाता, तो वह बेरोजगार होता है।''[2]

वर्तमान में प्रत्येक अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की प्राप्ति एक साहसिक कार्य है। पूर्ण रोजगार शब्द एक औपचारिक धारणा है। सामान्यतः पूर्ण रोजगार से आशय है कि जब देश के शत प्रतिशत काम करने योग्य एवं इच्छुक व्यक्ति किसी न किसी धन्धे में नियोजित हो तो वह पूर्ण रोजगार की स्थिति होगी।

कीन्स ने अनैच्छिक बेरोजगारी के अभाव को पूर्ण रोजगार कहा है। कीन्स के शब्दों में ''अनैच्छिक बेरोजगारी एक ऐसी स्थिति है जिसमें मुद्रा मजदूरी की तुलना में वस्तुओं में मजदूरी के मूल्य में थोड़ीसी वृद्धि होने से वर्तमान मुद्रा मजदूरी पर कार्य करने के इच्छुक कुल मजदूरों की पूर्ति और उस मजदूरी पर कुल मांग वर्तमान रोजगार की मात्रा की तुलना में अधिक होंगे।''[3]

अनुभवों से यह देखा गया है कि देश की कुल श्रमशक्ति का 2–3 प्रतिशत भाग सामान्यतः बेकार रहता है। अतः यदि किसी देश में 95 से 98 प्रतिशत तक श्रम शक्ति को काम मिला हुआ है तो इस स्थिति को पूर्ण रोजगार की स्थिति कहा जाएगा। अर्थात् अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति होने के बाद भी विभिन्न प्रकार की गैर चक्रीय बेरोजगारी न्यूनाधिक मात्रा में देखने को मिल सकती है।

भारत जैसे अल्पविकसित और विकासशील देश में बेरोजगारी की समस्या मुख्यतः जनसंख्या के आकार पूंजीगत संसाधनों की कमी तथा नवीन तकनीक के अभाव में उच्च पूंजी उत्पाद तथा उच्च श्रम उत्पाद अनुपात की दर हैं। इन कारणों से उत्पन्न बेरोजगारी को

---

1. मार्क्स ने रिकार्डो, मिल और उनके पूर्णवर्ती अर्थशास्त्रियों को प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री की संज्ञा दी थी। परन्तु कीन्स ने मिल, मार्शल, पीगू, एलवर्थ जैसे अर्थशात्रियों को भी प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री माना है।
2. प्रो.जे.के. मेहता, फाउण्डेशनस ऑफ एकानोमिक्स पृष्ठ 51 ।
3. प्रो.जे.एम.कीन्स , जनरल थ्योरी ऑफ एम्पलाअमेन्ट, इन्टरेस एण्ड मनी (लन्दन 1959) पृ015

संरचनात्मक बेरोजगारी कहा जा सकता है। प्रश्न यह है कि भारत जैसे निर्धन और विकासशील देश में, जहां बेकारी का प्रमुख कारण जनसंख्या का आकार है, दूसरें शब्दों में श्रम शक्ति का बाहुल्य हैं, ऐसे देश में उत्पादन की कौन सी तकनीकी अपनायी जाए कि बेकारी की समस्या का निदान भी हो सके और यह देश विकसित देशों के साथ आर्थिक विकास के पक्ष पर चल सके।

उत्पादन, तकनीकी, मुख्यतः दो प्रकार की होती है।

1. श्रम प्रधान तकनीकी
2. पूंजी प्रधान तकनीकी

श्रम प्रधान तकनीकी में जैसा कि स्पष्ट है श्रम की अधिक और पूंजी की कम आवश्यकता होती है। इसलिये इसे ''पूंजी बचाव'' विधि भी कहते हैं। इसके विपरीत पूंजी प्रधान तकनीकी में पूंजी की अधिक और श्रम की कम आवश्यकता पड़ती है। इसलिये ''श्रम बचाव'' विधि भी कहते हैं। प्रति श्रमिक पूंजी की जितनी अधिक मात्रा प्रयुक्त होगी पूंजी की गहनता उतनी ही अधिक होगी।

अर्द्धविकसित देशों के विकास के लिये उपरोक्त दोनों ही विधियों का विद्वानों ने समर्थन किया है।

## श्रम प्रधान तकनीकी :-

विद्वानों के एक वर्ग का मानना है कि एक ऐसी अर्थव्यवस्था जहां श्रम की बहुलता और पूंजी की कमी हो, वहां पर श्रम प्रधान तकनीकी को अपनाना अधिक उपयुक्त होगा। इन राष्ट्रों के लिए यह बुद्धिमानी नहीं होगी कि अपने सीमित साधनों के उपयोग के लिये विकसित राष्ट्रों की तकनीकी की नकल करें। यदि वे ऐसा करते हैं तो इसका तात्पर्य हुआ कि हम उत्पादन की ओर ''प्रदर्शन प्रभाव'' को चाहते हैं इसका सीधा आशय है कि ''वह राष्ट्र चलना जानने से पूर्व दौड़ने का प्रयत्न कर रहा है।''

प्रो0 किन्डलवर्गर ने भी स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ''इस विधि के अपनाने से पूंजी का अपव्यय होता है क्योंकि इस प्रणाली में संकीर्ण क्षेत्र में पूंजी का उपयोग अत्यन्त गहराई से होता है, परन्तु लाभादायक विनियोगों को छोड़ना पड़ता है।''[1]

प्रो0 रैग्नर नर्क्स ने भी – ''इसी विचार को मान्यता देते हुए कहा है कि ''भारी जनसंख्या वाले राष्ट्रों को चाहिए कि जनशक्ति से अधिक काम ले अपेक्षाकृत मशीन से।'' इसके परिणाम स्वरूप अदृश्य बेकारी की मात्रा में कमी आयेगी।

इन बातों को ध्यान में रखते हुए तकनीकों के चुनाव की समस्या केवल इतनी रह जाती है कि उत्पादन बढ़ाने वाली वे तकनीकें अपनाई जाएें जो पूंजी की प्रति इकाई श्रम उत्पादकता में वृद्धि करें और पूंजी लघु तथा श्रम प्रधान हों। उत्पादन पर श्रम प्रधान तकनीकों के प्रभाव को रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

---

1. प्रो. किन्डलवर्गर, एकोनोमिक डेवलपमेन्ट – पृ0 164 ।
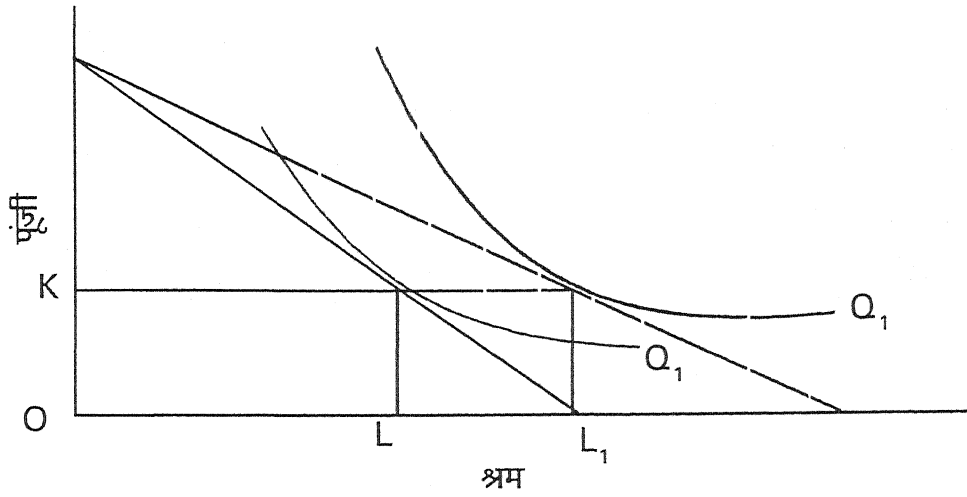
मूल रूप से अर्थव्यवस्था में पूंजी की ok मात्रा तथा श्रम की oL मात्रा रोजगार में लगा करके सममात्रा वक्र Q द्वारा व्यक्त निर्गत का उत्पादन किया जा रहा था। अब नई तकनीक के साथ, पूंजी की वही OK मात्रा, निर्गत के अपेक्षाकृत अधिक उत्पादन में सहायक है, जिसे अधिक ऊंची सममात्रा $Q_1$ प्रकट करती है और साथ ही अधिक श्रम $LL_1$ प्रयोग में लाती है। ऐसी तकनीकों को चाहिए कि कुशलता तथा पूंजी निर्माण के युगल उद्देश्यों को पूरा करें। छोटी सिंचाई स्कीमों, अच्छे औजारों तथा उपकरणों के प्रसार, उतनी ही भूमि से अधिक उपज देने वाली अल्पावधिक फसलों के प्रवर्तन, खाद तथा अधिक उपज देने वाले बीजों के प्रयोग आदि के माध्यम से कृषि उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। भारत में क्षेपण – भरनी (Throw Shuttle) के स्थान पर उड्डयन भरनी (Fly-shuttle) की स्थानापन्नता से हथकरघा बुनकर की उत्पादकता 50 प्रतिशत बढ़ी।[1]

परन्तु पूंजी की कमी तथा कुशलता के अभाव द्वारा निर्धारित सीमाओं के कारण अधिकांश अल्पविकसित देश उत्पादन बढ़ाने वाली श्रम प्रधान तकनीकों का प्रयोग करने में असमर्थ रहते हैं। इसके अतिरिक्त, जैसा कि बर्ट होजलिट्स[2] ने अपने शोध पत्रों के आधार पर स्पष्ट किया है, ऐसी अर्थव्यवस्थाओं में अनेक आर्थिक, सामाजिक तथा प्रशासकीय रूकावटें लोगों को विवश करती हैं कि वे उत्पादन की उत्पादन वर्धक विधियों की बजाय पुरानी तकनीकों के प्रयोग को अधिमान दें।

---

1. Report of the fact finding Committe (Handloom and mills) Govt. of India P. 195.
2. Bert F. Haselitz. "Problems of adopting communicating Modern techniques to Less Developed areas "Economic Development and cultrural change Jan 1954 P.P. 249-69.

## पूंजी प्रधान तकनीकी :-

सामान्य रूप से दूसरा विकल्प यह सुझाया जाता है कि पूंजी प्रधान तकनीकों का प्रयोग किया जाए। क्योंकि अल्पविकसित देश उन्नत देशों के प्रधान प्रौद्योगिकीय विकास के मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकते, इसलिये उन्हें चाहिए कि उन्नत देशों की प्रौद्योगिकी का विस्तृत पैमाने पर प्रयोग करें। रेखाचित्र उन्नत प्रौद्योगिकी के प्रयोग को प्रकट करता है जो कि पूंजी प्रधान है।
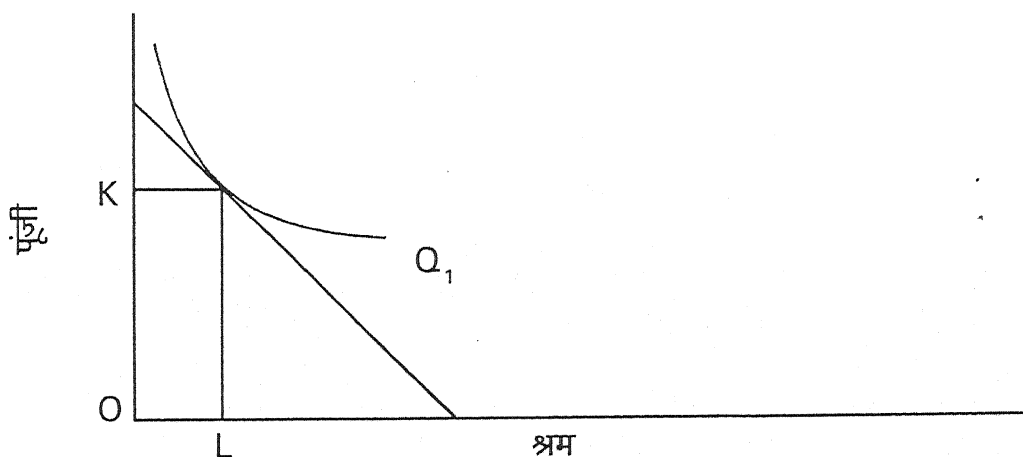
यह OL श्रम के अनुपात में अधिक पूंजी OK का प्रयोग करती है। इस कल्पना पर कि सममात्रा वक्र $Q_2$ श्रम प्रधान तकनीक के $Q_1$ से ऊपर हैं। इस तकनीक में उत्पादन का स्तर अधिक ऊँचा है। जैसा कि गलेन्सन तथा लीबन्स्टीन का मत है कि ''सफल आर्थिक विकास विशिष्ट रूप से पूर्ण पिछड़ेपन के रहते हुए, इस बात पर निर्भर रहता है कि जितने बड़े पैमानें पर सम्भव हो सके, आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रवर्तन किया जाए।''[1] आय पर सतत तथा संयोजन प्रभाव'' के लिए उन्नत तकनीकें अनिवार्य समझी जाती है। फिर उनका प्रयोग, परम्परागत कार्यकारी आदतों जीवन स्थितियों तथा लोगों के पूर्ण दृष्टिकोण में परिवर्तन करने में सहायक होगा।

विद्वानों के दूसरे वर्ग ने अधिक प्रावैगिक विचारधारा का प्रतिपादन किया है। उनका कहना है कि श्रम प्रधान विनियोग का लाभ उठाने के लिये यह आवश्यक है कि पूंजी प्रधान तकनीकी अपनायी जाए। इन विद्वानों का यह मत इस का स्पष्टीकरण है कि पूंजी प्रधान आधुनिक तकनीक को अर्थव्यवस्था के बढ़ते हुये बिन्दुओं पर प्रयोग किया जाए ताकि एक बार विकास आरम्भ हो जाये तो पूंजी की अधिकता बढ़ेगी। जिसके फलस्वरूप अर्थव्यवस्था के दूसरे क्षेत्रों पर भी बड़े पैमाने पर आधुनिक तकनीक का प्रयोग सम्भव हो सकेगा।

प्रस्तुत रेखाचित्र में दोनों विधियों की तुलना की गयी है। दोनो तकनीक में "A" तकनीक में "B" की अपेक्षा श्रमिकों की कम मात्रा प्रयुक्त की जाती है, जबकि "A" तकनीक में "B" की

---

1. W. Galenson and H. Leibenstein. " Investment Criteria. Production and Economic Development" Quarterly Journal of Economics. August. 1955.

तुलना में पूंजी की मात्रा अधिक है।
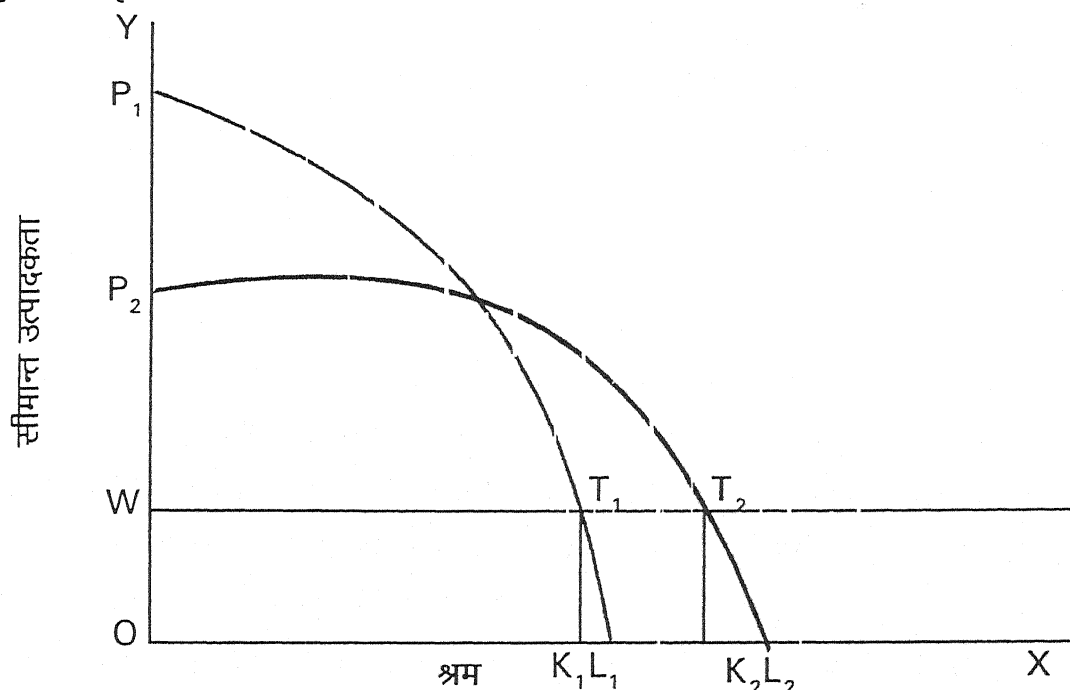
$P_1L_1$ वक्र तकनीक – A की श्रम की सीमान्त उत्पादकता को प्रदर्शित करता है। और $P_2L_2$ तकनीक 'B' की श्रम की सीमान्त उत्पादकता को दर्शाता है। दोनों तकनीकों में मजदूरी की दर समान है अर्थात OW है। दोनों तकनीकों का परिणाम इस प्रकार होगा।

| विवरता | तकनीक A (पूंजी प्रधान) | तकनीक B (श्रम प्रधान) |
|---|---|---|
| रोजगार | $OK_1$ | $OK_2$ |
| कुल उत्पादन | $P_1K_1T_1O$ | $P_2K_2T_2O$ |
| कुल अर्जित मजदूरी | $WT_1K_1O$ | $WT_2K_2O$ |
| अतिरेक | $P_1T_1W$ | $P_2T_2W$ |

दोनों तकनीकों में से कौन सी तकनीक अधिक अतिरेक उपलब्ध कराएगी, यह इस बात पर निर्भर होगा कि $P_1T_1W$ क्षेत्र बड़ा है। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इन दोनों मार्गों में उद्देश्य सम्बन्धी बहुत ही कम अन्तर है। प्रथम दृष्टिकोण में रोजगार और उत्पादन को बढ़ाकर विकास की आशा की जाती हैं और दूसरे दृष्टिकोण में अर्थव्यवस्था के बढ़ते हुये बिन्दुओं पर भारी मात्रा में पूंजी विनियोग किया जाता है ताकि पूंजी निर्माण की दर में वृद्धि हो और फिर रोजगार और उत्पादन का विस्तार करके विकास को प्राप्त किया जा सके।

जहां तक भारत जैसे विकासशील राष्ट्र का प्रश्न है तो यहां ऐसी प्राविधि का प्रयोग करना ही उचित होगा जो अतिरिक्त जनशक्ति का पूर्ण उपयोग कर सके। कारण है कि भारत में कृषि की प्रधानता है और श्रमाधिक्य की स्थिति है। संयुक्त राष्ट्र संघ के एक अध्ययन में यह सुझाव दिया गया है कि जनसंख्या की उच्चवृद्धि दर एवं निम्न बचत दर वाली अर्थव्यवस्था के लिए अपने

निवेश कार्यक्रम में भारी उद्योगों जैसे पूंजीगहन योजनाओं की तुलना में कृषि जैसी शीघ्र फल देने वाली योजनाओं को प्रधानता देना अधिक उत्तम होगा।[1]

प्रतिस्पर्द्धात्मक रणनीति के पितामाह माइकस ई0 पोर्टर का कहना है कि प्रतिस्पर्द्धा सिर्फ बड़े आर्थिक सुधारों पर ही नहीं बल्कि आर्थिक बदलावों पर भी निर्भर करती है। पूंजी निवेश की उच्चदर अपने आप में उत्पादकता नहीं बढ़ा सकती। निवेश को प्रभावी बनाने के लिये अनुकूल कौशल और सहायक उद्योगों की मौजूदगी आवश्यकता है।

संरचनात्मक बेरोजगारी को दूर करने के लिये दूसरे उपाय श्रम उत्पाद अनुपात में कमी की दर को कम करना है। दीर्घकालिक टैक्नालाजिक बेरोजगारी की सम्भावना से ग्रस्त अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में पूंजी संचय के द्वारा बेरोजगार व्यक्तियों को रोजगार देना सम्भव नहीं है। अतः बेरोजगारी को न्यूनतम करने के लिये श्रम बचाने वाले उपायों का प्रतिरोध करना होगा।

यहां दो कठिनाइयां सामने आती है। प्रथम श्रम बचाने वाले उपायों के प्रतिरोध से श्रम की उत्पादकता में कमी हो सकती है। वास्तव में यह आत्मघाती है क्योंकि बचत अनुपात दिया हुआ होने पर पूंजी उत्पाद अनुपात के उच्च होने पर पूंजी में इतनी वृद्धि हो सकती है जितनी कि इसके निम्न होने पर।

दूसरी कठिनाई यह है कि श्रम की उत्पादकता की वृद्धि दर में अन्तनिहित हासपूर्ण वर्णित विकास की सामाजिक श्रेष्ठतम दर की धारणा से असम्बद्ध हैं, क्योंकि दीर्घकाल में बढ़ते हुए जीवन स्तर को निम्न बनाये बगैर ही दीर्घकालिक टैक्नालाजिकल बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त नवीन प्राविधि के प्रयोग के मार्ग में भारत जैसे विकासशील देश के सामने अनेक कठिनाइयां है। लोग जातिवाद धर्मवाद और पुरानी परम्परागत रूढ़ियों में बंधे हुये हैं और वे नई परिस्थितियों को आसानी से नहीं अपना पाते हैं। उत्पादन का कार्य वे पुरानी प्रणालियों के आधार पर ही करना पसन्द करते हैं।

पूंजी का अभाव उन्नत प्राविधि विधि में विकास होने से आर्थिक विकास लाभान्वित नहीं होगा। पूंजी की सहायता से ही नवीन प्राविधि के लाभ एवं उत्पादन की प्रक्रिया को विकसित किया जा सकता है। जिन अल्पविकसित देशों ने आर्थिक विकास के मार्ग का अनुसरण अभी प्रारम्भ ही किया है, उनके लिए यह ज्यादा अच्छा है कि वे विकासशील देशों से उद्‌भुत होने वाली सुपरीक्षित पूंजी बचतकारी, श्रम प्रधान, उत्पादकता वर्धक प्रौद्योगिकी अपनाऐं। उदाहरण के लिये, भारत बहुत सारे स्वदेशीय रूपांकित कृषि औजारों का निर्माण करता है जैसे कि यान्त्रिक हल, अनेक प्रकार के पशुचालित हल, हाथ के औजार, सिंचाई उपस्कर, दुग्धालय और मुर्गी पालन उपस्कर आदि, जो उसी प्रकार के देशों के साधन अनुपातों में बिना किसी कठिनाई के अपनाऐ जा सकते हैं। यह उपयुक्त प्रौद्योगिकी के सिवाय और कुछ भी नहीं है।

---

1. यू.एन.ओ. एकानोमिक बुलैटिन फार एशिया एण्ड फार द ईस्ट – नवम्बर 1955 ।

प्रमुख अर्थशास्त्री वकील तथा ब्रह्मानन्द भी इसके पक्ष में है जब वे कहते हैं कि प्रत्येक देश को अपना उद्धार का मार्ग निकालना पड़ता है और विशिष्ट रूप से यह पता लगाना पड़ता है कि उसके लिए उत्पादन का कौन सा तरीका उपर्युक्त है।[1] उन्होंने अल्पविकसित देशों में निम्नलिखित तकनीकों के प्रयोग की सिफारिश की है:

(i) जिन्हें कम समय में आसानी से सीखा जा सके,

(ii) जिनके लिये थोड़े प्रारम्भिक निवेश की आवश्यकता हो

(iii) जो निवेश पक्वनावधि घटाऐं

(iv) जिनके लिये विशिष्टीकृत तथा कुशल श्रम में कम निवेश की आवश्यकता हो

(v) जो श्रम की बजाय दुर्लभ साधनों की बचत करें

(iv) जो उत्पादन का स्तर बढ़ाऐं और खनिज पदार्थो और बिजली की आपूर्तियों में वद्धि करें।

ये मार्गदर्शक रूपरेखाऐं विकासशील देशों में उनकी स्थानीय स्थितियों के अनुकूल उपर्युक्त प्रौद्योगिकी के प्रयोग की ओर संकेत करती हैं। जैसा कि हैनरी ओब्रे ने बल पूर्वक कहा है ''सीमित पूंजी पूर्ति को कुछ बड़े उद्यमों में झोंक देने के बजाय एकदम कई स्थानों पर प्रौद्योगिकी में धीरे धीरे सुधार करने की विधि अधिक उपुर्यक्त हैं।''[2] यह प्रौद्योगिकी कई तरह से लाभदायक है। यह विविध क्षेत्रों में विभिन्न तकनीकों के प्रयोग से प्राप्त होने वाले लाभों का प्रसार समस्त जनसंख्या में अधिक समानता से करती है। सब स्तरों पर दक्षता निर्माण में सहायक होती है। औसत उत्पादकता, आय स्तर तथा मार्केट के आकार में वृद्धि करती है। यह अधिक रोजगार और उचित धन के वितरण को प्रोत्साहित करती है तथा आत्म निर्भरता की ओर मार्ग तैयार करती है। उत्पादन की पूंजी लघु तथा श्रम प्रधान विधियों से आधुनिक पूंजी प्रधान विधियों पर परिवर्तन की प्रौद्योगिकी अल्पविकसित देशों के औद्योगीकरण की प्रारम्भिक अवस्थाओं में सबसे अधिक उपुर्यक्त होती है। ऐसी प्रौद्योगिकी केवल उपलब्ध पूंजी साधनों के प्रयोग में ही मितव्ययिता नहीं लाएगी बल्कि रोजगार के अधिक सुअवसर भी उत्पन्न करेगी। कृषि तथा निर्मित उपभोक्ता वस्तुओं की पूर्ति बढ़ाकर, यह खाद्य तथा कच्चे माल के आयात करने की आवश्यकता से छुटकारा लाएगी। अधिक पूंजी वस्तुओं का आयात करना भी आवश्यक नहीं होगा। इस प्रकार यह प्रौद्योगिकी स्फीतिकारी दबावों तथा भुगतान शेष की कठिनाइयों को रोक सकेगी, जोकि विकास प्रक्रिया में अन्तर्निहित रहती है।

प्रो0 लुइस लिखते हैं कि ''उन्नतिशील सरकार का प्रथम कार्य होता है कि कृषि के क्षेत्र में अपनी जनता में नये ज्ञान और जीवन की नयी पद्धतियों के प्रति उत्साह पैदा करे।''

पूर्ण रोजगार की स्थिति को प्राप्त करने के लिये देश में निजी विनियोग को इतना प्रोत्साहित करना चाहिए कि उससे प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से उत्पन्न मांग को पूर्ण रोजगार द्वारा

1. C.N. Vakil, Poverty and planning P. 171.
2. Henry Gf. Aubrey. "Small Industry in Economic Development" Social Research September. 1951.

पूरा किया जा सके। निजी विनियोग द्वारा यह निश्चित हो जाता है कि विनियोग स्तर एवं दीर्घकालीन पूर्ण रोजगार उत्पादन की वृद्धि के अनुपात में वृद्धि करता है। इसके अतिरिक्त सार्वजनिक विनियोग के द्वारा रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है। जनता की क्रय शक्ति बढ़ जाती है। उपभोग व्यय में वृद्धि होती है। तथा बजट घाटों में कमी आती है। आय के पुर्नवितरण के द्वारा भी पूर्ण रोजगार की स्थिति तक पहुंचना सम्भव हो सकता है। धनी वर्ग से निर्धन वर्ग को आय के हस्तान्तरण होने से देश में कुल उपभोग में वृद्धि होगी और निजी विनियोग भी हतोस्तसाहित नहीं होगा। आय का वितरण न्यायपूर्ण ढंग से करने के लिये आय कर प्रणाली ही उपयुक्त मानी जाती है। इस प्रकार निजी विनियोग को प्रोत्साहन देकर सार्वजनिक विनियोग का विस्तार एवं धन के पुर्नवितरण के द्वारा यदि पूर्ण रोजगार की स्थिति को नहीं प्राप्त किया जा सकता है तो रोजगार के उच्च स्तर तक तो पहुंचा ही जा सकता है। क्योंकि आधुनिक अर्थशास्त्री पूर्ण रोजगार को एक अवास्तविक स्थिति मानते हैं।

# भारत में बेरोजगारी की स्थिति -

यह ज्ञात करना अत्यन्त कठिन कार्य है कि भारत में बेरोजगारी की संख्या कितनी है। इस सम्बन्ध में विश्वसनीय ऑकड़े उपलब्ध नहीं है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (Nsso) अपने पंचवर्षीय सर्वेक्षणों के जरिए श्रम बल और बेरोजगारी के सम्बन्ध में व्यापक ऑकड़े एकत्र करता है। एन.एस.एस.ओ. के 55वें दौर 1999-2000 के परिणामों के अनुसार चालू दैनिक प्रास्थिति (सी.डी.एस.) के आधार पर रोजगार में वृद्धि की दर 1983-1994 के 2.7 प्रतिशत प्रतिवर्ष के स्तर से कम होकर 1994-2000 के 1.07 प्रतिशत प्रतिवर्ष के स्तर पर आ गयी। 1990 के दशक में रोजगार वृद्धि की दर में आई गिरावट सकल घरेलू उत्पाद की अपेक्षाकृत ऊँची वृद्धि से जुड़ी थी जो उत्पादन प्रक्रिया में श्रम की प्रधानता में गिरावट को प्रदर्शित करती है।

भारत में बेरोजगारी के परिदृश्य को सारणी 23 से समझा जा सकता है।

सारणी - 23

रोजगार और बेरोजगारी (सी.डी.एस आधार)

| | मिलियन | | | वृद्धि प्रतिवर्ष (%) | |
|---|---|---|---|---|---|
| | 1983 | 1993-94 | 1999-2000 | 1983से93-94 | 1993-94से2000 |
| **समग्र भारत** | | | | | |
| जनसंख्या | 718.20 | 894.01 | 1003.97 | 2.00 | 1.95 |
| श्रमिक बल | 261.33 | 335.97 | 363.33 | 2.43 | 1.31 |
| कार्यबल | 239.57 | 315.84 | 336.75 | 2.70 | 1.07 |
| बेरोजगारीदर (%) | 8.30 | 5.99 | 7.32 | - | - |
| बेरोजगारी की संख्या | 21.76 | 20.13 | 26.58 | 0.08 | 4.74 |
| **ग्रामीण** | | | | | |
| जनसंख्या | 546.61 | 658.83 | 727.50 | 1.79 | 1.67 |
| श्रमिक बल | 204.18 | 255.38 | 270.39 | 2.15 | 0.96 |
| कार्यबल | 187.92 | 241.04 | 250.89 | 2.40 | 0.67 |
| बेरोजगारीदर (%) | 7.96 | 5.61 | 7.21 | - | - |
| बेरोजगारी की संख्या | 16.26 | 14.34 | 19.50 | 1.19 | 5.26 |
| **शहरी** | | | | | |
| जनसंख्या | 171.59 | 234.98 | 276.47 | 3.04 | 2.74 |
| श्रमिक बल | 57.15 | 80.60 | 92.95 | 3.33 | 2.40 |
| कार्यबल | 51.64 | 74.80 | 85.84 | 3.59 | 2.32 |
| बेरोजगारीदर (%) | 9.64 | 7.19 | 7.65 | - | - |
| बेरोजगारी की संख्या | 5.51 | 5.80 | 7.11 | 0.49 | 3.45 |

स्रोत - योजना आयोग (आर्थिक - समीक्षा - 2003 - 04)

एन.एस.एस.ओ. के 55 वें दौर (1999–2000) से उभरने वाले कुछ निष्कर्ष इस प्रकार हैं – रोजगार में वृद्धि की दर में आई गिरावट श्रमिक बल की वृद्धि दर में हुई तीव्र गिरावट से जुड़ी थी।

बेरोजगारों की समग्र संख्या 1993–94 के 20 मिलियन से बढ़कर 1999–2000 में 27 मिलियन हो गई। साथ ही बेरोजगारी का अनुपात भी 1993–94 के 5.99 प्रतिशत से बढ़कर 1999–2000 में 7.32 प्रतिशत हो गया। 1994 में रोजगार की समग्र वृद्धि दर में हुई गिरावट का मुख्य कारण कृषि क्षेत्र में रोजगार की लगभग गति हीनता की स्थिति का होना था। इसके परिणाम स्वरूप कुल रोजगार में कृषि का अंश 1993–94 के 60 प्रतिशत से काफी कम होकर 1999–2000 में 57 प्रतिशत हो गया।

दूसरी ओर सेवाओं के अन्दर सभी उप क्षेत्रों में जैसे व्यापार, होटल, रेस्तरा, परिवहन, भण्डारण, संचार और वित्तीय तथा व्यावसायिक सेवाओं में रोजगार वृद्धि 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष से अधिक हो गयी।

विगत वर्षो की भांति ही कुल रोजगार में अनियमित मजदूरी का हिस्सा बढ़ गया।

12 जुलाई – दिसम्बर 2002 के सम्बन्ध में एन.एस.एस.ओ. के वार्षिक दौर से उपलब्ध हुये रोजगार के कुछ अनुमान दर्शाते हैं कि सामान्य प्रास्थिति के आधार पर देश में रोजगार में 1994–2000 के दौरान हुयी 1.07 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि की तुलना में 2000–2002 (जुलाई–दिसम्बर) के दौरान 2.07 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हुई। समग्र तौर पर वर्ष 2000–2002 (जुलाई–दिसम्बर) के दौरान, पुनः सामान्य प्रास्थिति आधार पर रोजगार में दसवीं योजनावधि में रोजगार के लगभग 5 करोड़ अबसर अर्थात् प्रतिवर्ष 1 करोड़ रोजगार अवसर सृजित करने के लक्ष्य की तुलना में औसतन 84 लाख प्रतिवर्ष की वृद्धि हुयी। तथापि ये अनुमान हल्के प्रतिमानों पर आधारित है। जिनमें बड़े पैमानें पर प्रतिमानों सम्बन्धी त्रुटियाँ हो सकतीं हैं।

दसवीं योजनावधि में प्रतिवर्ष रोजगार के 1 करोड़ अवसर सृजित करने के लक्ष्य पर नजर रखने वाले योजना आयोग द्वारा गठित एक विशेष समूह ने गत दशक की तुलना में अर्थव्यवस्था में हुये समग्र विकास निष्पादन में सुधार के बावजूद 1993–94 और 1999–2000 के दौरान् जनसंख्या वृद्धि दर श्रमिक बल में गिरावट लेकिन बेरोजगारी में छुपी वृद्धि को नोट किया था।

1994–2000 के दौरान रोजगार विस्तार में हुयी गिरावट को ध्यान में रखते हुये विशेष समूह ने सिफारिश की है कि वृद्धि की वर्तमान संरचना की प्रक्रिया में सृजित रोजगार के अतिरिक्त कुछ पहचानी गयी श्रम प्रधान गतिविधियों को बढ़ावा देने की जरूरत है। ये क्षेत्र हैं, कृषि एवं सहबद्ध क्षेत्र, लघु एवं मध्यम उद्योग, सूचना प्रौद्योगिकी, निर्माण, पर्यटन, वित्तीय क्षेत्र, शिक्षा एवं स्वास्थ्य इत्यादि। इन श्रम प्रधान क्षेत्रों में उपुर्यक्त नीतिगत उपाय करने से दसवीं योजनावाधि के दौरान 20 मिलियन अतिरिक्त नौकरियां सृजित की जा सकती है। इस रिपोर्ट में प्रति वर्ष रोजगार के 1 करोड़ अवसर पैदा करने के लिये कार्यक्रमों/लक्ष्यों की पहचान की गयी। योजना आयोग के तत्कालीन सदस्य (डॉ0 एस0पी0गुप्ता) की अध्यक्षता में योजना आयोग ने राज्य स्तर पर रोजगार कार्यनीतियों और रोजगार मानीटरिंग के सम्बन्ध में एक और कृतिक बल गठित किया जिसमें राज्यों और मुख्य केन्द्रीय मंत्रालयों/विभागों के प्रतिनिधि शामिल थे।

देश के कुल कार्यबल का एक छोटा सा भाग ही (8 से 9 प्रतिशत) संगठित क्षेत्र में कार्य करता है। 31 मार्च 2002 तक की स्थिति के अनुसार संगठित क्षेत्र में रोजगार की स्थिति 27.2 मिलियन थी, जिसमें से 69 प्रतिशत या 18.8 मिलियन सरकारी क्षेत्र में थे। सरकारी क्षेत्र में रोजगार में वर्ष 2001 की तुलना में 2002 में 1.9 प्रतिशत की गिरावट होने से वर्ष 2002 में संगठित क्षेत्र में 2.1 प्रतिशत की तदनुरूप गिरावट हुई। सरकारी क्षेत्र में रोजगार में गिरावट जो सोच समझ कर लिए गये नीतिगत निर्णय को प्रतिबिम्वित करती हैं? संगठित निजी क्षेत्र के रोजगार में हुई गिरावट के कारण और भी अधिक हो गयी।

जहाँ तक उत्तर प्रदेश में रोजगार परिदृश्य का प्रश्न है – उत्तर प्रदेश में वर्ष 1991–2000 में रोजगार के 49387 अवसर उपलब्ध थे, जो वर्ष 1993–94 से 1999–2000 की तुलना में 1.02 प्रतिशत प्रतिवर्ष अधिक थे। वर्ष 1999–2000 में प्रदेश में बेरोजगारी की दर 4.08 प्रतिशत थी। जबकि 1993–94 में बेरोजगारी का प्रतिशत 3.45 था। अतः स्पष्ट है कि वर्तमान में बेरोजगारी की मात्रा प्रदेश में बढ़ी है।

जनपद झाँसी में बेरोजगारी के व्यापक ऑकड़े उपलब्ध ही नहीं हैं। रोजगार कार्यालय की अपूर्ण जानकारी जनपद में बेरोजगारी की संख्या निर्धारित नहीं कर सकती। जनपद में वर्ष 2001 में कुल जनसंख्या 1744931 थी, इस जनसंख्या का 34.94 प्रतिशत विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत था।

सारणी – 24

जनपद झाँसी में कार्यशील जनसंख्या का विवरण

| कुल जनसंख्या (2001) | कार्यशील जनसंख्या | कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत |
|---|---|---|
| 1744931 | 609679 | 34.94 |

| क्रम | व्यवसाय | कार्यरत जनसंख्या | कार्यरत जनसंख्या का प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 1. | कृषक | 244725.15 | 40.14 |
| 2. | कृषि श्रमिक | 082001.82 | 13.45 |
| 3. | पशुपालन | 005365.17 | 0.88 |
| 4. | उद्योग खनन | 001158.39 | 0.19 |
| 5. | पारिवारिक | 017985.53 | 2.95 |
| 6. | गैर पारिवारिक | 030483.95 | 5.00 |
| 7. | निर्माण कार्य | 000548.71 | 0.09 |
| 8. | व्यापार एवं वाणिज्य | 038653.64 | 6.34 |
| 9. | यातायात एवं संग्रहण | 030362.01 | 4.98 |
| 10. | अन्य कर्मकार | 064443.07 | 10.57 |
| 11. | सीमान्त कर्मकार | 093951.50 | 15.41 |
| | | 609679.00 | 100 |

# जनपद झाँसी में कार्यशील जनसंख्या का विवरण प्रतिशत में
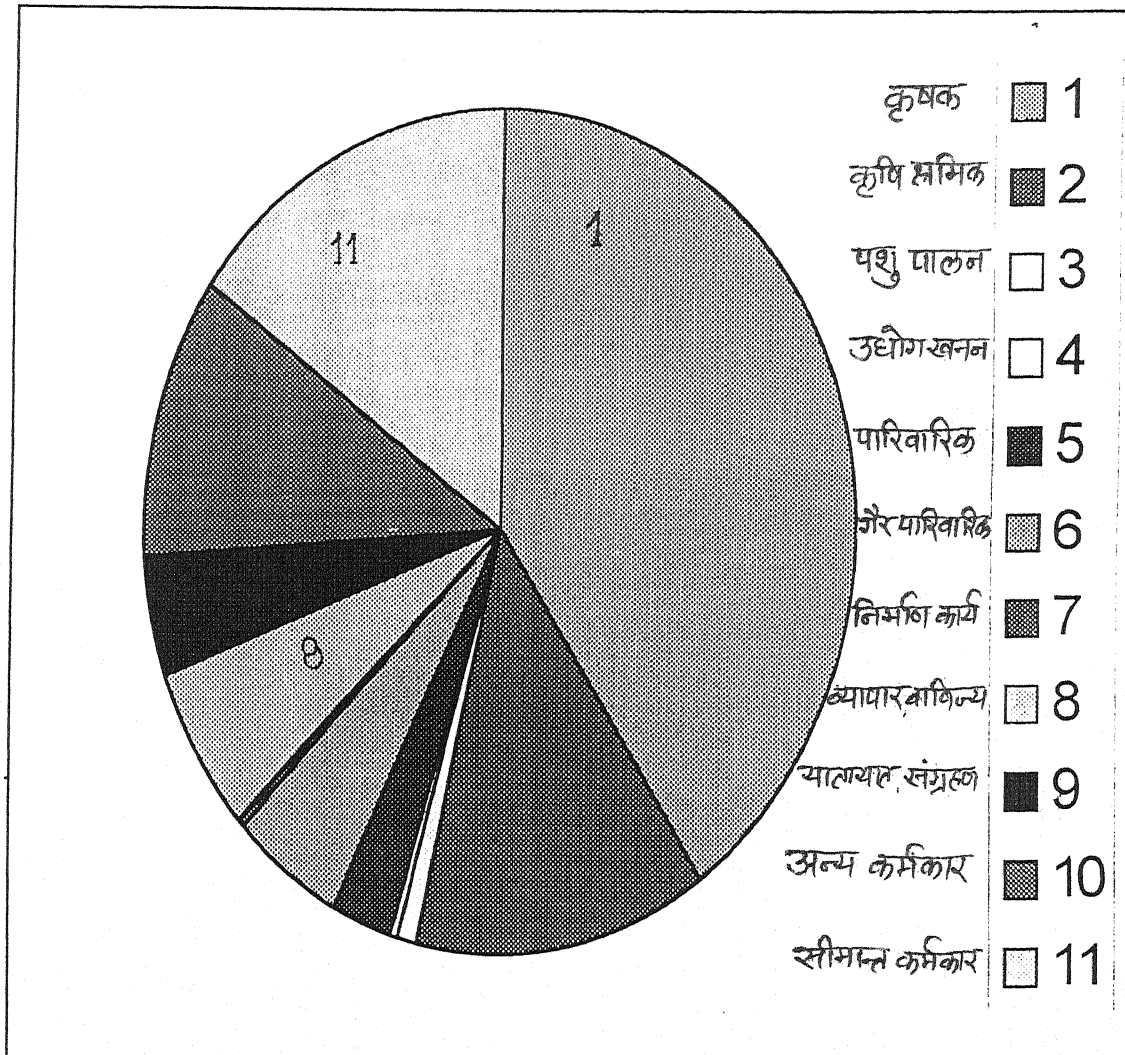
सांख्यिकी कार्यालय जनपद झाँसी से उपलब्ध ऑकड़ों के आधार पर वर्ष 2001 की कुल कार्यरत जनसंख्या का अधिकांश भाग कृषि क्षेत्र और प्रारम्भिक व्यवसायों में लगा है। इसके अतिरिक्त एक तथ्य और स्पष्ट करने योग्य है कि सीमान्त कर्मकारों का कुल कार्यशील जनसंख्या में 15.41 प्रतिशत है। ये वे व्यक्ति हैं जिन्हें वर्ष भर रोजगार के अवसर बड़ी कठिनता से उपलब्ध होते हैं। कृषि क्षेत्र में लगे हुये व्यक्तियों को मौसमी बेरोजगारी का सामना करना होता है। कुल मिलाकर निष्कर्ष यह निकलता है कि जनपद के आंतरिक अंचलों में रोजगार के अवसरों की मात्रा बहुत कम है। ग्रामीण क्षेत्रों में औसतन 140 दिन रोजगार के अवसर उपलब्ध रहते हैं। अन्य क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों को सृजित करने के मार्ग में सबसे बड़ी बाधाऐं यहां अशिक्षा, अज्ञानता, रूढ़ियाँ, पूंजीगत संसाधनों की कमी, श्रम की गतिशीलता में कमी, यातायात, परिवहन, सूचना प्रसारण के साधनों में कमी आदि है।

## बेरोजगारी और ग्राम्य विकास योजनाऐं:-

यह स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्रों की तुलना में गांवों में और शिक्षित वर्ग की तुलना में अशिक्षित वर्ग में बेरोजगारी अधिक व्याप्त है। इस बेकारी को दूर करने के लिए हमें निवेश का रूख ग्रामीण क्षेत्रों और अधोसंरचना की ओर करना होगा। भारी निवेश की अपनी सीमाऐं है और भारी निवेश रोजगार सृजन के अवसरों में तब तक फलदायी सिद्ध नहीं होगा जब तक कि मानवीय संसाधनों का विकास शिक्षण और प्रशिक्षण द्वारा नहीं किया जाता। यदि हम भारी निवेश द्वारा रोजगार सृजन की बात करते हैं तो यह एक पक्षीय विचार होगा और श्रमशक्ति की मांग और पूर्ति में व्यापक असन्तुलन पैदा करेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों की बेरोजगारी को दूर करने के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में सरकार द्वारा अनेक प्रयत्न किये गये हैं। गरीबी और बेकारी एक दूसरे के पर्याय बन गये हैं अतः ग्रामीण विकास मंत्रालय ग्रामीण इलाकों में समुचित विकास के लिए मुख्य तौर पर दो प्रकार के कार्यक्रम चला रहा है। एक तो रोजगार एवं ग्रामीण आधारभूत ढॉचे से सम्बन्धित कार्यक्रम और दूसरा सामाजिक सहायता कार्यक्रम। ग्रामीण विकास के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए मंत्रालय विभिन्न योजनाओं को चला रहा है। इनका विस्तृत विवरण अध्याय – 4 में दिया गया है।

केन्द्र सरकार द्वारा श्रम तथा रोजगार सृजन के लिए व्यय की मात्रा विगत वर्षो में बढ़ती रही है। यह क्रमशः वर्ष 1995–96 में 507 करोड़ रू0 वर्ष 2000–01 में 894 करोड़ रू0 वर्ष 2001–02 में 847 करोड़ रू0 वर्ष 2002–03 में 777 और वर्ष 2003–04 में 841 करोड़ रू0 रही।[1] सरकार का लक्ष्य दसवीं पंचवर्षीय योजना में 1 करोड़ व्यक्तियों को प्रत्येक वित्तीय वर्ष में रोजगार देने का था किन्तु 84 लाख प्रतिवर्ष का ही अतिरिक्त रोजगार सृजित किया जा सका। फिर भी सरकार के प्रयासों के फलस्वरूप जुलाई–दिसम्बर 2002 में संचालित वार्षिक दरों के अनुसार देश में रोजगार वृद्धि 1994–2000 में 1.07 प्रतिशत प्रतिवर्ष की तुलना में सुधरकर 2000–02 में 2.07 प्रतिशत प्रतिवर्ष हो गयीं।

उत्तर प्रदेश के लिए भी दसवीं पंचवर्षीय योजना में गरीबी और बेरोजगारी दूर करने के लिये कुल लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं। वर्ष 1999–2000 में गरीबी का स्तर 31.15 प्रतिशत था, जिसे घटाकर *दसवीं योजना के अन्तिम वर्ष 2007 तक 25.41 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है। दसवीं योजना अवधि वर्ष 2002–07 में कुल मिलाकर 81 लाख नये रोजगार अवसरों के सृजन का लक्ष्य रखा गया है।*[2]

प्रदेश के बुन्देलखण्ड में स्थित 7 जनपदों के आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करके उनके संतुलित विकास के उद्देश्य से वर्ष 1990 से संतुलित क्षेत्रीय विकास निधियों की स्थापना की गयी। दसवीं

---

1. आर्थिक समीक्षा वर्ष 2003 – 04 ।
2. उत्तर प्रदेश 2004 पृ0 143 ।

पंचवर्षीय योजना में प्रतिवर्ष विभिन्न ग्राम्य विकास योजनाओं के लिए निर्धारित लक्ष्य इस प्रकार है।

1. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों के 250 लाख व्यक्तियों को लाभान्वित किये जाने का लक्ष्य रखा गया है।
2. केन्द्र सरकार के सहयोग से सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत 1535 लाख मानव दिवस का रोजगार सृजित करने का लक्ष्य रखा गया है।
3. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अन्तर्गत 4500 किलोमीटर ग्रामीण सड़कों का निर्माण प्रस्तावित है।
4. इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत 2 लाख से अधिक शौचालय युक्त आवासों तथा प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना के अन्तर्गत 12920 आवासों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया है।
5. त्वरित ग्रामीण पेयजल योजना के अन्तर्गत 15000 हैण्डपम्पों का अधिष्ठापन तथा 495 पाइपलाइन योजनाऐं प्रस्तावित हैं।
6. प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना के अन्तर्गत 32800 हैण्डपम्प अधिष्ठान किये जाने का लक्ष्य रखा गया है।

यद्यपि रोजगार के अवसर सृजित करने हेतु सम्पूर्ण ग्रामीण योजना में रोजगार के अवसर सृजित करने के लक्ष्य निर्धारित होते हैं, तथापि किसी ग्राम्य विकास योजना का परोक्ष प्रभाव स्थानीय रोजगार के अवसर सृजित करने में देखा जा सकता है।

जनपद झांसी में सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत वर्ष 2003-04 में दिसम्बर 2004 तक रोजगार के अवसर सृजित करने हेतु लक्ष्य की प्राप्ति इस प्रकार रही –

सारणी – 25

सृजित रोजगार के अवसर (लाख मानव दिवस में)

| अनु0जाति | अनु.जनजाति | अन्य | योग | महिला श्रमिक | भूमिहीन |
|---|---|---|---|---|---|
| 729 | 0 | 396 | 1125 | 395 | 676 |

स्रोत्र – D.R.D.A. Jhansi

जनपद में न्यादर्श ग्रामीण व्यक्तियों को विगत दो वर्षों में वर्ष भर कितने दिन काम उपलबध रहा ? इस प्रश्न के उत्तर में कुछ इस प्रकार का चित्र सामने आया –

सारणी – 26

न्यादर्श व्यक्तियों को वर्ष में उपलब्ध काम के अवसर

| मानव श्रम दिवस | व्यक्तियों की संख्या | प्रतिशत |
|---|---|---|
| 100–125 | 80 | 50.00 |
| 126–150 | 28 | 17.50 |
| 151–175 | 22 | 13.75 |
| 176–200 | 15 | 9.39 |
| 201–250 | 9 | 5.51 |
| 251–से अधिक | 6 | 3.85 |
| योग | 160 | 100 |
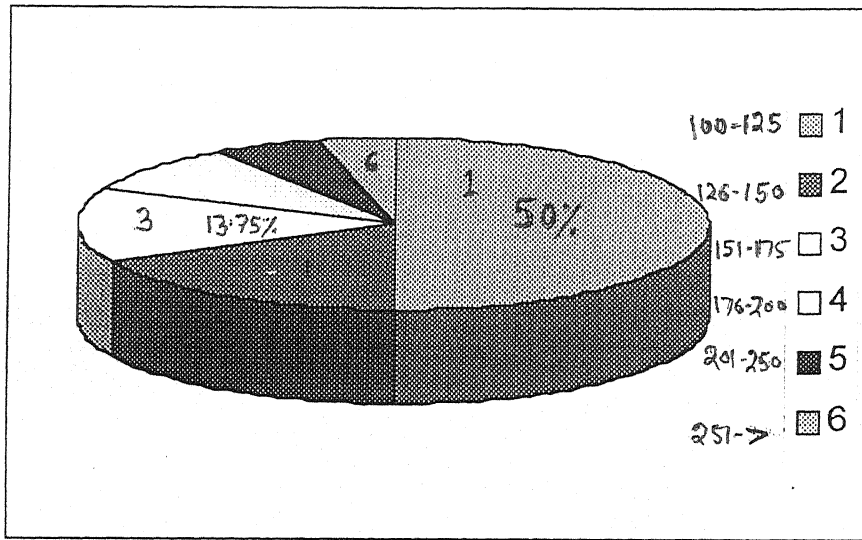
सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि 160 न्यार्दश व्यक्तियों में मात्र 6 व्यक्ति अर्थात 3.85 प्रतिशत व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें वर्ष में 250 दिन से अधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध रहें। ये व्यक्ति गाँव के सम्पन्न और धनी लोगों में से हैं। जिनके कृषि कार्यों के अतिरिक्त कुटीर और लघु उद्योग संचालित हैं अथवा जो गांव में दुकान खोले हैं। इन व्यक्तियों के पास अपनीं पूंजी और स्थानीय प्रभुत्व की भी कमी नहीं है। 50 प्रतिशत व्यक्तियों को वर्ष भर में सबसे कम 100 से 125 दिन ही कार्य के अवसर उपलब्ध रहे हैं। ये वे व्यक्ति हैं जो बिना पढ़े लिखे भूमिहीन हैं। इन व्यक्तियों के पास मजदूरी के अतिरिक्त रोजगार का और कोई साधन नहीं हैं। सर्वेक्षण से रोजगार से सम्बन्धित एक और महत्वपूर्ण तथ्य संज्ञान में आया कि गांवों में निर्माण कार्य सीमित होते हैं और अशिक्षित मजदूर व्यक्ति के पास शारीरिक श्रम ही एक मात्र रोजी रोटी कमाने का साधन होता है अतः 160 न्यादर्श व्यक्तियों में से 40 प्रतिशत व्यक्ति वर्ष में कुछ माह बड़े बड़े महानगरों में मजदूरी करने चले जाते हैं। ऐसी प्रवृत्ति उन महीनों में अधिक देखी जा सकती है जब खेतों में काम नहीं होता अथवा बजट के अभाव में या लाल फीताशाही के चलते कार्य के अवसर विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत कम सृजत हो पाते हैं।

# अध्याय - सप्तम

# ग्रामीण विकास योजनाओं का सामाजार्थिक प्रभाव

- प्राथमिक शिक्षा
- पेयजल
- स्वास्थ्य सेवाऐं
- सम्पर्क मार्ग
- विद्युत सुविधा
- मलिन बस्तियों का सुधार
- महिलाओं एवं बच्चों हेतु पौष्टिक आहार
- आवास स्थल विकास एवं उनकी उपलब्धता

ग्राम्य विकास एक व्यापक शब्द है, जिसके अन्तर्गत एक व्यक्ति से लेकर समुदाय तक के बहुआयामी विकास को सम्मिलित किया जा सकता है। भारतीय समाज का मूल चरित्र वस्तुतः ग्रामीण है। गांवो की प्रगति और विकास पर ही बहुत हद तक भारत का भविष्य निर्भर है। भारत ने आजादी के समय से विकास के लिए लम्बी दूरी तय की है और विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति भी की हैं, तब भी राष्ट्रीय जीवन के अन्य पहलुओं मे सभी दृष्टि से कुल विकास नहीं हो पाया है। अभी भी गांवो की 27 प्रतिशत आबादी गरीबी में जीवन यापन करती है और ग्रामीण क्षेत्रों में घर, पीने का पानी, सड़क जैसी बुनियादी सुविधाओं की भारी कमी है। देश के लिए ग्रामीण भारत का सतत् विकास आवश्यक है ताकि वह अपनी सामर्थ्य को समझ सके और ग्रामीण आबादी की अव्यक्त प्रतिभा पर आधारित चहुंमुखी प्रगति के दरवाजे खोल सके।

इस सच्चाई को स्वीकार करते हुये कि ग्रामीण भारत के पिछड़ेपन की समस्याओं का समाधान ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों में ही निहित है पिछले कुछ वर्षो से ग्रामीण विकास की रणनीति में व्यापक परिवर्तन देखने को मिला है, अब पंचायती राज संस्थाओं का वित्तीय और प्रशासनिक अधिकारों में त्वरित और प्रभावी हस्तांतरण के जरिए विकेन्द्रीकरण पर अधिक ध्यान है। सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण गरीब समर्थित नीति में ग्रामीण गरीबों को अपने परिपूर्ण विचार और क्षेत्रीय परिस्थितियों के और उनके अनुभवों को लेकर शुद्ध साधन की तरह विकास रणनीति का अभिन्न हिस्सा बनाया गया है। इस तरह अब कार्यक्रमों को नियोजन निरूपण और निष्पादन में पंचायती राज संस्थाओं और स्वयं सेवी समूहों के जरिए लोगों की भागीदारी पर जोर दिया जाने लगा है।

वर्ष 1999 – 2000 में ग्राम्य विकास कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण बदलाव हुये हैं। क्योंकि अनेक ग्रामीण कार्यक्रमों को उनकी प्रभावकारिता तथा स्थायित्व बढ़ाने के लिये पुर्नगठित किया गया है। स्वरोजगार की महत्वपूर्ण योजना स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना आरम्भ हुई। स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना पूर्व योजनाओं की भांति मात्र ऋण एवं अनुदान सुलभ कराने की योजना नहीं है, अपितु इसका उद्देश्य वह वातावरण सृजित करना है जिसमें स्वरोजगारी स्वयं को एक उद्यमी के रूप में विकसित कर सके। इसके निमित्त योजना में अवस्थापना सुविधाओं के सृजन, कौशल, विकास एवं विपणन व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण पर बल दिया गया है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण ढांचे के सुधार पर नये सिरे से जोर देने के लिए जवाहर रोजगार योजना को नया रूप दिया गया है। अब इसका नाम जवाहर ग्राम्य समृद्धि योजना है, जो ग्राम्य स्तर पर अवस्थापना के विकास के लिये पूरी तरह समर्पित है। सुनिश्चित रोजगार योजना का भी पुर्नगठन किया गया है। न्यूनतम आवश्यकताओं को चिन्हित कर पाँचवी योजना काल से विशेष रूप से धनराशि मात्राकृत करने की व्यवस्था की गयी। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 8 चयनित विषय इस प्रकार थे –

1. प्राथमिक शिक्षा
2. पेयजल

3. स्वास्थ्य सेवाएं
4. सम्पर्क मार्ग
5. विद्युत सुविधा
6. मलिन वस्तियों का सुधार
7. महिलाओं एवं बच्चों हेतु पौष्टिक आहार
8. आवास स्थल विकास एवं उनकी उपलब्धता

भारत सरकार द्वारा ग्रामीण विकास हेतु प्राथमिकता प्राप्त विषयों के आधार पर, शोधार्थी ने ग्रामीण विकास योजनाओं के ग्राम्य जनता पर पड़ने वाले सामाजार्थिक विकास की विवेचना करने के साथ अन्य प्रभावों की व्याख्या करने का भी प्रयास किया है।

## १. प्रारंभिक शिक्षा -

6-14 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों के लिये प्रारंभिक शिक्षा को मूलभूत अधिकार बनाने के लिए संसद ने संविधान (86 वां संशोधन) अधिनियम 2002 पारित किया है। इस अधिनियम को लागू करने के लिए एक ब्यौरे वार व्यवस्था वाला अनुवर्ती कानून लाने का प्रस्ताव है। राज्यों के शिक्षा मंत्रियों के सम्मेलन की, (जो अक्टूबर 1998 में सम्पन्न हुआ), सिफारिशों के आधार पर 'सर्व शिक्षा अभियान' योजना विकसित की गयी। जिसमें सभी को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया। इसे नवम्बर 2000 में मंजूर किया गया। सर्व शिक्षा अभियान के लक्ष्य इस प्रकार रखे गये।

1. *6 से 14 वर्ष की उम्र के सभी बच्चे 2003 तक स्कूल/शिक्षा गारन्टी योजना केन्द्र/ ब्रिज कोर्स में जाऐं।*
2. *2007 तक सभी बच्चों की पांच वर्ष की प्राथमिक शिक्षा पूरी हो जाए।*
3. *2010 तक आंठ वर्ष की स्कूली शिक्षा पूरी कर ले।*
4. *जीवन के लिए शिक्षा पर बल देते हुये संतोषजनक गुणवत्ता की प्राथमिक शिक्षा पर जोर।*
5. *2007 तक प्राथमिक स्तर पर सभी लड़के, लड़कियों और सामाजिक कमी के अन्तरों को प्रारम्भिक शिक्षा स्तर पर 2010 तक समाप्त करना और*
6. *2010 तक बीच में पढ़ाई छोड़ने वालों की संख्या शून्य हो जाए।*

यह कार्यक्रम पूरे देश में लागू है। इसमें 11 लाख बसावटों के 19.2 करोड़ बच्चे लाभान्वित हो रहे हैं। वर्तमान समय में 8.5 लाख प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक स्कूल और 33 लाख शिक्षक इस कार्यक्रम के दायरे में आते हैं! कार्यक्रम के अन्तर्गत ऐसी बसावटे जहां स्कूल की सुविधा नहीं है। वहां अतिरिक्त कक्ष, शौचालय, पीने का पानी, रख रखाव अनुदान और स्कूल सुधार अनुदान के जरिए बुनियादी ढांचे को मजबूत किये जाने की योजना है। अपर्याप्त संख्या में शिक्षकों वाले स्कूलों को कार्यक्रम के अन्तर्गत अतिरिक्त शिक्षक उपलब्ध कराये जाने की योजना है। मौजूदा शिक्षकों की क्षमता को गहन प्रशिक्षण, शिक्षण सामग्री के विकास के लिए अनुदान के प्रावधान और शैक्षणिक ढांचे के विकास के जरिए उन्नत किया जाना है। सर्वशिक्षा अभियान में कमजोर वर्गो की बालिकाओं और बच्चों पर विशेष ध्यान दिया गया है। इन बच्चों के लिए मुफ्त

पाठ्य पुस्तकों सहित कई पहल विशेष रूप से की गयी है। सर्वशिक्षा अभियान के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में कम्प्यूटर शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान भी किया गया है। जिससे डिजिटल डिवाइड को कम करने में मदद मिलेगी। सामुदायिक स्वामित्व और ग्राम शिक्षा योजनाओं का दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है। पंचायती राज संस्थाओं के परामर्श से ये योजनाऐं बनाई जा रही हैं और ये जिला प्रारंभिक शिक्षा योजनाओं का आधार बनेगीं।

सर्वशिक्षा अभियान में बालिकाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तथा कठिन परिस्थितियों में रहने वाले बच्चों की शैक्षणिक आवश्यकताओं पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है।

जनपद झांसी में वर्ष 2001 के आधार पर साक्षरता का प्रतिशत 66.69 था।[1] जो उत्तर प्रदेश के अन्य जनपदों की तुलना में ऊंचा था। जनपद में वर्ष 2004 तक ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 1099 थीं। प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की संख्या बढ़ाने के लिये वर्ष 2004 से ही राज्य सरकार द्वारा विशेष भर्ती अभियान चलाया गया है।

परिणामतः आने वाले समय में ग्रामीण क्षेत्रों के प्राथमिक विद्यालयों में प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी दूर होगी। सांख्यिकी पत्रिका झांसी के अनुसार वर्ष 2000 में ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयों की स्थिति इस प्रकार थी।

सारणी – 27

ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयों की स्थिति

| स्कूलों का विवरण | ग्रामों में | 1 किमी. से कम | 1–3 किमी. तक | 3–5 किमी. तक | 5 किमी. से अधिक | कुल |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. जूनियर बेसिक मिश्रित | 615 | 49 | 76 | 12 | 8 | 760 |
| 2. सीनियर बेसिक स्कूल (बालक) | 173 | 43 | 194 | 133 | 217 | 760 |
| 3. सीनियर बेसिक स्कूल (बालिका) | 28 | 31 | 146 | 116 | 439 | 760 |
| 4. हायर सेकेन्ड्री स्कूल (बालक) | 23 | 28 | 75 | 83 | 559 | 760 |
| 5. हायर सेकेन्ड्री स्कूल (बालिका) | -- | 18 | 56 | 64 | 622 | 760 |

1. ए0डी0 बेसिक कार्यालय से प्राप्त सूचना से।

सारणी 28 के अवलोकन से स्पष्ट है कि जनपद के आठ गॉव तो ऐसे हैं जहां जूनियर बेसिक स्कूल भी 5 किमी0 से अधिक दूरी पर स्थित है। जबकि 760 कुल ग्रामों में से 615 ग्राम में ही जूनियर बेसिक स्कूल है।

160 न्यादर्श व्यक्तियों, जिनमें 96 महिलाएं और 64 पुरूष थे, के शैक्षणिक स्तर के अध्ययन से इस प्रकार के तथ्य सामने आये हैं।

सारणी–28

न्यादर्श व्यक्तियों का शैक्षणिक स्तर

| शैक्षणिक स्तर | संख्या | प्रतिशत |
|---|---|---|
| निरक्षर | 40 | 25.00 |
| साक्षर | 47 | 29.3 |
| प्राइमरी | 38 | 23.5 |
| मिडिल | 16 | 10.0 |
| हाईस्कूल | 11 | 6.8 |
| इण्टर | 8 | 5.0 |
| योग | 160 | 99.6 |

सारणी से स्पष्ट है कि 160 न्यादर्श व्यक्तियों में से 87 व्यक्ति अर्थात 54.3 प्रतिशत व्यक्ति स्कूल ही नहीं गये थे। किन्तु जब इन्हीं व्यक्तियों से इनके बच्चों की शिक्षा के विषय में जानकारी के लिए प्रश्न पूछे गये तो इनके उत्तरों से ज्ञात हुआ कि सभी के बच्चे या तो प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर चुके थे अथवा स्कूल में उनका नाम लिखा हुआ था। यह सब सरकार के सतत् शिक्षा सम्बन्धी प्रयासों का परिणाम है।

प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए पौष्टिक आहार प्रदान करने का राष्ट्रीय कार्यक्रम जिसे 15 अगस्त 1995 से शुरू किया गया है, इसे आम भाषा में 'मिडडेमील' भी कहते हैं। इस कार्यक्रम का उद्देश्य स्कूलों में बच्चों का दाखिला एवं उपस्थिति सुधारना और उन्हें रोज स्कूल आने के लिये प्रेरित करना है। साथ ही सभी सरकारी स्थानीय संस्थाओं और सरकारी सहायता प्राप्त प्राथमिक पाठशालाओं के पहली से पांचवी कक्षा में पढ़ने वाले छात्रों को कवर करना प्राइमरी कक्षाओं के बच्चों के पौष्टिक आहार के स्तर को बनाये रखना है। इस कार्यक्रम के लिये केन्द्र सरकार की ओर से

(i) जिस स्कूलों में भोजन कार्यक्रम चल रहा है, उसमें प्रति बच्चे प्रति स्कूल दिवस 100 ग्राम अनाज या फिर 10 महीने के लिए 3 किलोग्राम अनाज प्रति बच्चे के हिसाब से और

(ii) अनुदेय परिवहन प्रभार/खाद्यान्न, भारतीय खाद्यान निगम के माध्यम से दिया जाता है।

शिक्षा सम्बन्धी उद्देश्यों को प्राप्त करने में औपचारिक प्रयास और व्यवहारिकताओं में वहुत अन्तर देखा गया। गांवों में दवंग प्रवृत्ति के व्यक्ति और स्थानीय राजनीतिक व्यक्ति सर्वहारा, अनु0जति/जनजाति/दुर्बल व्यक्तियों के ज्ञानार्जन के मार्ग में बढ़ी बाधा है तो स्त्रियों की शिक्षा में पारिवारिक व्यक्ति ही अवरोध पैदा करते हैं। विद्यालय में बच्चों का नामांकन तो हो जाता है किन्तु स्कूल दिवसों में सभी बच्चों की उपस्थिति नाम मात्र के लिये पायी गयी। शिक्षा से सम्वन्धित एक तथ्य उल्लेखनीय है कि बालिकाओं की शिक्षा विशेष रूप से अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़े वर्ग में बालिकाओं की शिक्षा के प्रति उदासीनता देखने का मिली है। जवकि परिवार में बच्चे की प्रारम्भिक पाठशाला माँ होती है। माँ यदि पढ़ी लिखी होगी तो परिवार का शैक्षणिक वातावरण प्रभावित होता है और अच्छे संस्कारों के साथ ही परिवार के सदस्यों में गुणवत्ता बढ़ती है। शायद इन्हीं तथ्यों को परखते हुये उ0प्र0 सरकार के मुख्यमंत्री श्री मुलायमसिंह यादव जी ने वर्ष 2004 में कन्याधन योजना प्रारम्भ की है। इस योजना के तहत किसी भी जाति की बालिका यदि उसका परिवार बी.पी.एल. कार्ड धारक है तो बारहवी की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होन पर उसे रू0 20000 की नकद राशि पुरूस्कार स्वरूप दी जाएगी इसके दूरगामी परिणाम देखने को मिलेगे। अब तक जो लोग स्त्री की शिक्षा के विरूद्ध थे बालिकाओं को पढ़ने के लिये प्रोत्साहित करेंगे। और सामाजिक वातावरण में बदलाव आएगा।

## २. पेयजल -

वर्ष 1986 में ग्रामीण क्षेत्रों में पीने योग्य पानी उपलब्ध करने के लिये राजीव गाँधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन की स्थापना की गयी। भारत सरकार ने पेयजल सम्पूर्ति की पुर्नरीक्षित नीति के दिशा निर्देश वर्ष 2000 में प्रकाशित किये हैं। नई नीति के प्रमुख उद्देश्य निम्नवत् है।

1. ग्रामीण क्षेत्र की समस्त बस्तियों, विशेषकर सुविधा से वंचित वस्तियों में शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराना सुनिश्चित करना है।
2. पेयजल प्रणाली तथा स्रोत की निश्चतता सुनिश्चित करना।
3. जल की गुणवत्ता एवं पर्यवेक्षण हेतु ढांचा विकसित कर पेयजल की गुणवत्ता को सुनिश्चित करना।
4. ग्रामीण पेयजल में सामुदायिक सहभागिता को सुनिश्चित करते हुए सेक्टर रिफार्म प्रारम्भ करना।

इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना के अन्तर्गत हैण्डपम्प अधिष्ठापन, पाइप पेयजल योजनाऐं तथा क्षतिग्रस्त हैण्डपम्पों एवं पाइपलाइन के पुर्नरूद्वार का कार्य किया जाता है। हैण्डपम्पों की रिपोटिंग, जी0आई0पाइप बदलने के कार्य भी इस योजना के अन्तर्गत किये जा रहे हैं।

वर्ष 2001–2002 से हैण्डपम्प अधिष्ठापन/पाइप पेयजल योजनाओं के कार्य सामुदायिक सहभागिता को सम्मिलित करते हुये मांग के आधार पर किये जा रहे हैं।

जनपद के गांवो में पेयजल की उपलब्धता पर योजनाओं का प्रभाव देखने हेतु सारणी 29 का अवलोकन किया जा सकता है।

जिसमें पेयजल की उपलब्धता पर वर्ष 2000 के पूर्व और वर्ष 2004 तक की स्थिति पर

प्रकाश डाला गया है।

सारणी – 29

ग्रामों में पेयजल की उपलब्धता

| | न्यादर्श व्यक्तियों की संख्या और प्रतिशत | | | |
|---|---|---|---|---|
| | वर्ष 2000 के पूर्व संख्या | प्रतिशत | वर्ष 2004 के पश्चात संख्या | प्रतिशत |
| ग्राम में | 56 | 35.00 | 78 | 48.75 |
| 1किमी. से कम की दूरी पर | 62 | 38.75 | 58 | 35.25 |
| 1 किमी. से अधिक की दूरी पर | 42 | 26.25 | 24 | 15.00 |
| कुल | 160 | 100.00 | 160 | 100.00 |

## ३. स्वास्थ्य सेवाऐं -

पिछले कई वर्षो से देश में स्वास्थ्य के क्षेत्र में हर तरह से सुधार हुआ है। सामाजिक, आर्थिक प्रगति और स्वास्थ्य की स्थिति का संवेदनशील सूचक शिशु मृत्युदर में महत्वपूर्ण गिरावट आयी हैं। सन् 1951 में शिशु मृत्युदर 146 प्रति हजार थीं जो सन् 2000 में 70 प्रति हजार पहुंच गयी। अपरिपक्व मृत्यु दर में भी गिरावट देखने को मिली है सन् 1951 में 25 से घटकर 2000 में 8.7 हो गयी। जन स्वास्थ्य में सुधार, युगलों द्वारा संक्रामक रोगों से बचाव के उपाय अपनाने तथा रोगों की पहचान और उपचार में आधुनिक चिकित्सा प्रणाली में समावेश से ही स्थिति में महत्वपूर्ण बदलाव आया है।

ग्रामीण जनसंख्या को स्वास्थ्य उपचार की सुविधाऐं प्रदान करने के उद्देश्य से सरकार ने न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत क्षेत्रों में स्वास्थ्य की मूलभूत सुविधाऐं पहुंचाने पर विशेष ध्यान देना प्रारम्भ किया है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में आम जनता के लिए रोगों की रोकथाम तथा उपचार और पुर्नवास की व्यवस्था वाले प्रावधानों पर जोर दिया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में समन्वित स्वास्थ्य और परिवार कल्याण प्रणाली के नेटवर्क से स्वास्थ्य सेवाऐं उपलब्ध कराई जाती है। मैदानी क्षेत्रों में 5000 से अधिक और अनुसूचित जाति/जनजाति वाले दुर्गम क्षेत्रों में 3000 से अधिक जनसंख्या के लिये एक उपकेन्द्र की व्यवस्था है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के लिए 3000 से अधिक की जनसंख्या के ऊपर एक उपकेन्द्र और 20000 से अधिक की जनसंख्या पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र बनाये गये हैं।

## ४. सम्पर्क मार्ग -

सौ प्रतिशत केन्द्र द्वारा प्रायोजित प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना दिसम्बर 2000 में प्रारम्भ की गयी। इस योजना का उद्देश्य 1000 से अधिक जनसंख्या वाले प्रत्येक गांव को 2003 तक तथा 500 से अधिक जनसंख्या वाले गांवों को दसवीं (10वीं) पंचवर्षीय योजना के अन्त तक अर्थात वर्ष 2007 तक अच्छी बारहमासी सड़कों से जोड़ना है। लोक निर्माण विभाग को 40 जनपदों एवं ग्रामीण अभियंत्रण सेवा को 30 जनपदों में परियोजना कार्यान्वयन संख्या के रूप में चिन्हित किया गया है। जनपद झांसी में वर्ष 1998–99 में 670 में से मात्र 398 गांव ऐसे थे जो

वारहमासी सड़कों से जुड़े थे। इन सड़कों की कुल लम्बाई 1908 किमी0 थी। इसमें 1680 किमी0 सड़क लोक निर्माण विभाग द्वारा निर्मित थीं।

कुल 1908 किमी0 लम्बी सड़कों में 1432 किमी0 लबी सड़के ग्रामीण क्षेत्रों को जोड़ती थीं, जबकि 476 किमी0 लम्बी सड़के नगरीय क्षेत्र का हिस्सा थीं।

वर्ष 2002–03 के आय व्यय में कुल रू0 1952.56 लाख निर्धारित कार्यो हेतु उपलब्ध कराये गये थे। इसमें से माह मार्च 2003 तक कुल रू0 1333.54 लाख व्यय कर 45.4000 किमी0 लम्बी सड़क निर्माण का कार्य पूरा किया गया है। एवं 77.980 किमी0 लम्बाई में कार्य प्रगति पर है। नये कार्यो हेतु उपलब्ध बजट रू0 413.47 लाख के सापेक्ष मार्च 2003 तक रू0 281.31 लाख व्यय किये गये।[1]

## ५. विद्युत सुविधा -

विद्युत न केवल अंधेरे में प्रकाश का साधन है वरन ऊर्जा का श्रेष्ठतम रूप भी है। विद्युत का प्रयोग कर कृषि, उद्योग और सेवा क्षेत्र में व्यक्तियों की कार्य करने की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। घरेलू कार्यो को सम्पन्न करने में भी विद्युत सहायक है। विद्युत के अभाव में सूचना प्रसारण के साधन अर्थहीन हो जाते हैं। शिक्षण, प्रशिक्षण, चिकित्सा, पेयजल, यातायात सभी कुछ विद्युत के बिना संचालित नहीं किये जा सकते। भारत में 31 मार्च 2004 तक 4.9 लाख गांवो का विद्युतीकरण किया जा चुका था।

सरकार ने हाल ही में विद्युतीकृत गांव की परिभाषा में संशोधन करने का निर्णय लिया है। जिसमें विद्युतीकृत गांव ऐसे गांव होगे जहां विद्युतीकृत घर गांव के कुल घरों का कम से कम 10 प्रतिशत होंगे। स्कूलों, पंचायतों के कार्यालयों, स्वास्थ्य केन्द्रों, अस्पतालों, सामुदायिक केन्द्रों, इत्यादि को बिजली मुहैया हो गयी हो और बुनियादी आधार ढांचा जैसे कि वितरण ट्रांसफार्मर और वितरण लाइन बसे हुये क्षेत्र के साथ साथ दलित बस्ती/खेड़ा जहां पर भी वह स्थिति हो, को मुहैया कराई गयी हो इससे पहले किसी भी गांव को तब विद्युतीकृत मान लिया जाता था, यदि उसके राजस्व क्षेत्र में बिजली का उपभोग किसी भी प्रयोजन के लिये किया जा रहा हो, जिसमें भले ही बिजली का एक कनेक्शन ही शामिल हो।

हाल ही में सरकार ने एक लाख गांवो और एक करोड़ घरों के त्वरित विद्युतीकरण हेतु एक नई योजना को अनुमोदित किया है। इस योजना ने विद्युत मंत्रालय द्वारा प्रकाशित किये जा रहे मौजूदा त्वरित ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम (ए0आर0ई0पी0) और कुटीर ज्योति कार्यक्रम का स्थान ले लिया है। इस योजना के अनुसार 31 मार्च 2004 तक विद्युतीकृत न किये गये गॉवों के विद्युतीकरण का कार्य शुरू किया जाएगा।

सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर ज्ञात हुआ कि जनपद झांसी में 40 न्यादर्श गॉवों में से 28 गांव अर्थात 70 प्रतिशत गांव ही विद्युतीकृत थे। इस प्रकार 160 न्यादर्श व्यक्तियों में से 112 अर्थात 70 प्रतिशत व्यक्तियों को गांव में ही विद्युत सुविधायें उपलब्ध थीं। इन व्यक्तियों द्वारा विद्युत का विभिन्न कार्यो में प्रयोग किया जा रहा था। इसका विवरण सारणी 30 मे देखा जा सकता है।

---

1. उत्तर प्रदेश 2004, बुन्देलखण्ड विकास पैकेज पृष्ठ0 574 ।

सारणी – 30

न्यादर्श ग्रामवासियों द्वारा विद्युत प्रयोग

| कार्य | व्यक्तियों की संख्या |
|---|---|
| कुटीर उद्योग | 77 |
| सिंचाई | 28 |
| पंखा बल्ही एवं अन्य घरेलू उपभोग | 110 |
| मनोरंजन | 44 |

## ६. मलिन बस्तियों का सुधार :-

मलिन बस्तियों के सुधार के लिए 1 जनवरी 1996 में इन्दिरा आवास योजना प्रारम्भ की गयी। इस योजना का लक्ष्य अत्यन्त गरीब अनुसूचित जाति/जनजाति मुक्त बंधुआ मजदूर और गैर अनुसूचित जातियों की श्रेणी में आने वाले ग्रामीण गरीबों को आवासीय इकाइयों के निर्माण और मौजूदा अनुपयोगी कच्चे मकानों को सुधारने में मदद करना है, जिनके लिये उन्हें सहायता अनुदान दिया जाता है। वर्ष 1995–96 से इन्दिरा आवास योजना के लाभ शहीद हुये सैनिकों की विधवाओं या निकटतम सम्बन्धी को भी दिये जाने लगे हैं। योजना की 3 प्रतिशत राशि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले विकंलाग व्यक्तियों के लिये आरक्षित की गयी है।

इस योजना के अन्तर्गत मकान का आवंटन परिवार की महिला सदस्य के नाम या पति पत्नी के संयुक्त नाम पर किया जाता है। कम से कम 60 प्रतिशत धनराशि का उपयोग अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लोगों के लिए निर्धारित है। स्वच्छ शौचालय और धुंआ रहित चूल्हा योजना के अन्तर्गत आने वाले मकान का अभिन्न हिस्सा होते हैं। योजना के अन्तर्गत लाभार्थियों का चयन ग्राम सभा करती है। निर्माण, प्रौद्योगिकी, सामग्री और डिजाइन का फैसला पूरी तरह लाभार्थियों पर छोड़ दिया जाता है।

विकासखण्ड स्तर पर कार्यालय से प्राप्त विवरण के आधार पर जनपद में वर्ष 2004 तक इन्दिरा आवास योजना की प्रगति का विस्तृत विवरण अध्याय 4 में दिया जा चुका है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की जीवनशैली में सुधार और महिलाओं की निजता व गरिमा को बनाये रखने के उद्देश्य से ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम वर्ष 1986 में प्रारम्भ किया गया। 1993 में स्वचछता की अवधारणा का विस्तार किया गया। इसमें व्यक्तिगत सफाई, गृह स्वच्छता, शुद्धजल, मलवा व मलमूत्र की सफाई और नाली के पानी की निकासी को शामिल किया गया है। इन कार्यक्रम के घटकों में गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले ग्रामीणों के लिये व्यक्तिगत स्वच्छ शौचालयों का निर्माण, सूखे शौचालयों का फ्लश शौचालयों में बदलना, महिलाओं के लिये ग्राम स्वच्छता परिसर का निर्माण कराना, स्वच्छ बाजार की स्थापना करना और स्वास्थ्य शिक्षा आदि के लिये जागरूकता फैलाना व सघन अभियान चलाना शामिल है।

## ७. महिलाओं एवं बच्चों हेतु पौष्टिक आहार -

महिलाओं एवं बच्चों को पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने हेतु समन्वित बाल विकास योजना, महिला और बाल विकास विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा चलायी जा रही है। इस योजना के तहत आवंटित अनाज का इस्तेमाल राज्य ओर केन्द्र शासित प्रदेश समन्वित बाल

विकास योजना के लिये करते हैं। इसके तहत 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों और गर्भवती/जच्चा महिलाओं को पोषक भोजन उपलब्ध कराया जाता है। खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण विभाग इस सम्बन्ध में नोडल ऐजेन्सी महिला और बाल विकास विभाग के अनुरोध पर अनाज का आवंटन करता है। राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों को 1 नवम्बर 2000 से इस अनाज की आपूर्ति गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को दी जाने वाली दर पर की जाती है।

प्राथमिक विद्यालयों के छात्रों को पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से वर्ष 1995 में प्रारम्भ की गयी दोपहर के भोजन की योजना के अन्तर्गत प्रत्येक बच्चे को प्रतिस्कूल दिवस 100 ग्राम अनाज या वर्ष में 10 माह तक प्रतिबच्चा 3 किलोग्राम अनाज देने की व्यवस्था है।

## ८. आवास स्थल विकास एवं उनकी उपलब्धता -

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छ आवास उपलब्ध कराने के उद्देश्य से आवास योजना (जिसका विस्तृत विवरण अध्याय 4 में दिया जा चुका है।) प्रधामंत्री ग्रामोदय योजना के अतिरिक्त उधार एवं अनुदान योजना भी चलाई जा रही है। यह योजना 1 अप्रैल 1999 से प्रारम्भ की गयी थी। इस योजना के तहत 32000 रू0 तक वार्षिक आय वाले ग्रामीण परिवारों को रखा गया है। इसमें अधिकतम 10000 रू0 वार्षिक तक की आर्थिक सहायता और 40000 रू0 तक के कर्ज का प्रावधान है। सहायता राशि केन्द्र से 75 प्रतिशत और राज्यों से 25 प्रतिशत भाग उपलब्ध कराते हैं। व्यवसायिक बैंक और आवासीय वित्तीय संस्थाऐं ऋण का वितरण करती हैं। जनपद में ग्रामीण क्षेत्रों मे न्यादर्श व्यक्तियों से उनके आवासों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया तो यह बात स्पष्ट हो गयी कि 160 न्यादर्श व्यक्तियों में से 116 व्यक्तियों ने किसी न किसी आवासीय योजना के अन्तर्गत ऋण या अनुदान प्राप्त किया है। 160 न्यादर्श व्यक्तियों की आवासीय स्थिति का अध्ययन सारणी 31 से किया जा सकता है।

सारणी – 31

न्यादर्श व्यक्तियों की आवासीय स्थिति

| विवरण | वर्ष 2000 से पूर्व | | वर्ष 2004 तक | | वर्ष 2004 तक अनुदान/ऋण प्राप्त न्यादर्श व्यक्ति |
|---|---|---|---|---|---|
| | संख्या | प्रतिशत | संख्या | प्रतिशत | |
| पक्का आवास | 22 | 13.75 | 28 | 17.5 | 11 |
| पक्का छप्पर युक्त कच्चा आवास | 12 | 7.5 | 97 | 60.6 | 90 |
| कच्चा आवास | 95 | 59.38 | 35 | 21.87 | 15 |
| स्वच्छ शौचालय युक्त आवास | 18 | 11.25 | 63 | 39.39 | 42 |

सारणी के अध्ययन से स्पष्ट है कि अभी भी गांवो में सभी व्यक्तियों को स्वच्छ शौचालय युक्त

मकान उपलब्ध नहीं है। 21.87 प्रतिशत ऐसे व्यक्ति हैं जिनके पास आवास के नाम पर मात्र झोपड़िया हैं और 160 में 63 अर्थात 39.39 प्रतिशत व्यक्तियों को ही स्वच्छ शौचालय युक्त मकान उपलब्ध है। प्राथमिकता प्राप्त विषयों के अन्तर्गत ग्राम्य विकास योजनाओं की प्रगति और उनके प्रभावों की विवेचना के बाद अब उन विषयों के अन्तर्गत सामाजार्थिक प्रभावों की चर्चा करना उचित होगा जिनसे ग्रामवासियों का सम्पूर्ण जीवन प्रभावित होता है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये शोधार्थी ने मुख्य रूप से तीन तथ्यों को आधार बनाया है।

1. काम के अवसरों में बृद्धि
2. आय में वृद्धि
3. सामाजिक चेतना में बृद्धि

इन तीनों तथ्यों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। तीनों घटक एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। ग्राम्य विकास योजनाओं का काम के अवसरों की उपलब्धता बढ़ाने में क्या योगदान रहा है। इसका विस्तृत अध्ययन अध्याय 6 ग्राम्य विकास योजनाऐं और रोजगार में किया जा चुका है। वर्ष 2001 से पूर्व संचालित सुनिश्चित रोजगार योजना एवं जवाहर रोजगार योजना और वर्ष 2001 के बाद सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना तथा स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना जैसी योजनाओं के कुशल संचालन के कारण ही गांवो में काम के अवसरों में वृद्धि हुयी है।

न्यादर्श सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर स्पष्ट है कि 160 की संख्या में 52 व्यक्ति अर्थात 32.50 प्रतिशत व्यक्तियों को वर्ष में 150 और उससे अधिक मानव श्रम दिवस रोजगार के अवसर उपलबध थे।

आय का स्तर आर्थिक समृद्धि का प्रतीक है। भूख से लड़ता व्यक्ति अनेकानेक सामाजिक कुंठाओ का शिकार होता है। आय बढ़ने के साथ, भूख पर विजय पाने के बाद ही व्यक्ति की सामाजिक चेतना जागृत होती है।

शिक्षा, साफ, सफाई, स्वास्थ्य और अन्य प्रकार की सामाजिक गतिविधियों में वही लोग रूचि रखते हैं जिन्हें सुबह से शाम तक रोटी की चिन्ता नहीं रहती।

शोधार्थी ने ग्राम्य विकास योजनाओं का न्यादर्श व्यक्तियों के आय के स्तर पर प्रभाव ज्ञात करने के लिए योजनागत लाभ प्राप्ति के पूर्व और पश्चात् के समय का अध्ययन किया तो निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुये।

सारणी – 32

न्यादर्श ग्राम वासियों की आय का विवरण

| आय रूपये में | योजनाओं से लाभ प्राप्ति के पूर्व | | योजनाओं में लाम प्राप्ति के पश्चात | |
|---|---|---|---|---|
| | संख्या | प्रतिशत | संख्या | प्रतिशत |
| 12000 से कम | 84 | 52.5 | 62 | 38.75 |
| 12000 – 16000 | 11 | 6.87 | 15 | 9.37 |
| 16000 – 20000 | 6 | 3.75 | 8 | 5.00 |
| 20000 – 24000 | 6 | 3.75 | 7 | 4.37 |
| 24000 – 28000 | 7 | 4.57 | 8 | 5.00 |
| 28000 – 32000 | 10 | 6.25 | 13 | 8.13 |
| 32000 से अधिक | 36 | 22.5 | 47 | 29.37 |
| | 160 | 99.99 | 160 | 99.99 |

सारणी में दिये गये तथ्यों और साक्षात्कार से प्राप्त विस्तृत विवरण के आधार पर यह निष्कर्ष सामने आये कि वर्ष 2000 से पूर्व जब रोजगार और स्वतः रोजगार बढ़ाने वाली ग्राम्य विकास योजनाओं से ग्रामवासी परिचित नहीं थे अथवा उनका लाभ नहीं उठा पाये थे, तव 160 में 84 व्यक्ति अर्थात 52.5 प्रतिशत व्यक्तियों की आय रू0 12000 वार्षिक से कम थी। यदि बी0पी0एल0 के राशन कार्डो को गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले व्यक्तियों का निर्धारण करने का आधार माना जाये अर्थात् जिन व्यक्तियों की वार्षिक आय रू0 12000 से कम है उन्हें गरीबी की रेखा के नीचे माना जा तो हम कह सकते हैं कि वर्ष 2000 के पूर्व 52.5 प्रतिशत ग्रामीण परिवार गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे थें।

वर्ष 2000 के बाद के परिदृश्य में बदलाव आया है – और दिसम्बर 2004 तक निधनों का प्रतिशत घटकर 38.75 रह गया। इसका श्रेय मुख्य रूप से स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना और सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना को जाता है। सारणी में उपलब्ध विवरण के आधार पर वर्ष 2000 के पूर्व 22.5 प्रतिशत व्यक्तियों की आय रू0 32000 वार्षिक और उससे अधिक थी। वर्ष 2004 के अन्त तक इस वर्ग में परिवारों का प्रतिशत बढ़कर 29.37 हो गया।

साक्षात्कार में यह तथ्य उभरकर सामने आया कि इस वर्ग में गॉव के सम्पन्न और सुशिक्षित परिवार थे। जिन्होंने अपने पूंजीगत संसाधनों और शैक्षणिक ज्ञान के बल पर उन्नति की और ग्राम्य विकास योजनाओं का भी लाभ उठाया है।

सम्भवतः अधिकारिता की भावना आज के समाज में भौतिक साधनों की उपलब्धता से आती है और सम्पन्नता शिक्षा से।

अतः आज ग्राम विकास योजनाओं में सर्वोच्च प्राथमिकता प्राप्त विषय भी शिक्षा और आत्मनिर्भरता है। इससे ही सामाजिक चेतना का विकास होता है। योजनाओं में सर्वहारा वर्ग अनुसूचित जाति/जनजाति और महिलाओं पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। जहां एक ओर शिक्षा से व्यक्तित्व के विकास पर ध्यान दिया जा रहा है वहीं आत्मनिर्भरता हेतु स्वयं सहायता समूहों का योगदान विशेष उल्लेखनीय रहा है। अनुभवों के आधार पर देखा गया है कि महिलाओं का व्यवहार अधिक जिम्मेदाराना होता है साथ ही यही वर्ग समाज में सर्वाधिक शोषित है। अतः सरकारी योजनाओं में महिलाओं के उत्थान हेतु अधिक ध्यान दिया जा रहा है सरकारी, जमीनों के पट्टे, स्वयं सहायता समूहों में उनको प्रमुखता देना, कन्याधन योजना, पंचायतों में महिलाओं के लिये आरक्षण आदि कार्य के द्वारा महिलाओं की स्थिति मजबूत करने के लिये प्रयास किये जा रहे हैं।

# अध्याय - अष्टम

# समस्याऐं एवं समाधान

गाँवो में संचालित विकास कार्यक्रमों तथा उनकी दक्षता, गुणवत्ता और स्वाधिकारिता पूर्ण, निरन्तरता बढ़ाने, उनकी कमियों और कमजोरियों को मिटाने तथा गांवो की उपेक्षित, उत्पीड़ित और सीमान्त बहुसंख्यक जनशक्ति को इन प्रक्रियाओं में अग्रणी तथा प्रमुख भूमिका प्रदान करने के लिए नीतिगत व्यवस्था करना भारत में राष्ट्रीय सामाजिक समन्वित विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण और प्राथमिक अंग है। ग्रामीण विकास का महत्व गांवो तथा ग्रामवासियों की संख्यात्मक बहुलता मात्र पर आधारित नहीं हैं। समग्र राष्ट्रीय विकास किसी भी कसौटी पर, किन्हीं खास क्षेत्रों, उद्योगो, वर्गो, जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि पहलुओं तक सीमित करना, अथवा उन्हें अलग अलग करके किसी खास प्रकार की क्रमबद्धता खासकर स्वप्रवाहित क्रमबद्धता में बॉधना विकास की मूल भावना को नकारता है। और उसे दूषित करने के गंभीर जोखिम को बढ़ाता है। इस नजरिये से देखने पर यह साफ जाहिर होता है कि भारत के देहातों तथा देहात के लोगों, खासकर वहां के गरीबों के विकास को कुछ खास कार्यक्रमों तथा नीतियों तक सीमित कर देना तथा सामान्य, सर्वपक्षीय मुख्य विकास धारा का एक टापू बना देना सर्वथा अनुचित तथा समन्वित राष्ट्रीय विकास का विलोम होगा। परन्तु विकास की मुख्यधारा को ग्रामीणोन्मुख बना देने के बावजूद उनकी सदियों से उपेक्षित स्थिति का निराकरण करने उनकी सहज अस्फुटित विकास क्षमता को सक्रिय बनाने के लिए उनकी तुलनात्मक तथा प्रतियोगात्मक क्षमता को राष्ट्र की सामान्य स्थिति के समकक्ष बनाकर उन्हें एक साथ विकास का प्रणेता, निर्धारक, कर्ता तथा सबसे बड़ा लाभान्वित वर्ग बनाने के लिए सकारात्मक विभेदक अथवा सकारात्मक कार्यनीति के तहत विकास प्रक्रिया के प्रत्येक चरण में विशेष स्थान देना भारतीय विकास अवधारणा, रणनीति तथा प्रक्रिया की सार्थक, प्रभावशील और अपरिहार्य कसौटी है।

भारतीय विकास समर का पिछले पचपन सालों का इतिहास अभी किसी निर्णायक सकारात्मक सोपान पर पहुंच चुका हो, खासकर एक ऐसी स्थिति में जब उसकी दिशा, गति, स्वरूप और अपनी आंतरिक शक्ति और क्षमता के कारण स्वचालित हो गये हों, यह कह पाना मुश्किल है। अभी तक तो विकास क्रियान्वयन, क्षमता तथा लाभ प्राप्ति में अधिकांश लोगों की भागीदारी भी सुनिश्चित नहीं पाई है। यह सच है कि जबरदस्त और दूरगामी बदलाव आए हैं इन परिवर्तनों की लहर से भारत के साढ़े छः लाख गॉवों और वहां रहने वाली देश की तीन चौथाई जनता भी अछूती नहीं रही है। ''पहली नजर में परिवर्तन के लक्षण अधिकांश स्थानों पर देखे जा सकते है। शक्ति समीकरण बदले हैं तो मूल्यगत परिवर्तन भी हुये है। परन्तु सम्पन्नता और समृद्धि की एक विरल सी लकीर भारत और खास तौर पर गांवो की सदियों से गहराती गरीबी के आलम को आमूल चूल हिला दे, ऐसा सम्भव नहीं हो पाया है। हमारे प्रयासो, ढांचो और सोच को इस स्थिति के लिये जिम्मेदार नहीं मानना कोई खास जिम्मेदारी का काम नहीं होगा।''[1]

---

1. कमल नयन काबरा, कुरूक्षेत्र अफैल 2003 पृ0 – 8 ।

एक विचारणीय विषय यह है कि खेती तथा इससे सम्बन्धित कामों में उत्पादन काफी बढ़ा है। आज हम 1951 से तीन गुना आबादी के भोजन के लिये पर्याप्त अनाज का उत्पादन अपने खेतों में कर रहे हैं हरित क्रांन्ति के साथ साथ दूध दही की श्वेत क्रान्ति भी हुई है। परन्तु हमारे गॉवों के धूल भरे ऑचल में उदासीन प्रतिमाओं का जमघट है। भूख, कुपोषण, अशिक्षा, बीमारी, बहुआयामी, असुरक्षा, सामाजिक आर्थिक असमानता, भेदभाव आदि अभी भी मुंह खोले खड़े हैं। जनसंख्या में गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों के अनुपात में कमी आयी है अभी भी समतुल्य माने जाने वाले तीस करोड़ आबादी की बहुआयामी त्रासदी को नहीं घटा पाती है। सन् 1967 के बाद गरीबी हटाने–घटाने उसे सहनीय बनाने के अनेक तदर्थ कार्यक्रमों की अपर्याप्तता तथा अन्य खामियां भी जग जाहिर हैं। जरूरत की तुलना में इन कार्यक्रमों का संकेतिक, अपर्याप्त आकार, इनका केन्द्रघाटित अधोप्रवाहित स्वरूप, स्थानीय स्थिति के अनुरूप उपयुक्तता का अभाव नौकरशाही और स्थानीय राजनीतिक लोगो का जन विरोधी रवैया और व्यवहार लाभार्थियों के चयन मे घपले, परियोजनाओं में स्थानीय योजनाओं के तहत पारस्परिक सकारात्मक प्रभावपूर्ण कड़ियां बनने की क्षमता के अभाव आदि के कारण इन स्कीमों से पर्याप्त लाभ नहीं मिल पाया। पंचायतों के सुदृढ़ीकरण तथा नियमित होने से आशा की किरण का संचार हुआ है, परन्तु विद्यमान स्थानीय शक्ति सन्तुलन द्वारा पैदा रूकावटों को हटाने की कोई कारगर मुहिम शुरू नहीं हो पाई है। सरकारी योजनाऐं गांव के गरीबों और कमजोर वर्गो के विकास हेतु लागू की गयी परन्तु योजनाओं के क्रियान्वयन में कमजोर वर्गो की सहभागिता न होने के कारण इनका लाभ वास्तव में उनको प्राप्त नहीं हो सका।

नवीन पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत पंचायतों के तीनो स्तरों पर सदस्यों और अध्यक्ष के पदो हेतु कुल निर्धारित पदों पर अनुसूचित जातियों और जनजातियों हेतु उनकी जनसंख्या के अनुसार और महिलाओं हेतु एक तिहाई पद आरक्षित किये गये हैं। जिला, ब्लॉक और ग्राम स्तरीय पंचायतों में बड़ी संख्या में कमजोर वर्ग तथा महिला प्रतिनिधियों को अपने क्षेत्रों के लिये विकास योजनाऐं बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने का दायित्व सौपा गया। कमजोर वर्गो की राजनीतिक जागरूकता और पंचायतों में उनके वर्चस्व के बावजूद न ही महिलाऐं और न ही अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के लोग उतने प्रभावी हो पा रहे हैं, जितने कि होने चाहिए। अशिक्षा तथा समुचित जानकारी का अभाव और पुरानी वर्ण व्यवस्था सम्भवतः इसके प्रमुख कारण है। लेकिन इसके अतिरिक्त भी कुछ महत्वपूर्ण कारण है जो निम्नलिखित हैं–

### 1. विकास कार्यक्रमों की जानकारी का अभाव –

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का निर्धारण और क्रियान्वयन एक गम्भीर चिन्तन का विषय है। पंचायती राज की नवीन व्यवस्था से यह अपेक्षा की गई थी कि ग्राम पंचायतें अपने विकास सम्बन्धी कार्यक्रम स्वयं तैयार करेगी और उनका क्रियान्वयन भी स्वयं ही करेगी। यह व्यवस्था लागू करते समय यह मान लिया गया था कि जो प्रतिनिधि चुनकर आएंगे वे विकास से सम्बन्धित विषयों की पहचान करने तथा उससे सम्बन्धित कार्यक्रम बनाने में समर्थ होंगे। किन्तु आरक्षण के चलते बड़ी संख्या में कमजोर वर्गो के प्रधान, उपप्रधान तथा पंचायत सदस्यों के पास

ऐसी पृष्ठभूमि नहीं है कि वे इस प्रकार के कार्यो में समर्थ हो सके। ऐसे में पंचायतों के कमजोर वर्गो के प्रतिनिधियों, प्रभावशाली सरकारी अधिकारियों/कर्मचारियों के अधीन होकर कार्य करने की प्रवृत्ति पंचयतों में देखी जा रही है। परिणामस्वरूप गावो की आवश्यकताओं के अनुरूप विकास कार्य न होकर सरकारी अधिकारियों और प्रभावशाली लोगों के स्वार्थो की पूर्ति के आधार पर कार्यक्रम क्रियान्वित किये जा रहे हैं, जो पंचायती राज व्यवस्था तथा कमजोर वर्गो के नेतृत्व को सुदृढ़ बनाने के मूल उद्देश्य पर एक प्रहार है।

## 2. शिक्षा की कमी–

जहां शिक्षा का अभाव रहेगा वहां अज्ञान का अंधेरा छाया रहना स्वभाविक है। विकास और प्रगति की अनेक बातें कहीं और सुनी जाने के बावजूद राज्य में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की दशा अभी भी बद्तर है। मुख्य रूप से कमजोर वर्गो और महिलाओं की शिक्षा की दशा और भी शोचनीय है। पंचायतें ही अब शिक्षा समितियों के माध्यम से ग्रामीण शिक्षा की व्यवस्था तथा उससे सम्बन्धित कार्य देखेगीं। पंचायतों के लिये चुने गये कमजोर वर्गो के प्रतिनिधि तथा महिलाऐं गांव के सजग प्रतिनिधि के रूप में गांव में फैली घोर निरक्षरता की भयावहता को कम करने की दिशा में अपनी भूमिका निभाएंगे। किन्तु यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि इस वर्ग से चुनकर आए प्रतिनिधि स्वयं शिक्षित हों। सर्वेक्षणों से यह बात स्पष्ट है कि कमजोर वर्गो तथा महिलाओं में शिक्षा का स्तर काफी निम्न है और उनमें पर्याप्त संख्या में निरक्षर भी है। वे ग्राम्य विकास के कार्यो से भली भांति परिचित भी नहीं है। ऐसी स्थिति में ये प्रतिनिधि विकास के कार्यो की योजना तैयार करने तथा उन्हें क्रियान्वित करने में स्वभाविक रूप से समर्थ नहीं हो पा रहे हैं। तथा उनकी अज्ञानता और अदूरदर्शिता के कारण पंचायतों के कार्यो का क्रियान्वयन स्थगित सा हो गया है। ये लोग ग्रामीण शिक्षा के विकास में अपना योगदान नहीं दे पा रहे हैं।

## 3. पंचायत स्तर पर बजट की जानकारी न होना –

संविधान के 73वें संशोधन में पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा करने तथा इस बारे में राज्यपालों को सुझाव देने के लिए पंचवर्षीय अवधि वाले राज्य वित्त आयोग का गठन किया गया था। आयोग को यह बताना था कि करों, शुल्कों, फीस और चुंगी आदि स्रोतो से जो आमदनी राज्यों को प्राप्त होती हैं, उसे राज्य और ग्राम पंचायतों, क्षेत्र पंचायतों और जिला पंचायतों के बीच बंटवारे के नियम क्या होंगे। इसके अतिरिक्त आयोग को राज्यों की समेकित निधि में से विभिन्न स्तरों पर पंचायतों को सहायता अनुदान देने सम्बन्धी सुझाव समय समय पर देने थे। 73वें संविधान संशोधन के लागू होने के काफी समय बाद उत्तर प्रदेश में वित्त आयोग अपने कार्यो को प्रभावी ढंग से करने में सफल हो सका। परिणाम स्वरूप एक लम्बे समय तक पंचायतों की स्थिति वित्त विहीन बनी रही। पंचायतों के द्वारा विभिन्न प्रकार के करों की बसूली कमजोर वर्गो की अक्षमता और कमजोरी के कारण सम्भव नहीं हो सकी और पंचायतों का कार्य केवल सरकारी अनुदानों पर टिका हुआ है। साथ ही कमजोर वर्गो तथा महिलाओं में पंचायत स्तर पर बजट बनाने तथा आय व्यय सम्बन्धी लेखा जोखा की जानकारी का अभाव है। सरकार की अनेक घोषणाओं के बावजूद पंचायतों की वित्तीय स्थिति अभी सुदृढ़ नहीं हो पायी है। यह स्थिति

शीघ्र समाप्त नहीं की गई तो कमजोर वर्गों का नेतृत्व प्रभावी नहीं हो पाएगा।

### 4. स्वायत्तता की कमी –

उत्तर प्रदेश शासन द्वारा पारित उत्तर प्रदेश पंचायत विधि (संशोधन) विधेयक के अन्तर्गत ग्राम पंचायतों को 29 अधिकार ऐसी शर्तो के अधीन सौंपे गये हैं जिन पर सरकार का प्रत्यक्ष रूप से अधिकार होगा और समय समय पर विनिर्दिष्ट शर्तो के अधीन रहते हुये ग्राम पंचायतें उन कार्यो का सम्पादन करेगी। किन्तु जिन पंचायतों में कमजोर वर्गो के प्रधान और उपप्रधान कार्य कर रहे हैं, उनके कार्यो के क्रियान्वयन में सरकार तथा गांव के प्रभावशाली लोगो का हस्तक्षेप वना रहता है, इससे गांव के विकास सम्बन्धी कार्य सुगमतापूर्वक नहीं हो पाते। कमजोर वर्ग के पंचायत प्रतिनिधियों में इस दिशा में सरकार और गांव के प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा बढ़ते जा रहे हस्तक्षेप को लेकर असंतोष व्याप्त हैं जो विभिन्न स्तर पर होने वाली बैठकों में मुखर रूप से देखने को मिलता है।

### 5. गुणवत्ता विकास की सोच की कमी –

वास्तविक अर्थो में गांव के विकास का अर्थ गांव में रहने वालो के जीवन को सुखमय वनाने से है। जिसे प्राप्त करने के लिए एक ओर भौतिक संरचना से जुड़ी सुविधाओं का विस्तार किया जाना आवश्यक है, वहीं दूसरी ओर इनका अनुकूलमत उपयोग सुनिश्चित करने के लिए इनके उपभोक्ता अर्थात ग्रामवासियों की जीवन शैली से जुड़े पक्षों में गुणात्मक सुधार के लिए भी प्रयास करना जरूरी हैं इसके लिये मानवीय संसाधनों के विकास को पंचायती राज संस्थाओं का प्रमुख दायित्व माना जाता है। विकास को स्थायी गति प्रदान करने लिए इन दोनों में न्यायपूर्ण सन्तुलन स्थापित किया जाना आवश्यक है। इस सन्तुलन को साधने का कार्य सबसे अच्छे ढंग से पंचायते और प्रधान ही कर सकते हैं। इसीलिये इनसे जुड़े समस्त विषयों को ग्राम पंचायतों की सूची में सम्मिलित किया गया है। सूची में वर्णित विषयों पर कार्य करने का अधिकार न मिल पाना तो ग्राम पंचायतों और ग्राम प्रधानों को प्रतिकूलतः प्रभावित कर रहा है। पंचायतों द्वारा विगत अवधि में किए गए कार्यो की प्रकृति देखने से ज्ञात होता है कि सभी सरकारी विभागों के समरूप ही भौतिक संरचना से जुड़ी आधारभूत सुविधाओं के विस्तार पर विशेष बल दिया जा रहा है। मानव संसाधन के गुणात्मक विकास के लिये प्रयास करने की इच्छा का कमजोर वर्गो के नेतृत्व में प्रायः अभाव देखने को मिलता है। ऐसे में पंचायते गांवो के वास्तविक तथा स्थायी विकास के वांछित लक्ष्य से दूर होती जा रही है। यह स्थिति न केवल ग्रामीण विकास के लिये बल्कि कमजोर वर्गो के अस्तित्व की दृष्टि से भी हानिकारक है।

### 6. जनसहभागिता की कमीः–

ग्रामीण विकास का उद्देश्य स्थानीय स्तर पर जनसहयोग और स्थानीय आवश्यकताओं के आधार पर प्राथमिकताओं का निर्धारण करना होना चाहिए, सामान्य तौर पर देखा जा रहा है कि एक सामान्यीकृत कार्यक्रम बना लिया जाता है और कार्यक्रम के तहत प्रत्येक गांव में विकास योजनाऐं चलायी जाती हैं ऐसी योजनाऐं सफल नहीं हो रही है। इसका मुख्य कारण यह है कि योजनाओं के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्य स्थानीय प्राथमिकताओं तथा ग्रामीण नेतृत्व के

अनुरूप नहीं है। इसी कारण ऐसे कार्यक्रमों लोगों का सहयोग भी नहीं मिल पाता। ग्रामीण नेतृत्व अपनी कुंठा के कारण जनसहभागिता के नाम पर अपने को अलग कर रहा है। विशेषकर कमजोर वर्गो के पंचायत प्रतिनिधि अपनी जातीय कमजोरी के कारण इस प्रकार के कार्यो में अपने को सफल नहीं पा रहे हैं। वस्तुतः जन सहयोग तभी सम्भव हो सकता जब गांव के लोगो को यह विश्वास हो जाए कि जो भी विकास कार्य गांव में होंगे वे वहां की जनता के सामाजिक और आर्थिक विकास से सम्बन्धित होंगे। और प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वे ही उससे लाभान्वित होंगे। इस प्रकार की भावना के न होने के कारण ही अधिकांश सरकारी कार्यक्रमों को केवल विभागीय औपचारिकता के रूप में देखा जाता है। स्थानीय प्राथमिकताओं को ध्यान न रखकर किया गया कार्य न तो स्थायी होता है और न ही वांछित लाभ उत्पन्न कर पाता है। ऐसे कार्यक्रमों पर किया जाने वाला व्यय सार्वजनिक धन का हिस्सा है अतः इसे सुविचारित ढंग से व्यय किया जाना चाहिए।

### 7. निम्न स्तर पर प्रभावी नेतृत्व की कमी –

पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिये उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण की व्यवस्था इसलिए की गयी है कि पंचायती राज व्यवस्था में समाज के कमजोर वग्रे का समुचित प्रतिनिधित्व हो सके और उनकी सच्ची भागीदारी से गांव के दबे कुचले लोगों का भला हो सके। इसमें कोई संदेह नहीं कि विगत पांच वर्षो में जिन जिन राज्यों में नई पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत चुनाव हुए उन सभी राज्यों में कानूनी आरक्षण के द्वारा इन कमजोर वर्गो का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया गया। लेकिन यहां एक सवाल यह उठता है कि क्या इन वर्गो का प्रतिनिधित्व सचुमुच कारगर रहा है। इस समस्या पर यदि हम गौर करें तो शोध और सर्वेक्षण इस बात को प्रमाणित करते है कि इन कमजोर वर्गो का नेतृत्व प्रभाव नहीं रहा है। कमजोर वर्गो के बारे में सर्वेक्षण यह बताते है कि प्रायः आरक्षित पदों पर वे ही दलित और महिलाएं चुनकर आते हैं जिन्हें ग्रामीण क्षेत्र के सवर्ण प्रभावशाली लोगों का संरक्षण प्राप्त होता है। पंचायती राज संस्थाओं की औपचारिक बैठकों में ग्रामीण समाज के ये प्रभाशाली लोग, दलित, प्रतिनिधियों के माध्यम से अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं।

### 8. कमजोर वर्गो के नेतृत्व में आत्मबल की कमी –

सामान्यतः कमजोर वर्ग सदस्य प्रायः अशिक्षित होते हैं, निम्न जातियों के होते हैं, निम्न आर्थिक स्तर पर जीवन यापन करते है और बीमारियों, कुपोषण तथा सामाजिक हिंसा के शिकार सुगमता से हो जाते हैं इनके व्यवहार में आत्मविश्वास की कमी, उदासीनता, निर्भरता, अनुरूपता तथा संगठन का अभाव जैसी दुर्बलताएं पाई जाती है। जिसका लाभ सरकारी अधिकारी और गांव के प्रभावशाली लोग उठा रहे हैं। विशेषकर ग्रामीण विकास के कार्यो हेतु जो धन पंचायतों को उपलब्ध कराया जाता है उसका एक बड़ा भाग ग्रामीण विकास के कार्यो के अतिरिक्त सुख सुविधाओं हेतु व्यय किया जा रहा है। गांव में दबंग व्यक्ति गांव के विकास सम्बन्धी कार्यो को अपनी इच्छानुसार चला रहे हैं। जिससे कमजोर वर्गों में पंचायतों के नेतृत्व के प्रति कुण्ठा भी आ गई है।

### 9. जातीय सामंजस्य की कमी –

पंचायती राज संस्थाओं में ग्रामीण सत्ता अभी तक मुख्य रूप से पुरूष और उच्च जातियों के हाथों में थीं। किन्तु वर्तमान पंचायती राज संस्थाओं की पहल पर महिलाओं तथा कमजोर वर्गो के आरक्षण के कारण उन्हें ग्रामीण निर्णय में सहभागिता निभाने के अवसर प्राप्त हुए है। जिसके कारण पुरूष तथा कुलीन वर्गो की प्रधानता प्रभावित हुई है। जातीय भेदभाव के कारण आपसी कलह बढ़ रही है जो पंचायतों की कार्यप्रणाली तथा ग्रामीण विकास को प्रभावित किए बिना नहीं रह सकती।

### 10. सामाजिक – पारिवारिक पिछड़ापन –

ग्रामीण राजनीति में नेतृत्व की सामाजिक और पारिवारिक पृष्ठ भूमि की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ग्रामीण नेता का महत्व उसके व्यक्तिगत गुणों से कम और पारिवारिक ख्याति और शक्ति से अधिक होता है। जिस नेता का परिवार गांव में प्रभावशाली होता है वहीं नेता ग्रामीण राजनीति में शक्तिशाली होता है। अध्यन का निष्कर्ष है कि पंचायतों का नेतृत्व सभालने हेतु जो कमजोर वर्ग के सदस्य और महिलाऐं चुनकर आई हैं, उनकी शैक्षणिक तथा आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं है। ऐसी स्थिति में कमजोर वर्गो के लोग जो पंचायतों के नेतृत्व में अपनी सहभागिता कर रहे हैं वह प्रभावपूर्ण नहीं प्रतीत होती।

### 11. नेतृत्व में निर्धनता की व्यापकता :–

वास्तव में गरीबी सभी संकटों की जननी है। गरीबी में पंचायत से सम्बन्धित दो पहलू हैं– प्रथम सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र की गरीबी, दूसरे पंचायत में चुने अध्यक्ष, महिला प्रतिनिधियों खासकर कमजोर वर्गो की गरीबी। कई महिला प्रतिनिधियों को विशेषकर कमजोर वर्ग को महिलाओं को वित्तीय समस्या के कारण अपने परिवार का पालन पोषण करने के लिए कृषि कार्य अथवा दूसरों के यहाँ मजदूरी के लिए जाना पड़ता है। उनका मानना है कि यदि वे पंचायतों में जाएंगी तो उनके परिवार का पालन पोषण कौन करेगा। यदि सरकार उन्हें आर्थिक सहायता, वेतन आदि दे तभी वे पंचायतों की बैठकों में जा सकेगी और पंचायत प्रतिनिधि के रूप में अच्छी भूमिका निभा सकेंगी

केवल वैधानिक प्रावधान से पंचायती राज संस्थाओं को स्वशासन की इकाइयां नहीं बनाया जा सकता। इसके लिए आवश्यक है पंचायती राज संस्थाओं की क्षमता निर्माण, सुग्राहीकरण एवं जागरूकता में अभिवृद्धि करने की। इसके लिये आवश्यकता है एक व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम को राष्ट्रव्यापी स्वरूप में लागू करना तथा प्रशिक्षण के लिए विभिन्न स्तरों पर हो रहे प्रयासों को एकीकृत करके एक प्रशिक्षण मॉडल को विकसित करना जो संदर्भित पंचायतीराज पदाधिकारियों की आवश्कतानुरूप हो। प्रशिक्षण की व्यापक श्रृंखला को तृणमूल स्तर तक ले जाकर प्रत्येक पदाधिकारी को पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्निहित उद्देश्यों एवं प्रक्रियागत विषयों के प्रति समझ विकसित करके ही हम इन संस्थाओं को स्वशासन की स्वतंत्र इकाइयों के रूप में विकसित कर पाऐंगे।

इसके लिये हमें प्रशिक्षण प्रणाली निम्नांकित उद्देश्यों पर केन्द्रित करनी होगी –

1. पंचायती राज संस्थाओं के निर्माण की प्रक्रिया की दृष्टि, लक्ष्य एवं मूल्यों पर पुर्नविचार

करना।

2. पंचायती राज संस्थाओं के क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले विविध पक्ष जैसे राजनीतिक, प्रशासक, चिन्हित विभाग, स्वयं सेवी संस्थाऐं, पत्रकारों को पंचायती राज संस्थाओं की अवधारणा एवं उनके अधिकारों और कर्तव्यों की स्वाकार्यता हेतु जानकारी देना।

3. पंचायती राज प्रतिनिधियों के व्यवहार एवं दृष्टिकोण को विकसित करने पर जोर देना, जिससे वे यथास्थिति की संस्कृति से बाहर आ सके।

4. सहभागी विधि एवं उपकरण द्वारा सामाजिक न्याय एवं लिंग में समानता हेतु विकासात्मक योजनाओं के निर्माण हेतु क्षमता निर्माण।

5. पंचायती राज प्रतिनिधियों के मध्य विश्वास निर्माण एवं प्रमुख विकास कर्ताओं एवं प्रशिक्षण संस्थानों का नेटवर्क स्थापित कर उन्हें पंचायती संस्थाओं के क्षमता निर्माण के कार्यक्रमों में लगाना।

6. पंचायतों में क्षमता निर्माण हेतु विभिन्न संस्थाओं में प्रशिक्षकों के एक संवर्ग का सहायक सामग्री, प्रशिक्षण सामग्री एवं सौंपे गये कार्य के निर्वहन हेतु आवश्यक जानकारी प्राप्त करवाना।

7. पंचायती राज संस्थाओं एवं लाभार्थियों के मध्य विवादों का समाधान करना तथा एक ऐसे वातावरण का निर्माण करना जिससे पंचायती राज संस्थाए स्वशासन की प्रभावशाली इकाइयां बन सकें एवं सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता के विषयों को सम्बोधित कर सके।

गांवों में सकारात्मक और गुणात्मक संस्थागत, सांस्कृतिक, सामाजिक आर्थिक परिवर्तन लाने के लिए पंचायती राज संस्थाओं का सशक्तिकरण और उनका पुर्ननवीनीकरण अनिवार्य है। पंचायती राज संस्थाओं के सशक्त न होने से ग्रामीण विकास योजनाओं के लक्ष्य अधूरे रह जाते हैं। अध्ययन में यह अनुभव किया गया कि योजनाओं और उनके क्रियान्वयन में कुछ कमियां भी है। जनपद में प्रमुख रूप से संचालित आवास योजनाओं और स्वर्णजयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, सम्पूर्ण ग्राम स्वरोजगार योजनाओं का विस्तृत अध्ययन और उनसे लाभ प्राप्त करने वाले लाभार्थियों की स्थिति का अध्ययन करने पर योजनाओं की अनेकानेक व्यावहारिक खामियां सामने आई। योजनाओं की कमियों और उनके दूर करने के उपायों पर नीचे चर्चा प्रस्तुत है।

1. सरकार द्वारा संचालित की गई विभिन्न आवासीय योजनाओं में निर्धारित लागत बहुत कम है। इससे मकान की वास्तविक लागत को पूरा नहीं किया जा सकता। 20 हजार रूपये की धनराशि से निर्धारित मानदण्डों के अनुरूप निर्माण कार्य सम्भव नहीं हो पाता है अतः निर्धारित लागत बढ़नी चाहिए।

2. विशेष रूप से इन्दिरा आवास योजना में स्वच्छ शौचालय का अनिवार्य रूप से प्रावधान है, जिसमें काफी लागत है, लेकिन ग्रामीण लोगों की इसके उपयोग में रूचि नहीं रहती। अतः शौचालय निर्माण अथवा उपभोग के प्रति लोगों में जागरूकता पैदा की जानी चाहिए।

3. आवासीय योजनाओं के अन्तर्गत प्राप्त होने वाली आर्थिक सहायता का उपयोग सामान्यता

समुचित प्रकार से नहीं किया जाता। अतः आवास से सम्बन्धित, संचालित एवं विभिन्न योजनाओं के कार्यान्वयन एवं अनुश्रवण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। और कार्यान्वयन से जुड़े हुए सरकारी कर्मियों को इसके लिए उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए।

4. आवासीय आर्थिक सहायता एवं अनुदान आदि की उपलब्धता में निर्धारित जटिल प्रक्रियाओं को सरल किया जाना चाहिए। ताकि ग्रामीण, गरीब, पिछड़े और अशिक्षित लोगों को भी सहायता प्राप्त करने में कम से कम कठिनाइयों का सामना करना पड़े।

5. देश के विभिन्न वर्गों और वहां के विविधापूर्ण ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकताओं, भवन निर्माण सामग्री की उपलब्धता और गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए नई प्रौद्योगिकी को निरन्तर विकसित और परिमार्जित किए जाने की आवश्यकता है जो किफायती होने के साथ साथ उपभोक्ताओं को भी स्वीकार्य हो।

6. विभिन्न योजनाओं के सफल संचालन में त्रिस्तरीय पंचायतों के साथ साथ प्रतिष्ठित स्वयं सेवी संस्थाओं का भी सहयोग भरपूर मात्रा में प्राप्त किया जाना चाहिए। इससे उपयुक्त लाभार्थियों का चयन, उपयुक्त प्रौद्योगिकी के चुनाव, भ्रष्टाचार पर नियंत्रण तथा जन सहभागिता जैसे कई लाभ प्राप्त हो सकेंगे।

7. प्रत्येक योजना में लाभार्थियों का चयन सही आधार पर होना चाहिए। जिससे निर्धनता उन्मूलन तथा रोजगार के सृजन के लक्ष्यों की पूर्ति की जा सके।

8. वित्तीय लक्ष्यों के साथ भौतिक लक्ष्यों की जानकारी ग्रामीण विकास विभाग के साथ ग्रामीण जनता को भी दी जाए।

9. ऋण तथा अनुदान के आवंटन, वितरण तथा उपयोग पर निरन्तर निगरानी रखी जाए, जिससे कि संसाधनो के दुरूपयोग को रोका जा सके।

10. प्रत्येक स्तर पर प्रशासन की जबाव देही तथा पारदर्शिता सुनिश्चित की जाये।

11. अनुदान को इसके उपयोग से जोड़ा जाए। यह तभी वापस न लिया जाए जब इसका सदुपयोग किया गया हो, जिससे कि अनुदान की वापस अदायगी न करने की शर्तें का दुरूपयोग रोका जा सके।

12. विभिन्न विभागों तथा संस्थाओं के बीच प्रभावी समन्वय स्थापित करके, विभिन्न कार्यक्रमों को तैयार करने, क्रियान्वयन करने तथा मूल्यांकन करने का कार्य करवाया जाए।

जनपद झांसी में ग्राम्य विकास की सम्भावनाओं को विकास योजनाओं के प्रारूप और उनके क्रियान्वयन से सम्बन्धित प्रशासनिक और राजनीतिक संस्थाओं के सापेक्ष जानने समझने के पश्चात् क्षेत्रीय परिस्थितियों के अनुसार विकास की सम्भावनाओं के व्यवहारिक पहलू का अध्ययन प्रसांगिक होगा।

जनपद झांसी का भौगोलिक मानचित्र पठारी है। वर्ष भर नदियों में जल नहीं रहता। वर्षा का स्तर भी निम्न है। ऐसी स्थिति में कृषि और अन्य क्षेत्रों में उत्पादिकता बृद्धि मुश्किल है। क्योंकि जल शक्ति का प्रमुख साधन है। सम्भवतः प्रकृति ने इसके अभाव को दूर करने के लिये इसकी भौगोलिक संरचना को इस प्रकार बनाया है कि यहां बड़े बड़े जलाशय बनाकर प्राप्त जल का

संरक्षण किया जा सके। बीते हुए समय में प्रत्येक घर या वस्ती में एक तालाब हुआ करता था। जिससे स्थानीय लोगो की जल सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा किया जाता था। किन्तु बढ़ती हुयी आबादी ने तालाबों को पाट दिया। आज आवश्यकता है पुनः इन जलाशयों के जीर्णोद्वार की साथ ही जल प्रबन्धन के तरीके जान समझकर व्यवहार में लाने की। जिससे सिंचाई संसाधनों को विकसित कर कृषिगत उत्पादन में सुधार हो सके साथ ही पेयजल और औद्योगिक इकाइयों के लिए भी पानी की उपलब्धता को सुनिश्चित किया जा सके।

स्थानीय ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के विकास की सम्भावनाओं की जनपद में अनदेखी नहीं की जा सकती। सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, गोबर गैस, गोबर से विद्युत बनाकर स्थानीय स्तर पर विद्युत और ऊर्जा सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में नीबू, नीबूवर्गीय फसलों, अदकर, मूंगफली जैसी फसल की सम्भावनाऐं अच्छी हैं। इसके अतिरिक्त पथरीली कंकरीली भूमि में चारागाह बनाकर पशुओं के लिए चारा उगाने की सम्भावनाऐं हैं। चारा उगाने में किसानो के मार्ग दर्शन के लिए झाँसी में स्थापित चारागाह अनुसन्धान केन्द्र के शोध सम्बन्धी प्रयासों की भूमिका प्रशांसनीय है।

जनपद में फल एवं सब्जी प्रसंस्करण बेकरी उत्पादन प्रशिक्षण, पत्तल दोना प्रशिक्षण, विभिन्न प्रकार के अचार, कैचप, जैम, जैली, चटनी, मुरब्बा, विस्कुट व बैग आदि का प्रशिक्षण देकर स्वयं सहायता समूहों को बढ़ाया जा सकता है। अदरक का सत और अन्य उत्पाद तैयार करके आय को बढ़ाया जा सकता है। जनपद में जलाशयों और तालाबों का विकास करके मछलीपालन की सम्भावनाओं को भी बढ़ाया जा सकता है। इसके साथ ही मछली और झींगा का निर्यात करने हेतु इनके प्रसंस्करण और पैकेजिंग को बढ़ावा देकर स्थानीय लोगो की आय बढ़ायी जा सकती है।

जनपद झांसी में सोयाबीन एवं दुग्ध उत्पादों को प्रसंस्करण, भण्डारण, पैकेजिंग एवं वितरण द्वारा भी उद्यमिता विकास किया जा सकता है।

# परिशिष्ट

# प्रश्नावली का प्रारूप

## अ–भाग

## ग्राम प्रधान से पूछे जाने वाले प्रश्न

नाम

आयु

जाति

शिक्षा

पता

स्त्री/पुरूष

व्यवसाय

1. क्या आप पंचायत के कार्यो के संचालन में किसी की सहायता लेते हैं ?
2. यदि हाँ तो –

   (अ) कभी – कभी

   (ब) सभी कार्यो में
3. क्या जातिगत आधार ग्रामवासियों के असहयोग का कारण बनता है ?
4. पंचायत के कार्यो के लिये क्या आप पर्याप्त समय दे पाते हैं ?
5. क्या आपको विकास कार्यक्रमों की पर्याप्त जानकारी है ?
6. क्या आपको पंचायत स्तर पर बजट की जानकारी हैं ?
7. क्या आप पंचायत के कार्य प्रबन्धन में सरकारी या स्थानीय प्रभुत्व वाले व्यक्तियों का हस्तक्षेप सहन करते हैं।
8. गांव के पिछड़ेपन के लिए आप किन घटकों को जिम्मेदार मानते हैं (✓) का निशान लगाऐं।

   (i) बजट/अनुदान की अपर्याप्तता

   (ii) स्वयत्ता की कमी

   (iii) गुणात्मक विकास की सोच की कमी

   (iv) जनसहभागिता की कमी

   (v) निम्न स्तर पर प्रभावी नेतृत्व की कमी

(vi) कमजोर वर्गों के नेतृत्व में आत्मबल की कमी

(vii) जातीय सामंजस्य की कमी

(viii) सामाजिक – पारिवारिक पिछड़ापन

## ब – भाग

## लाभार्थियों से पूछे जाने वाले प्रश्न

1. नाम
2. आयु
3. पता
4. जाति – अनुसूचित जाति/जनजाति/सामान्य
5. परिवार में सदस्यों की संख्या
6. व्यवसाय – कृषि/उद्योग/मजदूरी
7. सम्पत्ति विवरण – मकान/दुकान/खेती
8. मकान की किस्म – पक्का/कच्चा/आधा कच्चा और अधा पक्का/पक्का छप्पर युक्त कच्चा मकान
9. आपके घर में स्वच्छ शौचालय है ?
10. आपका शैक्षणिक स्तर क्या है ?
11. क्या आपके घर के 5–14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चे स्कूल में पढ़ते हैं ?
12. क्या बच्चे नियमित स्कूल जाते हैं ?
13. अगर नहीं तो क्यों नहीं
14. क्या वर्ष भर कार्य के अवसर आपको उपलब्ध है ?
15. यदि नहीं तो कितने दिन काम मिलता है ?
16. क्या काम के लिये शहर भी जाते हैं ?
17. आपकी मासिक आय क्या होगी ?
18. क्या आपने सरकार द्वारा संचालित किसी भी ग्राम्य विकास योजना के अन्तर्गत लाभ पाया है?
19. यदि हाँ तो योजना का नाम और लाभ के विवरण का उल्लेख करे।
20. विभिन्न ग्राम्य विकास योजनाओं से आप अपने को किस प्रकार से लाभान्वित अनुभव करते हैं? नीचे लिखे विषयो पर (✓) का निशान लगाऐं।

(अ) पेयजल सुविधा – बस्ती में/1 किमी0 से कम दूरी पर/1 किमी0 से अधिक की दूरी पर

(ब) पक्की सड़कों की सुविधा एवं सम्पर्क मार्ग

(स) विद्युत की उपलब्धता

(द) स्वच्छता कार्यक्रम

(य) स्वास्थ्य एवं टीकाकरण कार्यक्रम

(र) अवास स्थल विकास एवं उनकी उपलब्धता

(ल) महिलाओं एवं बच्चों हेतु पौष्टिक आहार

(व) शिक्षा का प्रसार

21. क्या सभी लोगों की ग्राम्य विकास योजनाओं की पर्याप्त जानकारी है ?

22. आपकी राय में कार्यक्रमों को लागू करने में मुख्य कठिनाइयां क्या है?

(अ) संसाधनों की कमी

(व) अधिकारियों की उदासीनता

(स) जन प्रतिनिधियों द्वारा उपेक्षापूर्ण व्यवहार

(द) अशिक्षा – अज्ञानता

(य) रूढ़िवादिताऐं

(र) क्षेत्रीय स्तर पर विकास योजनाओं में व्यवहारिकता का अभाव

(ल) भ्रष्टाचार

# संदर्भित एवं सहायक पुस्तकें


- उच्चतर आर्थिक सिद्धान्त – एच.एल. आहूजा
- आर्थिक विकास की दिशाऐं– अम्लान दत्त
- भारतीय अर्थव्यवस्था – रूद्र दत्त एवं के.पी.एम. सुन्दरम्
- भारतीय अर्थनीति – राजकपिला, उमा कपिला सत्याहित्य प्रकाशन
- भारतीय अर्थव्यवस्था– भरत झुनझुनवाला, समीक्षात्मक अध्ययन
- गरीबी और अकाल– अमर्त्य सेन
- आर्थिक विकास और स्वातंत्र्य– अमर्त्य सेन
- विकास का समाज शास्त्र– श्यामाचरण दुबे
- भारतीय अर्थव्यवस्था– डॉ0 अरविन्द पाल सिंह
- आर्थिक विकास के सिद्धान्त– डॉ0 अबध बिहारी मिश्र
- आर्थिक विकास– जी.एस. कुशवाहा
- ग्राम विकास– आर.डी.डी.वोल्यूम 01 इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
- ग्रामीण योजनाऐं एवं पंचायती–राज डॉ0 महीपाल
- बुन्देलखण्ड का इतिहास – (प्रथम भाग) दीवान प्रतिपाल सिंह
- झाँसी गजेटियर
- उत्तर प्रदेश 2004, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ
- भारत 2004, वार्षिक सन्दर्भ ग्रन्थ
- जन–सहभागिता से ग्रामीण विकास – बी.जी. शर्मा
- दिशा–निर्देश पुस्तिका– प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार
- राष्ट्रीय बायोगैस कार्यक्रम की सामान्य जानकारी और उपलब्धियां ग्रामीण विकास विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ
- राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम पत्रक ग्रामीण विकास विभाग उत्तर प्रदेश

☛ ग्रामीण आवास योजनायें – राष्ट्रीय ग्रामीण आवास और पर्यावास मिशन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार

☛ स्वर्ण जंयती ग्राम स्वरोजगार योजना पत्रक ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार।

☛ सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना पुस्तिका ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार

☛ केन्द्रीय स्वच्छता कार्यक्रम पत्रक ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार

☛ पंच पंचायत और पंचायती राज – यशचन्द्र

☛ ''पंच परमेश्वर'' मुंशी प्रेमचन्द्र

☛ भारत में पंचायती राज – डॉ0 एन.के. श्रीवास्तव

☛ ग्राम विकास, आर.डी.डी.वोल्यूम 01 (03) पंचायत राज इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

☛ प्राचीन भारत का इतिहास – ओम प्रकाश

☛ पंचायत और गांव समाज (पुर्नजागरण की राह) – चन्द्रशेखर प्राण

☛ महात्मा गांधी का समाजदर्शन – डॉ0 महादेव प्रसाद

☛ महात्मा गांधी का समाजवाद – डॉ0 पट्टामिसीता रमैया

☛ ''बापू कथा'' भाग 1 : हरिमाऊ उपाध्याय

☛ पंचायती राज – संकल्पना और वर्तमान स्वरूप विजय रंजन दत्त

☛ पंचायती राज व्यवस्था – देवेन्द्र उपाध्याय

☛ पंचायती राज इन इण्डिया – राजेश्वर दयाल

☛ भारतीय राजनीति व्यवस्था – एस. पुरी

☛ विकेन्द्रीकरण – एक नई दिशा – (पंचायती प्रशिक्षण साहित्य) पंचायती राज विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ

☛ पंचायत सशक्तिकरण – मार्गदर्शिका लोक कार्यक्रम और ग्रामीण प्रौद्योगिक विकास परिषद क्षेत्रीय समिति लखनऊ।

☛ विकास का अर्थशास्त्र एवं आयोजन – एम.एल. झिंगन

☛ द कंडीशन ऑफ एकनोमिक्स प्रोग्रेस – कोलिन क्लार्क

- एवोल्यूशन ऑफ पंचायती राज इन इण्डिया 1964, आर.बी.जाथर
- एग्रीकल्चर प्राब्लमस ऑफ इण्डिया – सी0बी0 ममोरिया
- फाउण्डेशन आफ एकनोमिक्स – प्रो.जे.के. मेहता
- जरनल थ्योरी ऑफ एम्पलाएमेन्ट इन्टरेस्ट एण्ड मनी– प्रो.जे.एम. कीन्स
- ग्राम सभा, पारदर्शिता व समाजविकास – डॉ0 महीपाल
- ग्राम पंचायत के कार्य एवं शक्तियां – डॉ0 महीपाल
- भारतीय अर्थव्यवस्था : समस्या एवं प्रतिविधान – जे. के. मेहता
- भारतीय अर्थव्यवस्था : प्रमित चौधरी
- भारत विकास की दिशाऐं : अमर्त्य सेन
- भारतीय राज्यों का विकास – अमर्त्य सेन
- आर्थिक वृद्धि पर छः भाषण – साईमन कुजनेट्स
- भारत की अर्थनीति – सी0 रंगराजन
- भारतीय ग्राम – श्यामाचरण दुबे
- मेरे सपनों का भारत – मोहनदास करम चन्द गांधी
- भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि – ए0 आर0 देसाई
- बुन्देलखण्ड का इतिहास – गोरे लाल तिवारी
- भारत का संविधान – डी0 डी0 बसु
- सामुदायिक समाज, रूप और चिन्तन – जयप्रकाश नारायण

- Charles P. Kindleberger - Economic development 2nd Edition
- W.W. Rstow. "The stages of Econimic growth anon Communist Manifesto" Combridge 1961
- P.N. Rosenstein. "Notes on the theory of the Big push Economic development for Lation America edited by H.S. Eller.
- Stephen Enke - Economics for Development, Denis Dobson Book Ltd. Landon 1964.
- Gennar Myrdal - Asian Drama
- Gennar Myrdal - Under development and Development
- Ragner Narkse - Problems of Capital formation in the under devel opment Countries oxfort Basilw Block wele 1955.
- E.E. Hager - On the theory of social change : How Economic Growth Being.
- A.O. Hirschman "The strotegy of Economic Development" Yale University Press 1960.
- Meir and Baldwin "Economic Development theory History Policy Asia Publishine House 1962.
- A.R. Cairncross - Factors in Economic Development Geogrge Allon and Unwin 1961.
- Arthur lewis - The Theory of Economic Growth Geogrge Allon and unwin 1963.
- Jacob Viner - The Economic of Development.
- A.H. Cole's "A New set of stages in Exploration in Entreprenewial history.
- Z.H. Bready - Comparative Method on Education.
- Good and hatt - Methods in social reserch.
- Thomas Corson Mc. Gromuck. Elementary Social statistis
- Pauline V. Young - Scientific Social surverses and research Prectic hall of India Pvt. Ltd. New Delhi 1973.
- B.N. Gupta - Statistics
- C.N. Vakil - Poverty and planning.

- Engene Stanley - Future of underdeveloped comtries
- S.Kuznetts - Towards theory of Economic Growth
- David Ricardo - Principles of Political Economy
- L.H. Heney - History of Economic Thouglts.
- J.A. Schumpeter. "The Theory of Economic Development
- Ahluwala M.S. 1988. "Rural Poverty and Agricultural Performance in India. Economic and Political weekly Vol-14 P-298-323
- Bandyopadhyay D. 1966, A Study on Povery Alleviation in Rural India Through Special Employment Generation Programmes. Asia Employment Programme, ILOARTEP, New Delhi.
- Chaturvedi, T.N. 1981, Panchayati Raj Selected Articles, Indian Insititute of Public Administration New Delhi.
- Government of India 1989, Panchayati Raj at a Glance. Ministry of Agricultrue, Department of Rural Development New Delhi.
- Emerson Gertude, Voiceless India, Landon 1931.
- Dube S.C. 'A Deccan Village' Economic weekly Val VI No- 19-20 May 8 and 15, 1945.

# पत्र पत्रिकायें एवं रिपोर्ट


- कुरूक्षेत्र
- योजना
- वार्षिक रिपोर्ट 2002–03 ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार
- वार्षिक रिपोर्ट 2003–04 ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार
- आर्थिक समीक्षा 2001–02 वित्त मंत्रालय, भारत सरकार
- आर्थिक समीक्षा 2004–05 वित्त मंत्रालय, भारत सरकार
- सांख्यिकी पत्रिका जनपद झांसी
- प्रथम पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग भारत सरकार
- तृतीय पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग भारत सरकार
- नौवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग भारत सरकार
- यू.एन.ओ. एकानोमिक बुलैटिन फार एशिया एण्ड फार द ईस्ट नवम्बर 1955
- इण्डस्ट्रियल डिस्ट्रीब्यूशन आफ नेशनल प्रोडक्ट एण्ड लेबर फोर्स इकनामिक डेवलपमेन्ट एण्ड कल्चरल चेंज जुलाई 1957 फ्री प्रेस आफ ग्लेनको न्यूयार्क 1959।
- रिपोर्ट सिलेक्ट कमेटी आफ हाउस कामन्स 1982
- रिपोर्ट ऑफ दि रायल कमीशन ऑन डिसेन्ट लाइजेशन इन इण्डिया वोल्यूम
- पंचायती राज इस्ट्रीटयूटन्स एण्ड एनालाइसिस ऑफ अशोक मेहता कमेटी रिपोर्ट – वी0एस0 भार्गव।
- भारत शासन – रिपोर्ट ऑफ दि कांग्रेस विलेज पंचायती कमेटी, हर्षदेव मालवीय
- Report of the fact finding committe (Hand Loom and mills) Govt. of India.
- Bert F. Hoslitz. "Pooblems of adopting communicating Modern techniques to hess Developed oreas" Economic Development and cultrual change jan 1954.
- W. Galenson and H. Leibenstein "Investment Criteria Production and Economic Development. Quarterly Jaurnal of Economic Augest 1955.
- Henry G. Aubry. "Small Industry in Economic Development Social Research september 1951.

# सारणियों का अनुक्रम

# शब्दावली (Glossary)

| | | |
|---|---|---|
| बी.पी.एल. | – | गरीबी रेखा से नीचे |
| पी.पी.पी. | – | क्रय शक्ति समानता |
| जी.एन.पी. | – | सकल राष्ट्रीय उत्पाद |
| जी.डी.पी. | – | सकल घरेलू उत्पाद |
| पी.एम.जी.एस.वाई. | – | प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना |
| एन.आर.आर.डी.ए. | – | राष्ट्रीय ग्रामीण सड़क विकास एजेन्सी |
| पी.एम.जी.आई. | – | प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना |
| ए.ए.वाई. | – | अन्त्योदय अन्न योजना |
| बेम्बे | – | बाल्मिकी अम्बेडकर आवास योजना |
| एस.जे.एस.आर.वाई. | – | स्वर्णजयन्ती शहरी रोजगार योजना |
| आई.डब्ल्यू.डी.पी. | – | समेकित बंजर भूमि विकास कार्यक्रम |
| ई.ए.एस. | – | सुनिश्चित रोजगार योजना |
| डी.पी.ए.पी. | – | सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम |
| डी.डी.पी. | – | मरूभूमि विकास कार्यक्रम |
| टी.डी.ई.पी. | – | प्रौद्योगिकी विकास विस्तार तथा प्रशिक्षण योजना |
| आई.पी.एस. | – | निवेश संवर्धन योजना |
| एन.आर.एस.ए. | – | राष्ट्रीय दूर संवेदी एजेंसी |
| डी.एफ.आई.डी. | – | अन्तर्राष्ट्रीय विकास विभाग (डिपार्टमेन्ट ऑफ इन्टरनेशनल डिवेलवमेंट) |
| ए.पी.आर.एल.पी. | – | आन्ध्र प्रदेश ग्रामीण जीविका परियोजना |
| डब्ल्यू.ओ.आर.एल.पी. | – | पश्चिमी उड़ीसा ग्रामीण जीविका परियोजना |
| एम.पी.आर.एल.पी. | – | मध्य प्रदेश ग्रामीण जीविका परियोजना |
| पी.आई.ए. | – | परियोजना कार्यान्वयन अभिकरण |
| पी.आर.एस.सी. | – | केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम |
| एन.जी.ओ. | – | गैर – सरकारी संगठन |
| टी.एस.सी. | – | स्वर्ण जंयती ग्राम स्वरोजगार योजना |
| डी.आर.डी.ए. | – | जिला ग्रामीण विकास अभिकरण |
| एस.जी.आर.वाई. | – | सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना |
| कपार्ट | – | लोक कार्यक्रम एवं ग्रामीण प्रौद्योगिकी परिषद् |

| | | |
|---|---|---|
| हडको | – | आवास एवं शहरी विकास निगम |
| आई.ए.वाई. | – | इन्दिरा आवास योजना |
| आई.आर.डी.पी. | – | समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम |
| नाबार्ड | – | राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक |
| एन.आई.ई.पी. | – | राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम |
| एन.एस.ए.पी. | – | राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम |
| एन.ओ.ए.पी.एस. | – | राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना |
| एन.एफ.बी.एस. | – | राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना |
| एन.डब्ल्यू.डी.बी. | – | राष्ट्रीय बंजरभूमि विकास बोर्ड |
| ओ.बी. | – | लाभार्थी संगठन |
| पी.ई.ओ. | – | कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन |
| पी.आर. | – | पंचायती राज |
| आर.जी.एन.डी.डब्ल्यू.एम. | – | राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन |
| एस.आई.टी.आर.ए. | – | ग्रामीण कारीगरों को उन्नत औजार किटों की आपूर्ति |
| वी.ओ. | – | स्वैच्छिक संगठन |
| डब्ल्यू. पी. | – | वाटरशेड परियोजनाएें |

# परिभाषित शब्द

| | |
|---|---|
| .अधिकारिता (Entitlement) : | अपने पास उपलब्ध आय–सम्पत्ति आदि के आधार पर हम जो कुछ प्राप्त कर सकते हैं, उसे अधिकारिता कहा गया है। |
| अभाव, वंचना (Deprivation) : | सामान्यतः आवश्यक समझी जाने वाली चीजों से वंचित रह जाना। |
| चयन विफलताऐं (Choice Failures): | व्यक्ति का उचित चयन कर पाने में विफल होना |
| सदिश (Vector) : | यह गणित से ली गई संकलपना है इसमें प्रत्येक सदस्य से जुड़ी किसी एक आयाम सम्बन्धी जानकारी रहती है। |
| भुखमरी समुच्चय (Starvation Set): | उन वस्तु–संयोजनों का समुच्चय जिनमें किसी भी संयोजन में आवश्यक मात्रा में आहार सामग्री शामिल न हो। |
| विनिमय अधिकारिता (Exchange/Trade Entitlement) : | अपनी सम्पत्ति श्रम बेचकर व्यक्ति जो कुछ खरीदने का अधिकारी हो सकता है, उसे उसकी विनिमय अथवा व्यापार अधिकारिता कहते हैं। |